सी.ओ.ए.-1

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

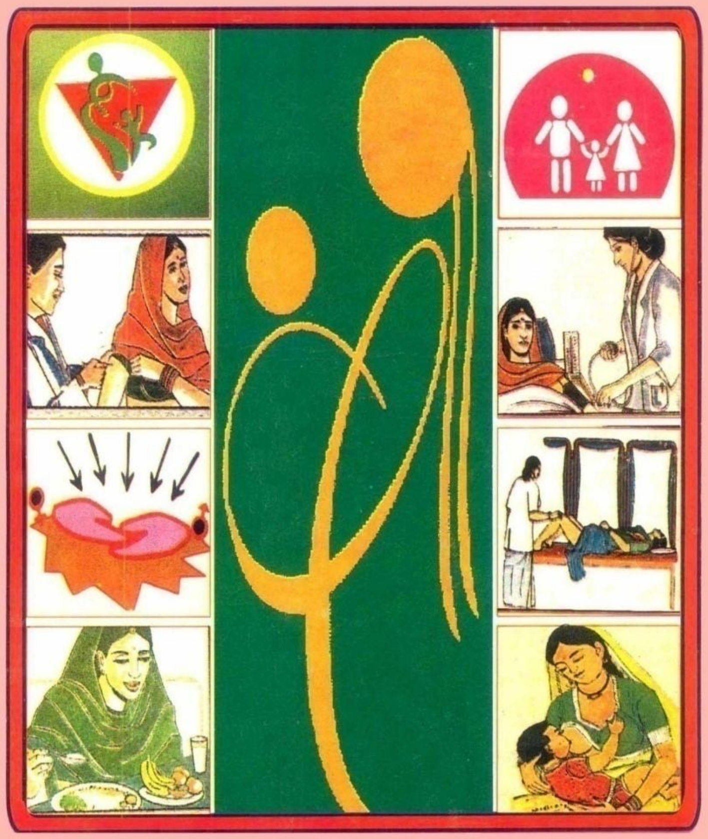

शरीर रचना एवं शरीर क्रिया विज्ञान

COA-1

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

शरीर रचना एवं शरीर क्रिया विज्ञान

	ब्लॉक-I	
इकाई- 1	शरीर : एक सामान्य परिचय	5–34
इकाई- 2	शारीरिक तन्त्र	35–53
इकाई- 3	पाचन एवं उत्सर्जन	54–67
	ब्लॉक-II	
इकाई- 4	स्नायु, ज्ञानेन्द्रियां एवं ग्रन्थियां	71–87
इकाई- 5	पोषण	88–109
इकाई- 6	प्रजनन एवं भ्रूण विज्ञान	110–119

पाठ्यक्रम निर्माण समिति

1. डॉ. आर.वी. व्यास कुलपति	**2. श्री राकेश वर्मा** निदेशक विज्ञान एवं तकनीकी विद्यापीठ- पाठ्यक्रम संयोजक	
3. श्री केशव स्वर्णकार प्रधानाचार्य/ नर्सिंग ट्यूटर स्कूल ऑफ नर्सिंग एम.बी.एस. चिकित्सालय परिसर, कोटा	**4. श्रीमती सोनाक्षी सोनी** व्याख्याता कॉलेज ऑफ नर्सिंग जयपुर	**5. डॉ. वीना एलहैन्स** चिकि. अधि./प्रसूति एवं स्त्री रोग विशेषज्ञ जे. के. लोन चिकित्सालय मेडिकल कॉलेज, कोटा

पाठ्यक्रम निर्माण **संपादक : केशव स्वर्णकार**

लेखक	पाठ्यक्रम एवं इकाई	लेखक	पाठ्यक्रम एवं इकाई
• **डॉ. विनया पैन्डसे** M.S.(O&G), FICOG पूर्वआचार्य एवं विभागाध्यक्ष (प्रसूति एवं स्त्री रोग विभाग) आर.एन.टी. मेडिकल कॉलेज एवं पूर्व अधीक्षक जनाना हॉस्पिटल, उदयपुर	COA III-1	• **श्रीमती सुरजीत कौर** उपनिदेशक (नर्सिंग) चिकित्सा एवं स्वा. निदेशालय एवं रजिस्ट्रार, राजस्थान नर्सिंग काउंसिल, जयपुर	COA II-1
• **श्रीमती रेखा गुप्ता** M.Sc., M.Phil	COA I-1,2	• **श्री केशव स्वर्णकार** RN. DNEA. M.A.,B.J.M.C.	COAII-2,3 COAIII-5,6
• **डॉ. अविनाश बंसल** M.D.(Paed.) वरिष्ठ शिशु एवं बाल विशेषज्ञ भा. वि. प. चिकित्सालय, कोटा	COA IV-6	• **डॉ. श्रीमती मीनाक्षी सोनी** M.A. M.Sc(N) व्याख्याता कॉलेज ऑफ नर्सिंग, जयपुर	COA I-3,4,5,6 COA I-(Case Book)
• **डॉ. शोभा शर्मा** M.S.(O&G), (प्रसूति एवं स्त्री रोग विशेषज्ञ) ई.एस.आई. चिकित्सालय, कोटा	COA II-6 COA III-2 COA IV-1,4	• **श्री अरविन्द चौरीसा** M.A. B.Sc(N) प्रधानाचार्य /नर्सिंग ट्यूटर स्कूल ऑफ नर्सिंग, बांसवाड़ा	COA II-4,5
• **डॉ. वीना एलहैन्स** M.S.(O & G) प्रसूति एवं स्त्री रोग विशेषज्ञ जे. के. लॉन हॉस्पिटल मेडिकल कॉलेज, कोटा	COA IV-2,3,5	• **श्री प्रकाश व्यास** M.A. B.Sc(N) प्रधानाचार्य /नर्सिंग ट्यूटर स्कूल ऑफ नर्सिंग, जोधपुर	COA III-3,4

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

- **डॉ. आर.वी. व्यास,** कुलपति
- **डॉ. पी. के. शर्मा,** निदेशक, पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग
- **राकेश शर्मा,** विभागाध्यक्ष

पाठ्य सामग्री उत्पादन

- **योगेन्द्र गोयल,** सहायक उत्पादन अधिकारी

© वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

- सर्वाधिकार सुरक्षित : इस पाठ्यक्रम पुस्तिका का कोई भी अंश किसी भी रूप मे वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा की बिना अनुमति के उदधृत करना वर्जित है।
- यद्यपि पाठ्यक्रम के निर्माण मे लेखकीय उत्तरदायित्व है तथा अध्ययन सामग्री मे नवीनतम तथ्य दिये जाने का प्रयास किया गया है। किन्तु चिकित्सा विज्ञान मे नित-नवीन परिवर्तन एवं तथ्य जुडते रहते हैं। अतः इस विषय मे किसी भी त्रुटि हेतु लेखक, सम्पादक अथवा प्रकाशक उत्तरदायी नहीं है। इसलिए औषध सेवन चिकित्सक की देखरेख मे ही उपयुक्त रहेगा।

  वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा के निर्देशानुसार मुद्रित एवं प्रकाशित

इकाई- 1 शरीर एक सामान्य परिचय :

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तवाना
1.2 उद्देश्य
1.3 कोशिका
 1.3.1 कोशिका की रचना
1.4 ऊतक
 1.4.1 ऊतकों का वर्गीकरण
1.5 शरीर के अंग
 1.5.1 शरीर के तंत्र
1.6 त्वचा
 1.6.1 त्वचा के रचना
 1.6.2 त्वचा के कार्य
1.7 कंकाल तंत्र
 1.7.1 कंकाल के प्रकार
 1.7.2 अस्थियाँ
1.8 पेशीय तंत्र : परिचय
 1.8.1 पेशियों की विशेषताएँ
 1.8.2 मुख्य पेशियाँ
1.9 जोड़ या सन्धियाँ
 1.9.1 जोड़ों की प्रकार
 1.9.2 शरीर के मुख्य जोड़
1.10 सारांश
1.11 प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

सभी जीवों के शरीर का बना है जीव एक कोशिकीय व बहुकोशिकीय होते है बहुकोशिकीय जीवों मे कोशिकाओं से शरीर बनाते है, तथा ऊतक का समूह मिलकर अंग व अंग मिलकर अंग तंत्र बनाते है। जो शरीर के विभिन्न कार्यो को करने मै सक्षम होते है अध्यावरणी तंत्र जिसमे त्वचा आती है शरीर का महत्वपूर्ण तंत्र है जो शरीर की रक्षा करने मै महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है हमारे शरीर मै कंकाल तंत्र शरीर को साधे रखता है तथा एक निश्चित आकृति बनाये रखता है कंकाल मै उपस्थित विभिन्न प्रकार के जोड़ शरीर को गति प्रदान करने मै सहायक प्रदान करते हैं शरीर मै उपस्थित पेशियाँ तंत्रिका तंत्र के नियंत्रण मै शरीर की विभिन्न कार्य करती है यह अस्थिया सी जुड़ी रहती है। इसी प्रकार शरीर की विभिन्न अंग तंत्र शरीर के शरीर के विभिन्न कार्य कर शरीर को सुचारु रूप से चलाने मै सहायक कर सकते है।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद प्रसूति विज्ञान सहायिकाएं :

1. कोशिका के बारे मे जानकारी प्राप्त कर सकेगी ।
2. ऊतक, अग, अग-तंत्र की सरचना व इनके कार्यों के बारे मे जानकारी प्राप्त कर सकेगी।
3. त्वचा की सरचना व कार्यो के बारे मे जान सकेगी।
4. कंकाल तंत्र तथा अस्थियों के बारे मे जान सकेगी।
5. विभिन्न प्रकार के जोड, उनके कार्यो के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगी।
6. पेशीय तंत्र मे पेशियो का परिचय, उनकी विशेषताओं व प्रसव में पेशियों की क्रिया विधि के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगी।

1.3 कोशिका (Cell)

कोशिका जीवित पदार्थ की इकाई और जीवों के निर्माण का मूलभूत आधार है। सभी कोशिकाएँ उनकी अलग-अलग उत्पत्ति के बावजूद बहुत समान होती है। यह जीवों की सरंचनात्मक व क्रियात्मक इकाई है।

1.3.1 कोशिका की रचना

सभी कोशिकाएँ एक पदार्थ की बनी होती हैं। जिसे प्रोटोप्लाज्म कहते हैं। प्रोटोप्लाज्म जेली के समान गाढा अपारदर्शक एवं रंगहीन होता 'है, तथा इसमें अनेक पदार्थ पत्नी मे घुले हुए मौजूद होते हैं।

(i) कार्बनिक एवं अकार्बनिक लवण

(ii) ग्लूकोज एवं

(iii) नाइट्रोजन युक्त पदार्थ

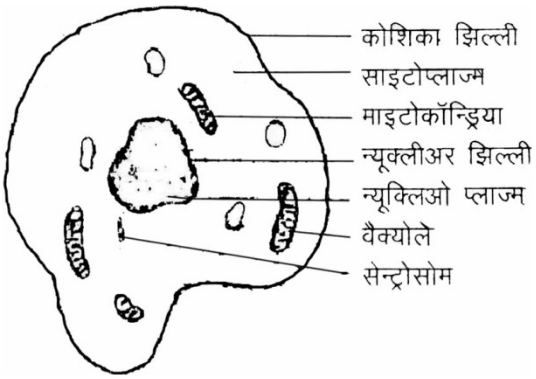

चित्र - कोशिका का रेखाचित्र

- **साइटोप्लाज्म** : शब्द समान्यतया प्रोटोप्लाज्म के लिये प्रयोग किया जता है जो कोशिका का मुख्य भाग है । "साइटो" उपसर्ग का अर्थ कोशिका है । यह ग्रीक शब्द है । साइटोप्लाज्म निरन्तर नष्ट होता है , विखण्डित होता है तथा ताजा प्रोटोप्लाज्म उसका स्थान लेता है प्रोटोप्लाज्म कोशिका द्वारा लिये गये आहार से बनाता है। साइटोप्लाज्म में प्रोटीन्स के अणु

रहते है जिन्हे राइबो- न्यूक्लिअक एसीड्स (RNA) कहते है जो संदेशवाहक का कार्य करते है, अर्थात् न्यूक्लिअस से साइटोप्लाज्म तक संदेश ले जाते है ।

- **कोशिका झिल्ली (Cell Membrane)** : साइटोप्लाज्म को घेरे रहती है तथा यह अर्द्ध - पारगम्य होती है। इस झिल्ली में छोटे-छोटे "छिद्र" होते है, और दाब से प्रभावित होतीय है । अतः कोशिका की आकृति बादल सकती है ।
- **न्यूक्लिअस** : कोशिका में स्थित घना भाग है जो न्यूक्लिअर झिल्ली के अंदर रहता है । न्यूक्लिअर झिल्ली के अन्दर के प्रोटोप्लाज्म को न्यूक्लिओप्लाज्म कहते है । न्यूक्लिअस का विशिष्ट यौगिक डिओक्सिराइबो न्यूक्लिअक एसिड्स (DNA) है जिनमे कोशिका के जीवन के लिए आवश्यक आनुवांशिक सूचनाएँ होती है । न्यूक्लिओप्लाज्म कोशिका की वृद्धि और कोशिका को दो सन्तति (Daughter Cell) कोशिकाओं में विभाजित होने के लिये आवश्यक सूचनाएँ जमा रखता है । यह सूचनाएँ जिनस् में होती है । जो आपस में मिलकर क्रोमोसोम बनती है समान्यतया क्रोमोसोम सिर्फ माइक्रोस्कोप द्वारा ही दिखाई देते है, वे भी उस समय जब कोशिका विभाजित होने के लिए तैयारी रहती है । जीनस (DNA) के बने होते है ।
- **माइटोक्रोन्ड्रीया** : कोशिका की ऊर्जा संस्थान (पावर स्टेशन) है । ये कोशिका द्वारा लिए हुए आहार को ऊर्जा में बदलने के लिए जिम्मेदार रहते है ।
- **वैक्योल्स** : साइटोप्लाज्म में रिक्त दिखाई देने वाले स्थान है । इनमें साइटोप्लाज्म द्वारा निर्मित व्यर्थ पदार्थ, या स्त्रावण रहते है ।
- **सेण्ट्रोसोम :** न्यूक्लिअस के नजदीक छोटी छड़ की आकृति की रचना है जो कोशिका के विभाजन में महत्वपूर्ण है । यह धागों के समान, चारों और निकली हुई रचना से घिरी रहती है तथ इसमे दो सेंट्रिओल्स रहते है ।

1.4 ऊतक

ऊतक कोशिकाओं ओर कोशिका से बने उन पदार्थो का बना होता है जो विशेष कार्य करने के लिए विकसित होते। शरीर मे चार मुख्य प्रकार के ऊतक होते है

1. एपिथीलिअल ऊतक या एपिथीलियम
2. संयोजी ऊतक
3. पेशीय ऊतक
4. स्नायविक ऊतक

1.4.1 ऊतकों का वर्गीकरण

- एपिथीलिअल ऊतक
  - ढँकने और अस्तर बनाने वाले
    - साधारण
      - पेवमेन्ट
      - क्यूबॉइडल
      - कॉलम्नर
    - स्ट्रेटिफाइड
    - ट्रान्जिशनल
  - ग्रन्थियाँ
    - बाह्यस्रावी
      - साधारण
        - नली-आकार
        - कुण्डली-आकार
        - थैलीनुमा
      - मिश्रित
        - नली-आकार
        - थैलीनुमा
    - अंत:स्रावी
- संयोजी ऊतक
  - विरल संयोजी ऊतक (एरिओलर)
  - वसीय (एडिपोज़)
  - घना संयोजी ऊतक (फाइब्रॅस)
  - कार्टिलेज (उपास्थि)
    - हाएलिन
    - फाइब्रो-कार्टिलेज
    - इलास्टिक कार्टिलेज
  - अस्थि
- पेशीय ऊतक
  - ऐच्छिक (स्ट्राइप्ड)
  - अनैच्छिक (प्लेन)
  - हृदीय (स्ट्रिएटेड, अनैच्छिक)
- स्नायुविक ऊतक

(i) एपिथीलिअल ऊतक (Epithelial Tissues)

एपिथीलिअल ऊतक शरीर की बाहरी और अंदुरुनी मुक्त सतहों को ढकने के लिए अस्तर की झिल्लियाँ बनाता है और इसी ऊतक से शरीर की ग्रंथियाँ विकसित होती है । एपिथिलीआ शरीर के अन्दरुनी ऊतकों की टूट-फुट से सुरक्षा करता है अस्तर मोटाई में सिर्फ एक कोशिका के होते है और प्रायः इन पर एक विशिष्ट सतह होती है जिसे "ब्रश बॉर्डर" कहते है । कोशिकाएँ "आधारीय झिल्ली" पर स्थित होती है जो इनको आपस में जोड़ने का कम करती है।

- **ढँकने और अस्तर बनाने वाले एपिथीलिआ (Covering and lining epithelia)**

ढँकने वाले एपिथीलिआ को कोशिकाओं की जमावट एवं आकृति के अनुसार वर्गीकृत किया जा सकत है । साधारण एपिथिलिअम कोशिकाओं की एक तह की बनी होती है । ये कोशिकाएँ आधारीय झिल्ली पर स्थित रहती है । यह एपिथिलिअम बहुत नाजुक होती है तथा ऐसे स्तनों पर पायी जाती है जहाँ बहुत कम टूटफुट होती है ।

1. **साधारण पेवमेंट एपिथिलिअम** चपटी कोशिकाओं की बनी होती है और एक चिकना अस्तर बनती है । यह रक्त वाहिकाओं के अस्तर बनाती है और पेरितोनिअम भी बनाती है ।
2. **साधारण क्यूबोइडल एपिथिलिअम (Simple cuboidal epithelium)** में घन के समान कोशिकाएँ रहती है और यह डिम्ब - ग्रन्थि की सतह में पायी जाती है ।
3. **साधारण कॉलमनर एपिथीलिअम (सिम्पल Columnar epithelium)** लम्बी कोशिकाओं की बनही होती है जो आधारीय झिल्ली पर जमी रहती है । यह ऐसे स्थानों पर पायी जाती है जहाँ टूट-फुट कुछ अधिक होती है, जैसे आमाशय एवं आंतों के अस्तर इत्यादि । कार्यानुरूप परिवर्तन भी इसमें हो सकते है ।

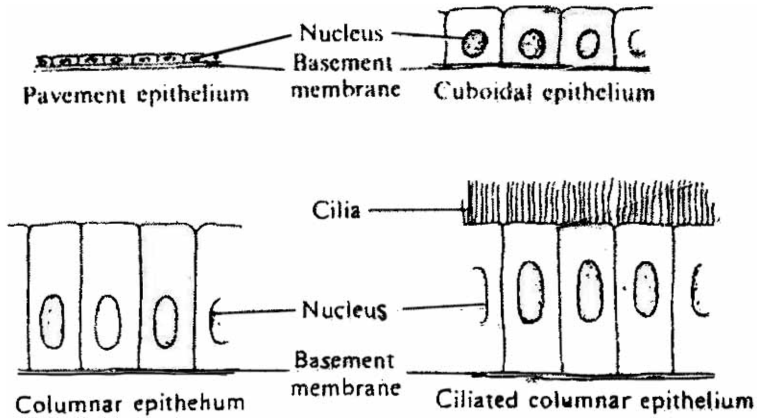

चित्र - साधारण एपिथिलिअम के प्रकारों की दर्शाने वाले रेखाचित्र

- **स्ट्रेटिफाइड एपिथिलिअम (Stratified epithelium) :** कोशिकाओं की कई तहों की बनी होती है । सबसे नीचे वाली कोशिकाओं को जर्मिनल परत कहते हैं, जो आधारीय झिल्ली पर स्थित रहती है और कॉलमनर होती है । जैसे ही ये विभाजित होती है (और ऐसा बहुधा होता है), पैतृक कोशिकाएँ सतह के नजदीक ढकेली जाती है और चपटी हो जाती है सतह की कोशिकाएँ घिसती रहती है और इनका स्थान नीचे की दूसरी कोशिकाएँ लेती रहती है ।

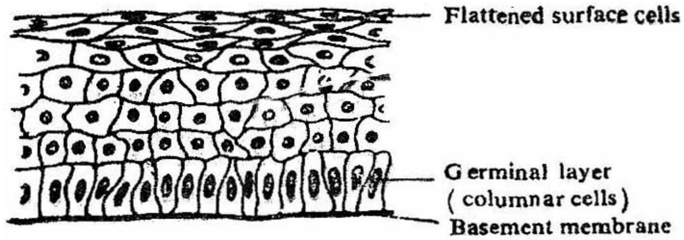

चित्र - स्ट्रेटिफाइड एपिथिलिअम को दर्शाता हुआ रेखाचित्र

- **ट्रांजिशलन एपिथिलिअम (Transitional epithielium)** स्ट्रेटिफाइड एपिथिलिअम के समान होती है लेकिन सतह की कोशिकाएँ चपटी के बजाए गोल होती है और अंग फैलता है तब ये फैल सकती है । यह ऐसे अंगों में पायी जाती है जो फैलते हैं और उनका जलरोधक होना जरूरी है, उदहरणार्थ, मूत्राशय।
- **ग्रन्थियाँ (Glands)**

  ग्रन्थियाँ एपिथीलिअल उत्तकों से विकसित होती है और रक्त द्वारा लाये गये पदार्थों का निर्माण कर सकती है । इन विशिष्ट पदार्थों को ग्रन्थियों के स्त्रावन (Secretions) कहते है । उदाहरण के लिए रक्त में सोडियम क्लोराइड रहता है और आमाशयिक ग्रन्थियाँ इससे हाइड्रोलोरिक अमल बना सकती है जो कि आमाशयिक रस में पाया जाता है । ग्रन्थियाँ दो प्रकार कि होती है : बहयास्त्रवी एवं अन्तःस्त्रावी ।

1. **बाहयस्त्रावी ग्रन्थियाँ (Exocrine glannds) :** अपने स्त्रावण को वाहिका द्वारा पहुँचाती है । इनमें से कई ग्रन्थियों के स्त्रावण में एंजाइम रहते है, जो ग्रन्थि की कोशिकाओं द्वारा

निर्मित रासायनिक पदार्थ है । जब ये एंजाइम्स विशिष्ट पदार्थों के सम्पर्क में आते है तब उनमें रासायनिक परिवर्तन पैदा करते है, लेकिन ये प्रतिक्रिया में भाग नहीं लेते है ।

(अ) साधारण ग्रंथियों में एक वाहिका रहती है जो एक स्त्रावी इकाई से निकली रहती है । साधारण नलीय ग्रन्थियाँ छोटी आंत कि दीवारों और आमाशय में पायी जाती है । साधारण कुंडलाकार ग्रन्थियाँ त्वचा कि सतह पर पसीना पहुँचाती है । साधारण थैलीनुमा ग्रन्थियाँ, इन्हे सिबेशियस ग्रन्थियाँ (तैल-ग्रन्थियाँ) भी कहते है, ये एक प्रकार का पदार्थ स्ट्रावित करती है जिसे सिबम कहते है जो बालों व त्वचा को चिकना रखता है ।

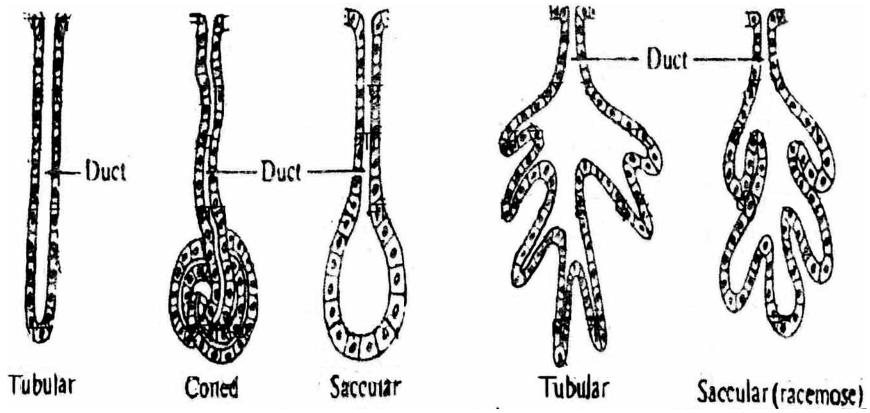

चित्र : - बाहयस्त्रावी ग्रन्थियों के प्रकार

(ब) मिश्रित ग्रन्थियों (Compound glands) में कई स्त्रावी इकाइयाँ रहती है जो अपना स्त्रावण कई छोटी-छोटी वाहिकाओं में पहुंचाती है । ये छोटी वाहिकाएँ मिलकर एक बड़ी वाहिका बनाती है ।

(स) मिश्रित नलीय ग्रन्थियाँ (Endocrine glands) : ड्यूडीनम में पयाई जाती है । मिश्रित थैलीनुमा ग्रन्थियाँ इन्हे रेसिमोद ग्रन्थियाँ भी कहते है और इसके उदाहरण है - मुँह में लार ग्रन्थियाँ ।

2. **अन्तःस्त्रावी ग्रन्थियाँ (Endocrine glands) :** ये अपने आन्तरिक स्त्रावण सीधे रक्त प्रवाह में पहुँचती हैं। इन स्त्रावनों को हार्मोन्स कहते हैं । अन्तःस्त्रावी ग्रन्थियाँ के उदाहरण है :- खोपड़ी में स्थित पिट्यूटरी ग्रन्थि और गर्दन में स्थित थाइराइड ग्रन्थि ।

(ii) संयोजी उत्तक (Connective Tissue)

संयोजी ऊतक वह ऊतक है जो अन्य सभी ऊतकों को सहारा देता है और एक साथ जोड़ता है । वास्तव में ये सभी प्रीमिटिव कोशिकाओं से उत्पन्न होती है । जिन्हे मिजेनकाइम कोशिकाएँ कहते है । संयोजी ऊतक कोशिकाओं का, अंतर्कोशिकीय पदार्थ मेट्रिक्स और तन्तु, कोशिकाओं द्वारा निर्मित अजीवित पदार्थ है जो शरीर को आधार देने वाले पदार्थ बनाते है । ये तन्तु दो मुख्य प्रकार के होते है, कोलजीनस एवं लचीले । कॉलजिनस तन्तु (Collagenous fibres) फाइबरोब्लास्टस नामक कोशिकाओं से उत्पन्न होते है । ये एक प्रकार का पदार्थ स्त्रावित करते है । जो बाद में कोलजेन बन जाता है । ये मोटे तन्तु समूहों में और लहरदार आकृति में होते है और बिना फटे थोड़े से ही तन सकते है । लचीले तन्तु (Elastic fibres) पतले शाखायुक्त तन्तु है जो अत्यधिक लचीले होते है ।

संयोजी ऊतक के पाँच मुख्य प्रकार है -

(अ) विरल संयोजी ऊतक (Loose Connective tissue)

इस प्रकार के ऊतक कॉ एरिओलर ऊतक भी कहते है । यह ऊतक कॉलजिनस एवं लचीले तन्तुओं के विरल जल के अलावा वसीय कोशिकाओं के बिखरे हुए समूहों और कुछ फबरोब्लास्ट्स का बना होता है । एरिओलर ऊतक टिशू पेपर के समान पतली पारदर्शक झिल्ली बनाते है, लेकिन यह बहुत मजबूत होती है और शरीर के अंगों के बीच तथा आसपास पायी जाती है ।

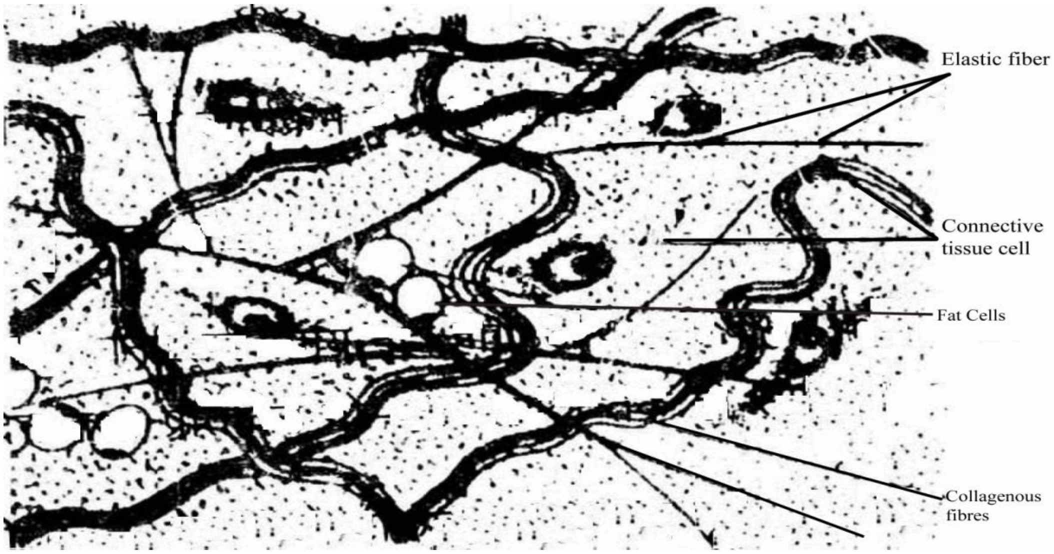

चित्र - विरल संयोजी ऊतक

(ब) वसीय ऊतक (Fatty tissue)

इसे एडिपोज ऊतक भी कहते है । यह एरिओलर ऊतक एक समान होता है लेकिन तन्तु जल के बीच के स्थान वसीय कोशिकाओं द्वारा भरे रहते है । एडिपोज ऊतक बहुत उपयोगी होता है क्योंकि इसमें आहार जमा रहता है जिसे शरीर आवश्यकता के वक्त प्राप्त कर सकता है । यह ऊतक शरीर कि ऊष्मा को रोके रखें में सहायता करता है क्योंकि यह ऊष्मा का अच्छा संचालक नहीं है । यह नाजुक अंगों कि जैसे आँख एवं गुर्दे कि रक्षा करता है ।

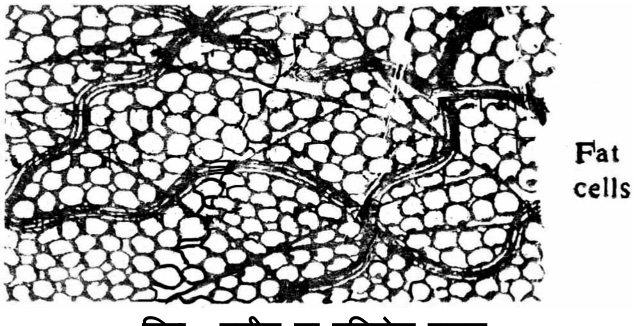

चित्र - वसीय या एडिपोज ऊतक

(स) घना संयोजी ऊतक (Dense connective tissue)

इस ऊतक को तंतुमय ऊतक भी कहते है और यह मुख्य रूप से कॉलजिनस तन्तुओं के समूहों का बन होता है जिनके बीच फाइब्रोब्लास्ट्स होते है । विरल संयोजी ऊतक कि अपेक्षा यह बहुत मजबूत होता है । इसके तन्तु समानान्तर समूहों में जमे हुए हो सकते है ।

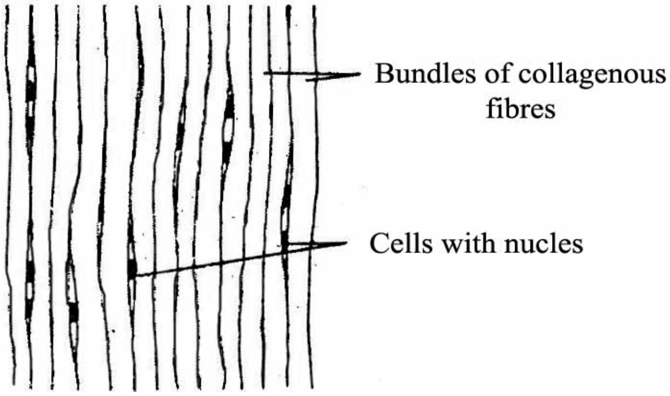

चित्र - घने संयोजी (तन्तुमय) ऊतक का रेखाचित्र

(द) उपास्थि (Cartilage)

उपास्थि या कार्टिलेज कॉन्ड्रोसाइट्स (Condracytes) नामक कोशिकाओं की बनी होती है। ये कोशिकाएँ तन्तुओं के द्वारा पृथक रहती है । उपास्थि में रक्त वाहिकाएँ नहीं होती है । उपास्थि बहुत मजबूत रहती है लेकिन साथ ही बहुत लचीली भी । उपास्थि तीन प्रकार की होती है -

- **हाएलिन उपास्थि (Hyaline Cartilage)** कॉन्ड्रोसाइट्स कि बनी होती है, जो रचनारहित दिखाई देने वाले मेट्रिक्स में स्थित होते है । यह देखने में काँच जैसी होती है और इसमे बहुत ही पतले कॉलजेन तन्तु फैले रहते है । यह श्वास नाल में पायी जाती है ।
- **तन्तुमय उपास्थि (Fibro - Cartilage)** में हाइलीन उपास्थि कि अपेक्षा कॉलजेन तन्तु आशिक रहते है, इसलिए यह उससे अधिक मजबूत रहती है । यह वार्तिब्री के बीच पाई जाती है।
- **लचीली उपास्थि (Elastic Cartilage)** में कई लचीले तन्तु रहते है जो मेट्रिक्स में स्थित होते है । यह उपास्थि कल के ओरिकल और एपिग्लोटिस में पाई जाती है ।

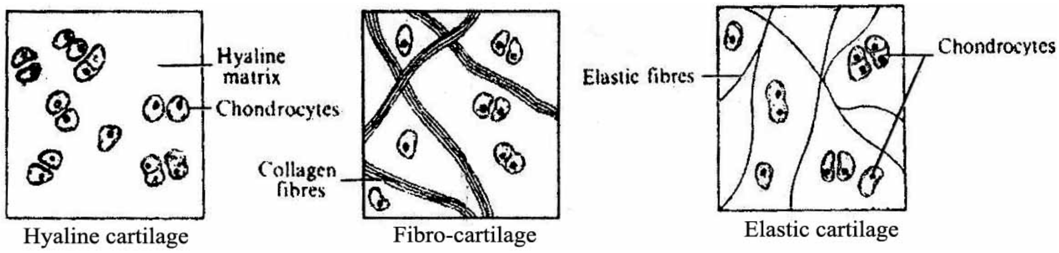

चित्र : - उपास्थि के प्रकार ।

(य) अस्थि (Bone)

अस्थि उपास्थि का वह विशिष्ट प्रकार है जिसमे कॉलजेन खनिज लवणों, मुख्यतः कैल्सियम से, व्याप्त रहता है । कॉलजेन तन्तु अस्थि को मजबूत बनाते है और खनिज

लवण इसको सख्त बनाते है । रक्त-उत्पादक ऊतक रक्त कोशिकाओं के निर्माण से संबन्धित होता है ।

(iii) पेशीय ऊतक (Muscular Tissue)

पेशीय ऊतक संकुचन के लिये होता है, और इसलिये यह गति पैदा करता है । शरीर में जहाँ कहीं हलचल होती है वहाँ पेशीय ऊतक का होना जरूरी है । पेशीय कोशिकाओं को उनकी आकृति के करण बहुधा पेशीय तन्तु कहते है ।

पेशीय ऊतक तीन प्रकार के होते है, ऐच्छिक, अनैच्छिक, हृदीय

(अ) ऐच्छिक या स्ट्राइपड पेशी (Voluntary or striped muscle)

ऐच्छिक पेशियाँ हाथ-पैर और धड़ को मौसल बनाती है । इनके द्वारा अस्थिकंकाल में गतिविधियाँ होती है । यह पेशी लम्बी कोशिकाओं कि बनी होती है । इन पट्टियों का क्रम गहरी के बाद हलकी और हलकी के बाद गहरी इस प्रकार होता है । स्ट्राइपड पेशी इच्छा के नियंत्रण में रहती है, इसलिए इसे ऐच्छिक पेशी कहते है ।

(ब) अनैच्छिक या अनस्ट्रापड पेशी (Involuntary or Unstriped muscle)

अनैच्छिक पेशी आन्तरिक अंगों कि दीवारों को बनाती है, जैसे आमाशय, आंते, मूत्राशय, गर्भाशय एवं आरकेटी वाहिकाएँ । कोशिकाओं में न तो कोई धारियाँ (स्ट्राइप्ड) किखती है और न ही बाहरी आवरण (Sheath) होता है । ये इच्छा के नियंत्रण में नहीं रहती है । ये स्वतः संकुचित होती है ।

(स) हृदय पेशी (Cardiac muscle)

हृदय पेशी अनैच्छिक एवं अनियमित रूप से स्ट्राइप्ड रहती है । यह सिर्फ हृदय कि दीवारों में पाई जाती है । हृदीय पेशी इच्छा के नियंत्रण में नहीं रहती है, परंतु सम्पूर्ण जीवन के दौरान एक लय से नियमित रूप से स्वतः संकुचित होती रहती है ।

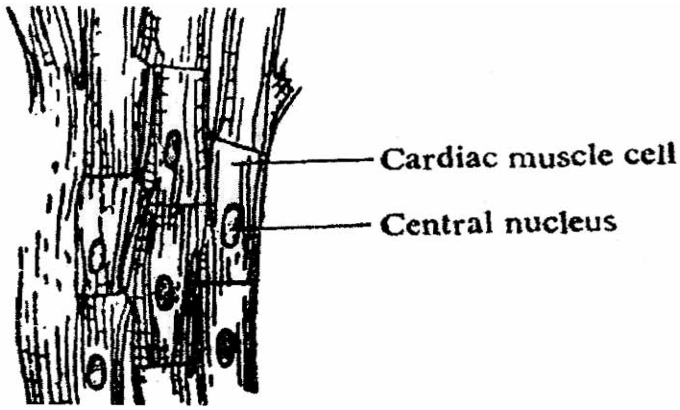

चित्र : हृदीय पेशी के काट का रेखाचित्र

(iv) स्नायुविक ऊतक (Nervous Tissue)

स्नायुविक ऊतक विशेष रूप से शरीर के बाहर और अन्दर से संवेदनों को ग्रहण करने के लिये बना है, उत्तेजित होने पर यह ऊतक अन्य ऊतकों तक आवेगों को शीघ्रता से ले जाता है । स्नायु कोशिका का एक भाग है बड़ा कोशिका शरीर (Cell body), जिसमें से कई छोटे-छोटे उभार निकले रहते है और जो अन्य कोशिकाओं और ऊतकों कसे आवेग लाते है ।

कोशिका के शरीर से एक लम्बी रचना निकली रहती है जो एक्सोन कहलाती है । यह कोशिका शरीर से आवेग ले जाती है ।

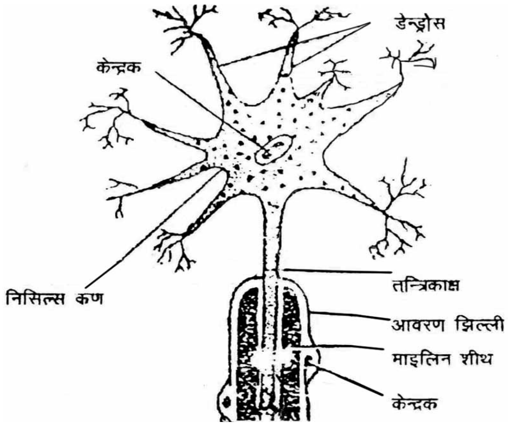

चित्र - न्यूरोन का रेखाचित्र

1.5 शरीर के अंग

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि मानव शरीर अत्यधिक रूप से विकसित बहुकोशिकीय जीव का एक उदाहरण है । यह करोड़ों कोशिकाओं का बना होता है जो विशिष्ट रूप से विकसित होकर ऊतक बनाती है, पूर्ण शरीर के लिये प्रत्येक ऊतक को अपना विशिष्ट कार्य करना होता है । ये ऊतक एक साथ समूहित होकर अंग बनाते है । अंग (Organ) कुछ निश्चित रूप एवं प्रकार में जमे हुए ऊतकों का समुहा है जो विशिष्ट कार्य करता है उदाहरणार्थ आमाशय, हृदय, गुर्दे, प्लीहा आदि। विभिन्न अंग एक साथ समूहित होकर तंत्र बनाते है । तंत्र (System) अंगों का एक समूह है जो शरीर का एक मुख्य कार्य करता है । उदहरणार्थ : पाचन तंत्र भोज्य-पदार्थ को साधारण अवशेशनीय पदार्थ में परवर्तित कर देता है ।

1.5.1 शरीर के तंत्र

निम्नलिखित तंत्र का एक साथ मिलकर मानव शरीर की रचना करते है ।

- **अस्थि तंत्र (The Skleletal system) :** कोमल ऊतकों को सहारा एवं सुरक्षा प्रदान करने के लिए एक ढाँचा बनाता है और जोड़ों पर हलचल होने देता है ।
- **पेशीय तंत्र (The Muscular system) :** सम्पूर्ण शरीर कि हलचल से संबन्धित रहता है । अस्थि एवं पेशीय तंत्र को गति तंत्र (Locomotor system) भी कहते है ।
- **रक्तपरिसंचरण तंत्र (The Circulatory system) :** शरीर का परिवहन तंत्र है, यह ऑक्सीज़न और पोषण ऊतकों को एक दूसरे तक ले जाता है तथा व्यर्थ-पदार्थ बाहर निकलता है और ऊतकों को एक दूसरे पर निर्भरता के लिए आवश्यक है ।
- **श्वसन तंत्र (The Respiratory system) :** शरीर और वातावरण के बीच तथा अन्तरिक तौर पर गैसों का आदान-प्रदान करता है ।
- **पाचन तंत्र (The Digestive system) :** भोजन के पाचन और शोषण तथा व्यर्थ-पदार्थों के उत्सर्जन से सम्बन्धित रहता है ।

- **अन्तःस्त्रावी तंत्र (The endocrine system) :** हार्मोन्स पैदा करता है जो शरीर के विभिन्न कार्यों पर नियंत्रण रखते है ।
- **मुत्रीय तंत्र (The Urinary system) :** शरीर का मुख्य उत्सर्जन तंत्र है ।
- **स्नायुविक तंत्र (The Nervous system) :** आसपास के वातावरण के प्रति सचेतनता पैदा करता है और किसी बाह्य परिवर्तन के प्रति शरीर को आवश्यक प्रतिक्रिया व्यक्त करने के योग्य बनाता है ।
- **प्रजनन तंत्र (The Reproductive System) :** संतानोत्पति कर प्रजाति के अस्तित्व को बनाये रखता है ।

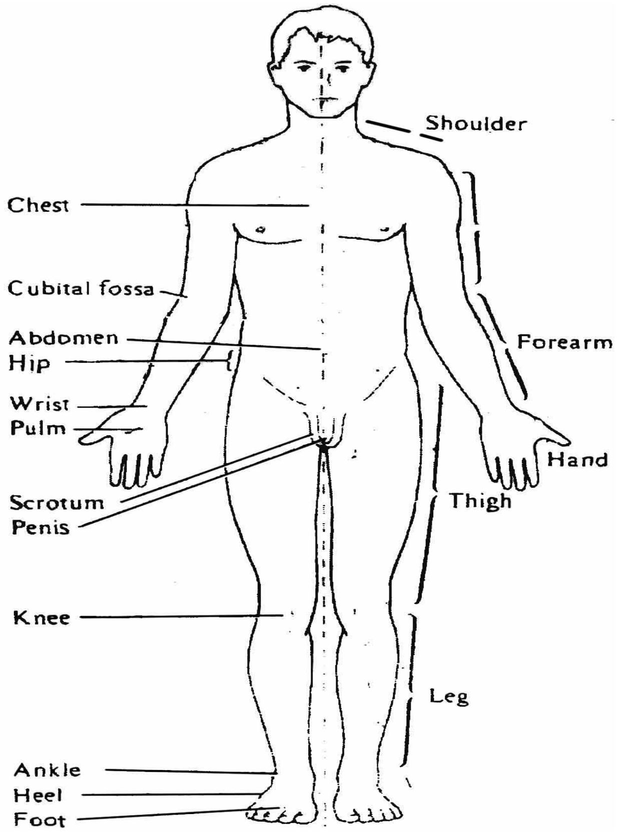

चित्र - शरीर के अंग, संरचनानुसार (सामने का भाग)

1.6 त्वचा (The Skin)

त्वचा शरीर को ढँकती है और अंदुरुनी ऊतकों कि सुरक्षा करती है इसमें कई संवेदी स्नायुओ के अन्तःसिरे रहते है और यह शरीर का तापक्रम नियंत्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

1.6.1 त्वचा की रचना

त्वचा के दो तहें होती है

1. एपिडर्मिस, या बाहरी तह
2. कोरिअम

1. **एपिडर्मिस (Epidermis)** अ- रक्तसंवहनी तह है और स्ट्रेटिफाइड एपिथिलिअम की बनी होती है । यह केसीएच क्षेत्रों जैसे हथेली, तलुए आदि पर बहु त मोटी, कडक एवं सख्त रहती है और धड़ तथा हाथ-पैर कि अंदरूनी सतहों पर बहु त पतली एवं नरम रहती है । एपिडर्मिस में दो सतहे या क्षेत्र होते है, बाहरी क्षेत्र को होर्नि क्षेत्र और अंदुरुनी क्षेत्र को जर्मिनेटिव क्षेत्र कहते है ।

- **होर्नि क्षेत्र (Horny Zone) में तीन परते होती है :**

(i) **होर्नि परत (स्ट्रेटम कॉर्नीअम - Stratum corneum)** सबसे ऊपरी परत है, इसकी कोशिकाएँ चपटी होती है और इनमें न्यूक्लिआई नहीं रहते है और प्रोटोप्लाज्म केरेटिन नामक ठोस पदार्थ में परिवर्तित हो जाता है जो पनिरोधक होता है ।

(ii) **स्वच्छ परत (स्ट्रेटम ल्यूसिडम- Stratum Lucidum)** स्वच्छ प्रोटोप्लाज्म युक्त कोशिकाओं की बनी होती है और इनेम से कुछ में चपटे न्यूक्लिआइ रहते है ।

(iii) **ग्रैन्यूलर (दानेदार) परत (स्ट्रेटम ग्रैन्यूलोज्म - Stratum granulosum)** सबसे अंदुरुनी परत है । यह दानेदार प्रोटोप्लाज्म और स्पष्ट दिखने वाले न्यूक्लिआइ से युक्त कोशिकाओं कि कई परतों कि बनी होती है ।

- **जर्मिनेटिव क्षेत्र (Germinative zone)** अन्दुरुनी क्षेत्र है, जो परतों का बना होता है

(i) कॉंटेदार कोशिकाओं कि परत में विभिन्न आकारों वाली कोशिकाएँ, जिनमें प्रत्येक में कांटे जैसे छोटे-छोटे उभार होते है जो एक दूसरे से जुड़े रहते है। न्यूक्लिआइ स्पष्ट दिखाई देते है।

(ii) आधारीय कोशिका परत (Basal Layer) आधारीय झिल्ली पर जमी हुई कॉलमनर कोशिकाओं की बनी होती है। त्वचा की बाहरी सतह से शल्क घर्षण के द्वारा निरन्तर निकलते रहते है और अंदुरुनी कोशिकाएँ वृद्धि करके सतह पर आकर नई शल्क के रूप में निरन्तर विकसित होती रहती है । एपिडर्मिस में न तो रकतापूर्ति और न ही स्नायु संपूर्ति होती है । इसका पोषण अधीनस्थ कोरिअम में उपस्थित रक्तवाहिकाओं से आने वाली लिम्फ के द्वारा होता है । जब फफोला बनाता है तब एपिडर्मिस ही फूलती है, इसलिये फफोले कॉ बिना दर्द के कैंची से काटा जा सकता है ।

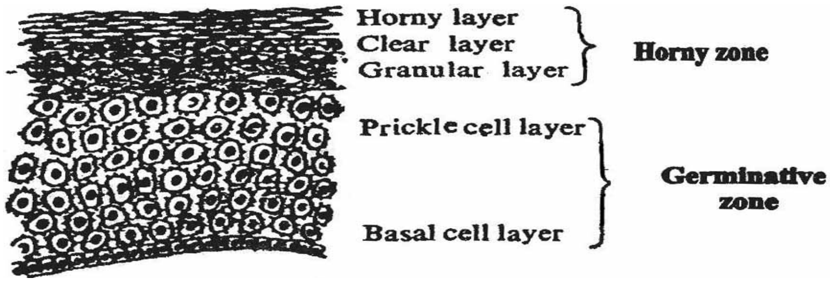

चित्र - एपिडर्मिस

कोरिअम के सम्पर्क में रहने वाली कोशिकाओं की आधारीय परत में रजक पदार्थ होते है जो त्वचा कॉ उसक रंग प्रदान करते है : पीला लाल या काला । ये रजक पदार्थ सूर्य की किरणों के हानिकारक प्रभावों से शरीर की सुरक्षा करते है, क्योंकि काला रंग रेडिएशन कॉ सोख लेते है । सतह की शलकें ऊतकोंक में बैक्ट्रिआ के प्रवेश को रोकती है, क्योंकि ये शुष्क कोशिकाओं को नहीं

पचा पाते है और ये अपना रास्ता उनमें से नहीं निकाल पाते है। एक बार जब एपिडर्मिस काटने या चुभने के द्वारा टूट जाती है तो ऊतकों में संक्रमण पहुँच जायेगा और सेपसिस हो जायेगा ।

कोरिअम (Corium) मजबूत लचीली परत होती है इसे "डर्मिस" भी कहते है जो हथेली और तलुओं में मोटी तथा पलकों में बहुत पतली रहती है । यह लचीली तन्तुओं रक्त एवं लिम्फ वाहिकाओं और स्नायुओ सहित संयोजी ऊतक की बनी होती है । पैपिली नमक कई शंकु-आकार उभार कोरिअम की सतह से निकलकर एपिडर्मिस में उभरे रहते है । जहाँ त्वचा अधिक संवेदनशील रहती है वहाँ ये अधिक होते है और ऐसे क्षेत्रों में ये समनान्तर किनारों में जमे रहते है और प्रत्येक व्यक्ति में भिन्न होते है, जो फिगर प्रिंट्स के लिये उपयोगी है ।

त्वचा में स्थित स्नायु अन्तः सिरों (Nerve endings) का अधिकांश भाग संवेदी और विभिन्न प्रकार का होता है जिससे विभिन्न प्रकार के संवेदन होते है जिन्हे त्वचा सहन करने में सक्षम होती है, उदहरणार्थ, स्पर्श, ऊष्मा, ठंड एवं दर्द । गोलाकार रचनाओं में स्थित स्पर्श सिरे के स्नायु, जिन्हे स्पर्श या टैक्टाइल कोर्पसल्स (Tactile corpuscales) कहते है, दबाव द्वार उत्तेजित किये जा सकते है, तथा ऊष्मा, ठंड एवं दर्द के स्नायु नाजुक रहते है और शाखाओं के समान फैले रहते है । इन स्नायु अन्तः सिरों की कुछ शिखाएँ एपिडर्मिस में जाती है । गर्मी तब ही महसूस होगी जब ऊष्मा द्वारा प्रभावित विशिष्ट स्नायु, अंत:सिरे की समाप्ति के स्थान पर त्वचा पर गरम वस्तु छूती है । कुछ भागों में स्नायु अंत:सिरे इतने नजदीक रहते है की इन्हे पहचाना नहीं जा सकता, लेकिन जहाँ गर्मी महसूस की ज सकती है (गरम स्थान) और अन्य क्षेत्र जहाँ ठंड महसूस की ज ही (ठंडा स्थान) ।

त्वचा की रक्तपूर्ति करने वाली धमनियों वत्वचीय ऊतक में जाल बनाती है और इसकी शाखाएँ स्वेद ग्रन्थियों और हेअर फोलिकल्स की रक्तपूर्ति करती है । पतली-पतली कोशिकाएँ भी पैपिली में जाती है ।

1.6.2 त्वचा के कार्य (Functions of the Skin)

- यह शरीर का तापक्रम नियंत्रित करती है ।
- व्यर्थ-पदार्थों को उत्सर्जित करती है ।
- यह स्पर्श एवं अन्य सवेदनों का अंग है जिसके द्वारा हम वातावरण के प्रति सचेत रहते है ।
- यह अपनी शुष्क, शल्कमय बाहरी सतह दे द्वारा बैक्टीरिआ को दूर रखती है ।
- यह सिबम स्त्रावित करती है ।
- यह अपने रजक पदार्थ के द्वारा सूर्य की किरणों के हानिकारक प्रभाव से शरीर की सुरक्षा करती है ।
- इसमें उपस्थित एरगोस्टोरोल पर अल्ट्रावोइलेट किरणों की क्रिया द्वारा विटामिन डी का निर्माण होता है ।
- यह शरीर को आकर्षक बनाती है ।

1.7 कंकाल तंत्र (Skeleton System)

संसार में विभिन्न प्रकार के जन्तु पाये जाते है तथा उनमें विभिन्न तरह के कंकाल पाये जाते है । कंकाल एक विशिष्ट संयोजी ऊतक (Connective tissue) है जो शरीर को दृढ़ता प्रदान करता है, अंगों को जोड़ता है, सहारा देता है एवं शरीर को एक विशेष आकृति प्रदान करता है ।

1.7.1 कंकाल के प्रकार

कंकाल यदि शरीर से बाहर होता है तो उसे बाहर होता है उसे बाह्य कंकाल (Exoskeleton) कहते है । जैसे अर्थोपोड्स एवं मोलस्क जन्तुओं में बाह्य कवच, सरिसपों एवं मत्स्यों में शल्क, स्तनियों में रो, नाखून, पंजे खुर आदि तथा पक्षियों में पंख । बाह्य कंकाल अधिकतर एक्टोडर्म से उद्भिबिद है पर मत्स्यों में शल्क मीसोडर्म से विकसित है । शरीर के अन्दर स्थित कंकाल को अन्तःकंकाल (Endoskeleton) कहते है । यह मीसोडर्म से विकसित है । कंकाल के अध्ययन को अस्थिकी (Osteology) कहते है ।

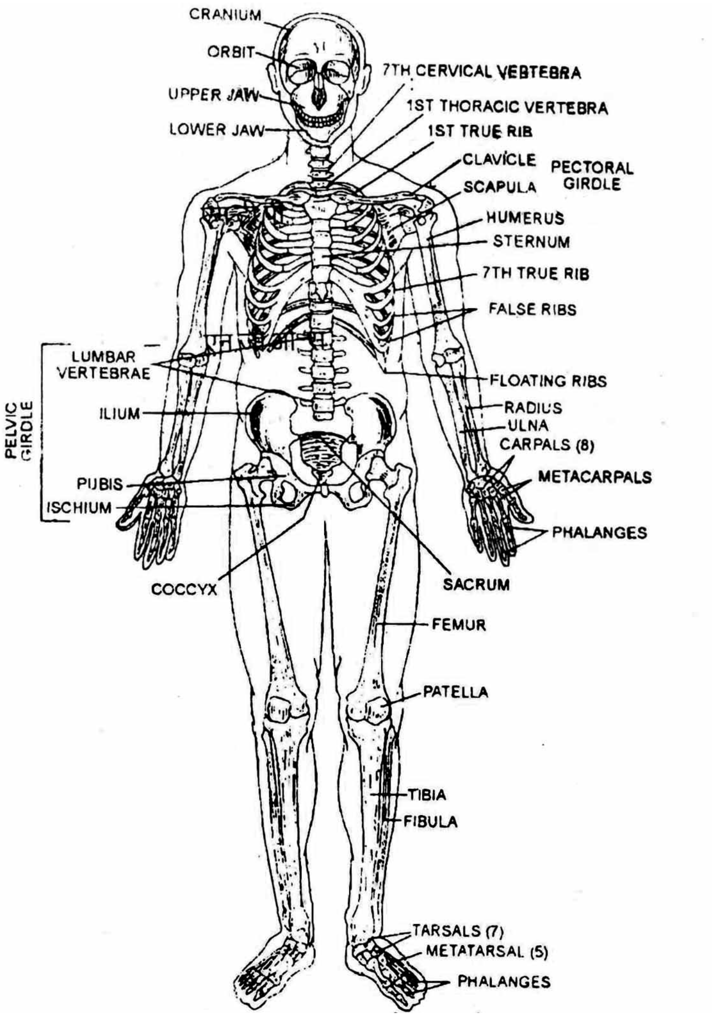

चित्र - मनुष्य का कंकाल तंत्र

अन्तःकंकाल (Endoskeleton) कशेरुकियों में उपास्थियों और अस्थियों का बना सजीव सुदृढ़ अन्तःकंकाल होता है । सिर्फ निम्न कोटी की कुछ मछलियों में पूरा अन्तःकंकाल उपास्थि का बना होता है । अंतःकंकाल दो भागों में विभाजित होता है :

1. **अक्षीय कंकाल (Axial Skeleton) -** इसमे खोपड़ी या करोटि (Skull), कशेरुक दण्ड या मेरूदण्ड (Vertebral column), पसलियाँ या पर्शुक (Ribs) तथा उरोस्थि (Sternum) सम्मिलित है ।
2. **अनुबन्धी या उपागी कंकाल (Appendicular Skeletion) -** इसमे मेखलाएँ (Girdles) तथा पादो की अस्थियाँ (Bones of limbs) सम्मिलित हैं।

1.7.2 अस्थियाँ

शरीर की अस्थियों को निम्न प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है

- सिर की अस्थियां.
- धड़ की अस्थियां.
- ऊपरी देहशाखा की अस्थियाँ (भुजा की अस्थियॉ)
- निचली देहशाखा की अस्थियाँ (पैर की अस्थियॉ)

उपरोक्त अनुसार अस्थियों के नाम निम्न हैं

- **सिर की अस्थियाँ :** इन्हे दो समूहों मे रखा जा सकता है ।

(i) **खोपड़ी की अस्थियाँ :** फ्रन्टल, पैराटाइल, आक्सिपिटल, टेम्पोरल, एथ्मॉइड, स्फीनॉइड

(ii) **चेहरे की अस्थियाँ :** मैक्जिला, मैन्डिवल, जाइगोमेटिक नाक की अस्थियाँ, वोमर निचली नेजल कोन्की, लेक्राइमल एवं तालु की अस्थियॉ।

- **धड़ की अस्थियाँ** : स्टर्नम या वक्ष स्थल की अस्थि, पसलियाँ (Ribs). रीढ की अस्थियाँ (Bones of vertical)।
- **ऊपरी देहशाखा (हाथ) की अस्थियाँ :** क्लैविकल (कालर), स्कैप्यूला, ह्यूमरस, रेडिअस, अलना, कारपल्स मेटाकारपल्स फैलेन्जेस
- **निचली देहशाखा (पैर) की अस्थियाँ :** कूल्हे की अस्थियॉ फीमर, पटेला, टिविआ, फिबुला, टार्सल, मेटाटार्सल्स फैलेन्जेस, श्रोणी की अस्थियाँ (यह 4 अस्थियों: कूल्हे की दायी एवं बायी अस्थियाँ, सोक्रम एवं काक्सिक्स से बनी होती है।

1.8 पेशीय तंत्र परिचय

पेशीय तंत्र कई पेशियों का बना होता है जिनके द्वारा शरीर की विभिन्न हलचलें होती हैं। ऐच्छिक (Voluntary) पेशियाँ, अस्थियों, उपास्थियों, लिगॅमेन्ट्स, त्वचा या अन्य पेशियो से टेण्डेन ज्मदकवदेद्ध और एपोन्यूरोसिस (Aponeuroses) के द्वारा जुड़ी रहती है ।

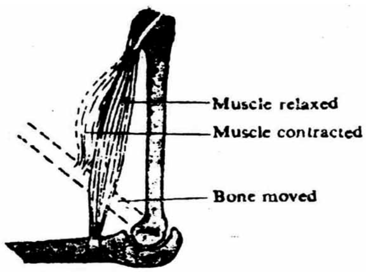

चित्र–पेशी के संकुचित होने पर अस्थि की हलचल

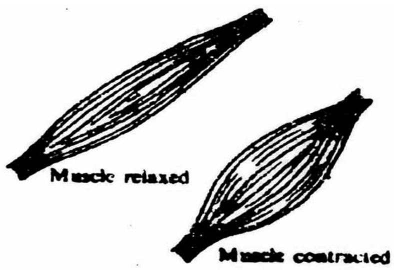

चित्र–संकुचन दर्शाते हुए सामान्य ऐच्छिक पेशी

1.8.1 पेशियों की विशेषताएं

पेशियाँ केवल संकुचन के द्वारा ही क्रिया करती हैं। ये संकुचित होती हैं और खींचती हैं, वे ढकेलती कभी नही हैं, हालाँकि यह बगैर छोटी हुए संकुचित सकती है और जोड को संकुचन की मात्रा के अनुसार काफी हद तक स्थित रखती हैं। जब संकुचन समाप्त होता है तब पेशी मुलायम हो जाती है, लेकिन स्वय लम्बी नही होती है। जोड के दूसरी तरफ अन्य पेशी के संकुचन द्वारा तन सकती है। इन्हे प्रतिरोधी (Antagonist) पेशियाँ कहते है।

पेशियाँ अकेले बहुत कम कार्य करती हैं, यहाँ तक की साधारण गति भी प्राय: कई पेशियाँ की क्रिया द्वारा होती है, उदाहरणार्थ पेन्सिल उठाने के लिए उंगलियो अंगूठे, कलाई, कोहनी और सम्भवत: कन्धे तक धड की हलचल आवश्यक होती है। क्योकि पेन्सिल तक पहुँचने के लिए शरीर आगे की ओर झुकता है। इस क्रिया मे भाग लेने वाली प्रत्येक पेशी को पर्याप्त रूप से संकुचित होना जरूरी है, तथा हर गति पूरी करने के लिए न सिर्फ सम्बन्धित पेशी का संकुचित होना आवश्यक है बल्कि विरोधी पेशी का शिथिल होना भी जरूरी है। कई पेशियों की इस सम्मिलित क्रिया को पेशी समन्वय या तालमेल (Musels Co-ordination)। कहते हैं।

संवेदी स्नायु पेशीय संवेद (Muscle) पैदा करते हैं। यह संवेद बहुत तीव्र नहीं होता, केवल पेशी को संकुचन और शिथिलन की जागरूकता भर देता है। यह जागरूकता ऐच्छिक है यानी इच्छा के अनुसार पेशी को शिथिल या संकुचित किया जा सकता है। सामान्य स्थिति मे पेशी स्वय ही कुछ तनी होती है जिसे टोन (Tone) कहते हैं। टोन ही के कारण पेशियाँ बिना थके एक सी स्थिति मे रहती हैं। यह क्रिया एक कार्य-प्रणाली पर आधारित है जिसके द्वारा विभिन्न समूह के पेशीय तन्तु संकुचित और शिथिल होते हैं जो प्रत्येक समूह को आराम एवं सक्रियता की अवधि प्रदान करती है। सबसे अधिक टॉनिसिटी युक्त पेशियाँ गर्दन और पीठ मे होती है।

1.8.2 मुख्य पेशियां

आगे के पृष्ठों मे शरीर की मुख्य पेशियो का संक्षिप्त वर्णन दिया जा रहा है। शरीर की कार्यप्रणाली को जानने के लिए प्रसूति विज्ञान सहायिका को इनकी सामान्य जानकारी रखना वाँछनीय है।

(i) सिर की पेशियाँ (The Muscle of the Head)

सिर की पेशियो को उनके कार्यो के अनुसार दो समूहों में विभाजित किया जाता है। इनके नाम हैं :

(1) हाव-भाव की पेशियाँ और (2) चबाने की पेशियाँ

1. हाव-भाव की पेशियाँ (Muscles of Expression) - अस्थि के बजाय त्वचा से जुडी रहती हैं, अत ये त्वचा को हिलाती हैं और चेहरे के हाव-भाव मे परिवर्तन -करती है। गोलाकार पेशियॉ (Circular muscles) जिन्हें ओबिंक्यूलेरिस ऑक्यूलाइ और ऑर्बिक्यूलेरिस ऑरिस कहते हैं। क्रमशः ऑखों और मुँह के चारों तरफ रहती हैं तथा उन्हे बन्द करती हैं। छोटी पेशियाँ (Small muscles) भोंहों और ऊपरी पलकों, तथा मुह के कोणों को ऊपर व नीचे हिलाती है, और नथुनों को विस्तारित करती है। इस प्रकार आश्चर्य, घबराहट, प्रसन्नता या दुख के हाव-भाव पैदा होते हैं। छोटी पेशियाँ ऑखों को नेत्रगुहिकाओं में घुमाती भी हैं जिससे देखने की दिशा बदलने के साथ ही हावभाव भी बदले जाते हैं।

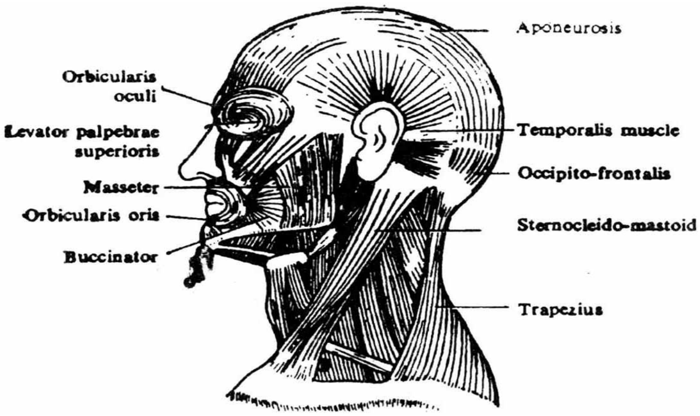

चित्र - सिर एवं गर्दन की पेशियाँ

2. चबाने की पेशियाँ (The Muscles of The Mastication) : निचले जबडे को काटने की क्रिया मे ऊपर व नीचे तथा चबाने की क्रिया मे आजू-बाजू और आगे-पीछे घुमाती हैं । ये पेशियाँ हैं : मैसेटर (Masseter) जो जबडे के कोण से जाइगोमेटिक आर्च तक स्थित रहती हैं । टेम्पोरेलिस पेशी (Temporalis muscle) : जो टेम्पोरल अस्थि के ऊपर स्थित रहती है और निचले जबडे में प्रवेशित होती है । कुछ अन्य छोटी-छोटी पेशियाँ खोपडी से निचले जबडे तक फैली रहती हैं । ये वही पेशियाँ हैं, जो टेटनस (Tentanus) नमक बीमारी में "जॉक जॉ" अर्थात् कसे हुए जबडे की स्थिति पैदा करती हैं। नवजात शिशु टेटनस निओनेटोरम (Tetanus Neonatorum) का शिकार हो सकता है ।

(ii) गर्दन की पेशियाँ (The Muscle of the Neck)

गर्दन मे दो बडी पेशियाँ होती हैं, स्टर्नोक्लीडोमैस्टॉइड एवं ट्रेपीजिअँस ।

1. **स्टर्नोक्लीडोमैस्टॉइड (Sternocleidomastoid)** - गर्दन के सामने स्थित रहती है, और स्टर्नम व क्लैविकल से मैस्टॉइड प्रोसेस व टेम्पोरल अस्थि के पीछे की सतह तक फैली होती है । जब एक तरफ की पेशी संकुचित होती है तब वह सिर को उस कन्धे की ओर खींचती है । जब दोनो तरफ की पेशियों का उपयोग एक साथ होता है तब ये गर्दन को झुकाती हैं ।

2. **ट्रैपीजिअँस (Trapezius)** - पेशी गर्दन और सीने के पीछे स्थित रहती है, तथा इसकी आकृति करीब- करीब त्रिकोणाकार होती है । जिसका तल (आधार) गर्दन और सीने के पीछे ऑक्सिपट के नीचे से जुडा रहता है । यह पेशी ऑक्सिपट से भी नीचे की ओर जुडी होती है । इसका नुकीला हिस्सा कन्धे के ऊपर व पीछे स्कैप्यूला और क्लैविकल में प्रवेशित रहता है । जब पूरी पेशी सिकुडती है तब यह कन्धों को पीछे की ओर खींचती है । जब इसके ऊपरी एवं निचले भागों का अलग-अलग उपयोग होता है जब यह स्कैप्यूला को ऊपर एवं नीचे की ओर खींचती है।

(iii) धड की पेशियां (The Muscles of the Trunk)

धड की पेशियो को उनके कार्यो के निम्न अनुसार समूहों मे विभाजित किया जा सकता है :-

1. कंधे को घुमाने वाली पेशियाँ
2. श्वसन की पेशियाँ
3. उदरीय दीवार बनाने वाली पेशियाँ
4. कूल्हे को घुमाने वाली पेशियाँ
5. रीढ को घुमाने वाली पेशियाँ, और
6. श्रोणि की निचली सतह की पेशियाँ ।

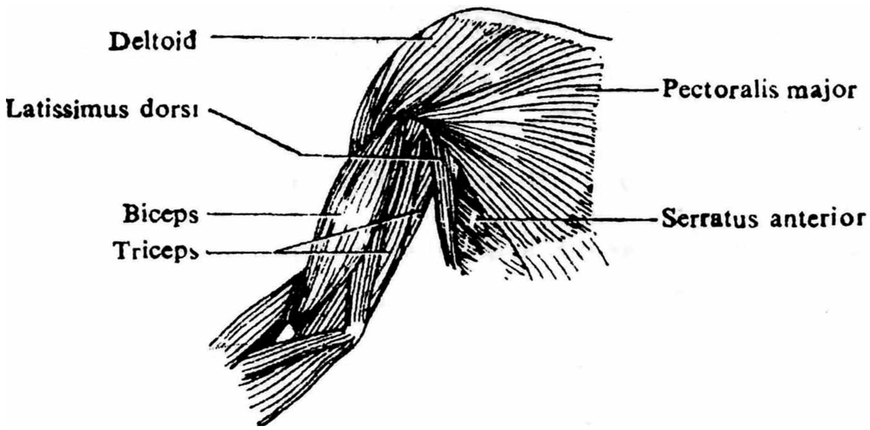

चित्र- कन्धे और भुजा की पेशियाँ

1. **कन्धे को घुमाने वाली पेशियाँ (The Muscles moving the shoulder) :** कन्धों को घुमाने वाली मुख्य पेशियाँ सीने के पिछले एवं अगले भाग को ढँकने वाली शक्तिशाली पेशियाँ हैं। ये हैं: पेक्टोरेलिस मेजर, ट्रेपीजिअस (गर्दन की पेशियाँ), लेटिसिमस डीसी एवं सीरेटेस एन्टिरिअर। पेक्टोरेलिस सीने के सामने के भाग को ढँकती है, और स्टरनम से ह्यूमरस तक फैली रहती हैं। लेटिसिमॅस डॉसी (Latissimus dorsi) वक्ष और उदर के पिछले भाग को ढँकती है, और लम्बर वर्टिब्री एवं इलिअक क्रेस्ट से ह्यूमरस तक फैली रहती है। ये पेशियाँ बगल की सामने एवं पीछे की पेशी बनाती है। सीरेटॅस एन्टिरिअर (Serratus anterior) वक्ष की बगल की दीवार के बाहर सामने की ओर पसलियों से लेकर स्कैप्यूला, जिसके नीचे से यह गुजरती है, की वर्टिब्रल किनारों तक फैली रहती है।

2. श्वसन की पेशियाँ (The Muscles of Respiration)

श्वसन क्रिया की मुख्य पेशियाँ निम्नलिखित हैं -

(अ) डायफ्रॉम

(ब) बाह्य इन्टरकॉस्टल पेशियाँ।

(स) आन्तरिक इन्टरकॉस्टल पेशियाँ।

(अ) डायफ्रॉम (Diaphram) - गुम्बज के आकार की चौडी पट्टीनुमा पेशी है जो उदर से वक्ष को पृथक करती है। इसका किनारा पेशी का होता है, जबकि मध्य भाग तन्तुमय ऊतक या एपॉन्यूरोसिस की पट्टी का होता है। यह पेशी स्टर्नम के नुकीले सिरे, निचली पसलियों व इनकी उपास्थियों और पहले तीन लम्बर वर्टिब्री से निकलती है और मध्य एपॉन्यूरोसिस में प्रवेशित रहती है। डायफ्राम मे तीन छिद्र होते हैं जो आहार-नलिका, महाधमनी और निचली महाशिरा के साथ ही कुछ छोटी रचनाओं जैसे बैगस स्नायु एवं थॉरेसिक वाहिका. जो क्रमशः आहार नलिका एवं महाधमनी के साथ रहती है के गुजरने के लिए रहते हैं। जब पेशीय तन्तु संकुचित होते है तब डायफ्राम का उठा हुआ भाग चपटा होकर नीचे की ओर दब जाता है जिससे वक्षीय गुहिका की ऊपर से नीचे तक की गहराई बढ जाती है।

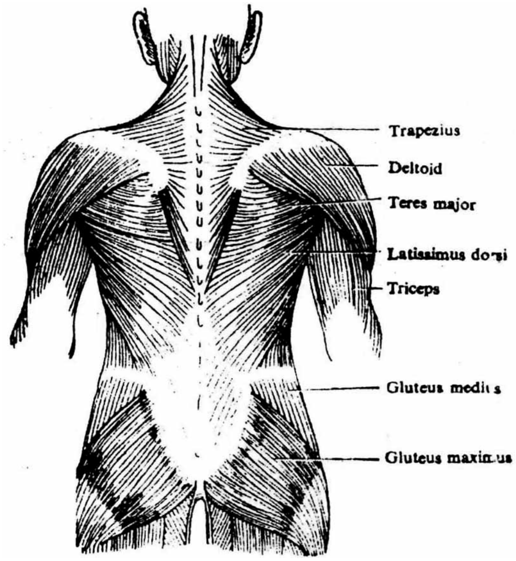

चित्र - पीठ की पेशियाँ

(ब) बाह्य इन्टरकॉस्टल पेशियाँ (External Intercostal muscles). पसलियों के बीच स्थित रहती है। इसके तन्तु एक पसली से नीचे की दूसरी पसली तक नीचे एवं आगे की ओर फैले रहते हैं। ये पेशियाँ उपर वाली पसली की निचली किनार से उत्पन्न होती है और नीचे वाली पसली की ऊपरी किनार में प्रवेशित रहती है। इनकी क्रिया से पसलियाँ आगे और ऊपर उठती है तथा वक्षीय गुहिका का आकार बढाती है। वक्ष का आकार दोनो बाजू तथा सामने की ओर बढता है।

(स) आन्तरिक इन्टरकॉस्टल पेशियाँ (Internal Intercostal Muscles). यह भी पसलियों के बीच मे तथा बाह्य इन्टरकॉस्टल पेशियों के नीचे स्थित रहती हैं और

इनकी प्रतिरोधी पेशियाँ होती हैं। इनके तन्तु एक पसली से नीचे वाली दूसरी पसली तक नीचे एवं पीछे की और फैले रहते हैं। ये ऊपर वाली पसली की निचली किनार से उत्पन्न होती है और नीचे वाली पसली की ऊपरी किनार मे प्रवेशित रहती है। इनकी क्रिया आजू-बाजू एवं पीछे से आगे तक वक्षीय गुहिका का आकार कम करने के लिये पसलियों को नीचे एवं अन्दर की ओर खींचने की है, जिससे श्वास बाहर निकालते समय आसानी होती है।

3. **उदरीय दीवार बनाने वाली पेशियाँ (Muscles forming the abdominal wall)**

उदरीय दीवार की पेशियाँ निम्नलिखित है :-

(अ) रेक्टस एब्डॉमिनिस

(ब) एक्सटरनल ऑब्लिक

(स) इन्टरनल ऑब्लिक

(द) ट्रान्सवर्सस एब्डॉमिनिस

(य) क्वाड्रेटस लम्बोरम

(अ) रेक्टस एव्हामिनिस (Rectus abdominis) - सामने की उदरीय दीवार बनाती है, और प्यूबिस से ऊपर की तरफ स्टर्नम एवं कॉस्टम उपास्थियों तक फैली रहती है। इसके तन्तु ऊपर से नीचे सीधे फैले रहते हैं। इसीलिये यह नाम दिया गया है, क्योकि रेक्टस शब्द का अर्थ है सीधा। शरीर की मध्य रेखा मे यह तन्तुमय ऊतक की रेखा द्वारा दो भागो मे विभाजित होती है। इसे लिनिआ एँल्बा कहते हैं।

(ब) एक्सटरनल ऑब्लिक (External Oblique) - पेशी व गले की दीवार की बाहरी परत बनाती है। इसके तन्तु नीचे एवं आगे की तरफ फैले रहते है। यह निचली पसलियों से उत्पन्न होती है और इलिअँक क्रेस्ट एवं इन्ग्वायनल लिगॉमेन्ट में प्रवेशित रहती है। इन्ग्वायनल लिगॅमेन्ट ग्राँएन (उदर और जाँघ के ऊपरी भाग के मिलने का स्थान) पर उदरीय दीवार की सख्त किनार बनाता है, जहाँ पेशियाँ अस्थि पर प्रवेशित नही होती तथा एक खाली स्थान छोड देती हैं जिसमे से धड से पेशियाँ, रक्तवाहिकाएँ एवं स्नायु पैर तक जाते हैं।

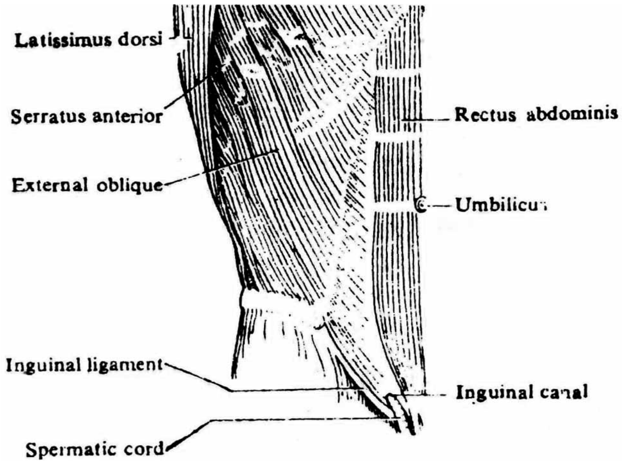

चित्र-उदरीय दीवार की मुख्य पेशियाँ

(स) **इन्टरनल ऑब्लिक (Infernal Oblique) -** उदर के बगल की दीवार की दूसरी तह बनाती है। इसके तन्तु ऊपरी एवं आगे की ओर फैले रहते हैं। इसकी उत्पत्ति इलिअँक क्रेस्ट और इन्ग्वायनल लिगॅमेन्ट पर होती है, तथा निचली पसलियों और उनकी उपास्थियों में यह प्रवेशित होती है। यह भी एपॉन्यूरोसिस बनाती है, जो रेक्टस के अंशत: आगे एवं पीछे से गुजरकर एक्सटरनल ऑब्लिक एवं ट्रान्सवर्सस एब्डॉमिनिस के एपॉन्यूरोसिस से जुड जाता है।

(द) **ट्रॉन्सवर्सस एब्डॉमिनिस (Transversus abdominius) -** उदर के बाजू की दीवार की आन्तरिक तह बनती है ओर इन्टरनल ऑब्लिक पेशी के नीचे स्थित रहती है। इसके तन्तु उदरीय दीवार के चारों ओर स्थित होते हैं। यह इलिअँक क्रेस्ट एवं लम्बर फेशिआ से उत्पन्न होती है जिसके द्वारा यह लम्बर वर्टिब्री से जुडी रहती है। यह एपॉन्यूरोसिस मे प्रवेशित होती है, जो उदर के सामने रेक्टस के नीचे फैला रहता है और लिनीआ एल्बा से जुडता है।

(य) **क्वाड्रेटस लम्बोरम (Quadratus Lumborum) -** पिछली दीवार बनाती है और इलिअँक क्रेस्ट से बारहवीं पसली तथा ऊपरी लम्बर वर्टिब्री तक फैली रहती है। श्वसन क्रिया के दौरान यह बारहवीं पसली को स्थिर रखतीं है। उदरीय दीवार मे नीचे की ओर दोनो ग्रॉएन से एक-एक मार्ग बनता है, इस मार्ग को इन्ग्वायनल केनेल (Inguinal canal) कहते हैं। यह मार्ग इन्ग्वायनल लिगॅमेन्ट के ऊपर अन्दरूनी सिरे के पास पेशीय तहों मे तिरछा होता है। इस मार्ग से निम्न अग गुजरते हैं. पुरूष में, टेस्टिकल (वृषण) से स्परमेटिक कॉर्ड। स्त्रियों में गर्भाशय का राउन्ड लिगॉमेन्ट तथा इससे सम्बन्धित रक्तवाहिकाएँ और स्नायु।

4. **कूल्हे की पेशियाँ (Muscles of the Hip)**

कूल्हे को घुमाने वाली धड में स्थित पेशियाँ निम्नलिखित हैं

(अ) **इलिओसोऐस**

- सोएँस
- इलिएँकस

(ब) ग्लूटीअल पेशियाँ :- मेक्सिमस, मीडिअँल, मिनिमस।

(अ) **इलिओसोएँस पेशियाँ (Iliopsoas Mucsles) -** ग्रॉएनं (Graoin) के सामने इन्ग्वायनल लिगेमेन्ट के नीच क्रॉस करती हैं। सोएँस पेशी लम्बर वर्टिब्री के मुख्य भागों से, और एलिएँकस पेशी एलिअम के कहते भाग की सामने की सतह से उत्पन्न होती हैं। ये दोनो पेशियाँ फीमर के छोटे ट्रॉकेन्टर में प्रवेशित होती हैं । ये पेशियाँ कूल्हे के जोड पर मुड़ाव, दूरीकरण एवं पार्श्वीय घुमाव की गतियाँ पैदा करती हैं. लेकिन जब फीमर स्थिर रहती है तब यह धड़ को सामने की ओर झुकती हैं।

(ब) **ग्लूटीअल पेशियाँ (Gluteal Mucsles) -** नितम्ब बनाती हैं। इन पेशियो की उत्पत्ति से क्रम और इलिअम के पिछले भाग से तथा प्रवेशन फीमर के बडे ट्रॉकेन्टर और इसके नची ग्लूटीअल किनार पर होता है। इनकी संख्या तीन होती है -ग्लूटीअस मेक्सिमस,

मीडिअस और मिनिमस। ये कूल्हे के जोड को तानती (Extend) हैं ओर कूल्हे का दूरीकरण एवं पार्श्वीय घुमाव भी करती है। लेकिन जब फीमर स्थिर रहती है तब ये धड को पैरों पर प्रसरित करती हैं। सामान्यतया इन पेशियो का उपयोग इन्ट्रामस्क्यूलर इन्जेक्शन्स (Intra muscular Injections) के लिये किया जाता है क्योकि ये मोटी और मांसल होती हैं। यह ध्यान रखना जरूरी है कि ऊपरी चौथाई भाग का उपयोग किया जाये क्योकि अन्य भागों से साएँटिक स्नायु गुजरती हैं।

रीढ़ को घुमाने वाली पेशियाँ (Muscles moving the spine) - उदरीय दीवार की पेशियॉ धड़ को मोड़ती और घुमाती हैं, रेक्टस पेशी मोड़ती है ओर उदर के बगल की पेशियाँ वक्ष को उदर पर घुमाती हैं। उदरीय पेशियाँ आन्तरिक अंगों को दबाती भी हैं। स्पाइनेलिस पेशियाँ रीढ़ को तानती हैं। यह रीढ के दोनों तरफ धड के पीछे स्थित होती हैं। यह इलिअँक क्रेस्ट के पिछले भाग और सेक्रम से उत्पन्न होती है, ओर पसलियों तथा ऊपरी वर्टिब्री में प्रवेशित होती है।

3. श्रोणीय डायफ्रॉम की पेशियाँ (Muscles of the pelvic diaphragm) - श्रोणीय डायफ्रॉम श्रोणीय अंगों को सहारा देने वाली पेशियों का बना होता है। यह सामने स्थित प्यूबिस से, पीछे स्थित सेक्रम एवं कॉक्सिक्स तक, तथा दोनों तरफ इस्किचम के बाहर तक फैला रहता है। यह खुली हुई पुस्तक की आकृति के सामान होता है, और पीछे से सामने की ओर झुका हुआ एवं दोनों तरफ से मध्य रेखा की ओर झुका हुआ रहता है। यह लीवेटॅर-एनि ओर कॉक्सिजिअस पेशियो का बना होता है। स्त्रियों में इस पेशी की मध्य रेखा में तीन छिद्र होते हैं। इन छिद्रों में से मूत्रमार्ग, योनिमार्ग और मलाशय गुजरते हैं। पुरूषों मे सिर्फ दो छिद्र रहते है जिनमें से क्रमश. मूत्रमार्ग और मलाशय गुजरते हैं।

(iv) भुजा की पेशियाँ (The Muscles of the upper arm)

भुजा की मुख्य पेशियो को तीन भागों मे विभाजित किया जा सकता है ऊपरी भुजा की पेशियॉ अग्र भुजा की पेशियाँ एवं हाथ की पेशियाँ।

(a) ऊपरी भुजा की पेशियाँ (The Mucsles of the Arm)

ऊपरी भाग की पेशियाँ भुजा की अन्य पेशियो की अपेक्षा बडी एवं मजबूत रहती है ओर ये निम्नानुसार हैं.

- बाइसेप्स
- ट्राइसेप्स,
- डेल्टॉइड
- ब्रैकिएलिस
- **बाइसेप्स (Biceps) :** यह पेशी इसलिए बाइसेप्स कहलाती है क्योंकि इसके दो ऊपरी सिरे (Hands) होते हैं। यह पूजा के सामने नीचे की ओर फैली रहती है और जब यह संकुचित होती है तब इसे आसानी से महसूस किया जा सकता है। यह दो सिरों के द्वारा उत्पन्न होती है एक सिर की उत्पत्ति ग्लीनॉड गुहिका से ओर दूसरे की स्केप्यूला की कोराकॉइड प्रोसेस से होती है तथा यह कोहनी के जोड़ के सामने अग्र-भुजा मे रेडिअल टयूबरॉसिटी पर

प्रवेशित होती है। यह कोहनी एवं कंधे के जोड को मोड़ती है और हथेली को ऊपर की ओर (Supinates) लाती है। इसलिए हथेली को ऊपर लाने की क्रिया सुपिनेशन (Supination) काफी ताकत से की जा सकती है तथा स्क्रू एवं ढिबरियाँ इस प्रकार बनाई जाती हैं कि दाहिने हाथ से कार्य करने वाला आदमी हाथ को उलटने की क्रिया से उनको कस सकता है।

- **ट्राइसेप्स (Triceps) -** यह पेशी ट्राइसेप्स इसलिये कहलाती है क्योंकि यह कन्धे के ऊपर जहाँ झब्बा (स्कन्धाभरण- Epaulette) लगाया जाता है वही स्थित रहती है। इस त्रिकोणाकार का आधार उत्पत्ति बनाता है और कन्धे. के ठीक ऊपर शोल्डर गर्डल से जुडता है। यह पेशी ह्यूमरस के बाहर की तरफ डेल्टॉइड ट्यूबरॉसिटि में प्रवेशित होती है। इसकी क्रिया समकोण पर कन्धे का दूरीकरण करने की है। समकोण से ऊपर भुजा को उठाने के लिये शोल्डर गर्डल का घूमना भी जरूरी है। इस काम को ट्रेपीजिअस करती है, जो स्कैप्यूला और क्लैविकल को ऊपर ऑक्सिपट की तरफ खींचती है।
- **डेल्टॉइड (Deltoid) -** यह कन्धे की तिकोनाकार पेशी है तथा क्लेविकल एवं स्केप्यूला से निकलकर अमरस में निवेशित होती है। यह पेशी इंजेक्शन लगाने हेतु उपयुक्त स्थल है।
- **ब्रैकिएलिस (Brachialis) -** यह पेशी भुजा के सामने बाइसेप्स की अपेक्षा कुछ नीचे स्थित रहती है । यह अमरस से उत्पन्न होती है और अलना की कोरोनॉइड प्रोसेस मे प्रवेशित होती है । कोहनी के जोड की शक्तिशाली मुड़ाव क्रिया मे यह बाइसेप्स की सहायता करती है।

(ब) अग्र-भुजा की पेशियाँ (The muscles of the forearm)

कलाई ओर उँगलियों की हलचलों के लिये अग्र-भुजा में कई छोटी-छोटी, कम शक्तिशाली पेशियाँ होती हैं। अग्र-भुजा के सामने कलाई की मुड़ाव पेशियाँ (Flexors).उँगलियों की सामान्य मुड़ाव पेशियाँ, अगठे की लम्बी मुड़ाव पेशी और कलाई को नीचे की ओर पलटने वाली पेशियाँ (Pronators) रहती हैं। जालियों की मुड़ाव पेशियाँ चार टेन्डॅन्स में रहती हैं जो हथेली के सामने से प्रत्येक जाली की अन्तिम फैलेन्क्स तक पहुँच कर उनमें प्रवेशित होती है।

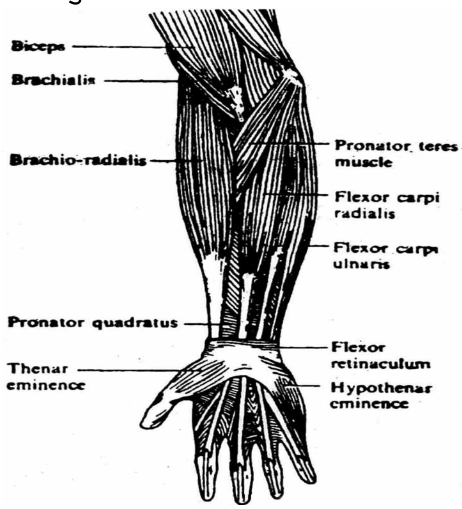

चित्र - अग्र-भुजा एवं हाथ की पेशियाँ

(स) हाथ की पेशियाँ (The muscles of the Hand)

हाथ में बहुत कम पेशियाँ रहती हैं, क्योकि ज्यादा पेशियाँ इसे बेडौल बना देती हैं ओर चीजों को पकड़ने व उठाने की इसकी उपयोगिता में बाधा पैदा करती हैं । इसलिये हाथ की हलचल करने वाली पेशियों में से कई अग्र-भुजा मे स्थित रहती हैं । हाथ मे केवल अगठे की छोटी मुड़ाव पेशी और उगलियों की समीपीकरण एवं दूरीकरण पेशियाँ रहती है। उपरोक्त समीपीकरण तथा दूरीकरण को इन्टरॉसिअॅस पेशियाँ (Interosseous muscles) कहते हैं। ये सिर्फ अगठे के आधार पर अच्छी तरह से एवं छोटी उगली के आधार पर अंगूठे के आधार की तुलना में कुछ कम रूप से विकसित रहती हैं।

(v) पैर की पेशियाँ (The muscles of the Lower Limb)

पैर की पेशियाँ भुजा की अपेक्षा अधिक बडी और अधिक शक्तिशाली होती हैं, क्योकि पैर शरीर का सम्पूर्ण वजन वहन करते हैं । इन्हे तीन समूहों में विभाजित किया जा सकता है जाँघ की पेशियाँ, टांग की पेशियाँ और पाँव की पेशियाँ।

(अ) जाँघ की पेशियाँ (The Muscles of Thigh)

जाँघ की पेशियाँ विशेष रूप से मजबूत होती हैं तथा इनमे निम्न पेशियाँ रहती हैं -

- क्वाड्रिसेप्स फीमोरिस
- हैमस्ट्रिन्ग्स
- सार्टोरिअँस एवं
- कूल्हे की एडक्टॅर्स पेशियाँ।
- **क्वाड्रिसेप्स (Quadrieceps) :** इसे क्वाड्रिसेप्स इसलिये कहते हैं क्योकि इसमें चार सिरे होते हैं । बल्कि ये चार पेशियाँ ही होती है, जिनका मिलाजुला प्रवेशन पटेला मे रहता है, ओर पटेलर लिगॅमेन्ट के द्वारा यह टिबिआ से जुड़ती है। यह घुटने को तानने वाली पेशी है। जिसका उपयोग खडे रहने और ' 'किक' ' लगाने की शक्तिशाली क्रिया मे होता है। कभी-कभी इसका उपयोग इन्ट्रामस्क्यूलर इन्जेक्शन्स लगाने के लिये किया जाता है, क्योकि यह पेशी पैर की रक्तवाहिकाओं, स्नायुओं एवं लसिकाओं से काफी दूर रहती हैं।
- **हैमस्ट्रिन्ग्स (Hamstrings) :** घुटने को मोड़ने वाली पेशियाँ हैं और इन्हे ऐसा इसलिये कहते हैं क्योंकि घुटने के जोड के पीछे पॉप्लिटीअल स्थान के दोनो तरफ मजबूत टेन्डॅन्स या ' 'स्ट्रिन्ग्स' ' बनाती हैं। जब घुटने को झुकाया जाता है तब इन्हें आसानी से महसूस किया जा सकता है। ये पेशियाँ हैं - बाइसेप्स फीमोरिस सेमिटोन्डिनोसस एवं सेमिमेम्ब्रनोसस।

  हैमस्ट्रिन्ग पेशियाँ बहुत शक्तिशाली पेशी समूह बनाती हैं जो चलने में, कूदने मे और चढ़ने मे घुटने को मोड़ने मे सहायता करती हैं, तथा जब टिबिया स्थिर रहती है, जैसे खडे रहने मे तब इस्किअल ट्यूबरॉसिटि पर खिंचाव डालकर कूल्हे के जोड को तानने मे ग्लूटीअल पेशियो की सहायता भी 'करती हैं।
- **सार्टोरिअस (Sartorius) या टेलर :** यह पेशी, ऊपरी अगली इलिअँक स्पाइन से जाँघ के सामने रो होकर घुटने के अन्दर तक, जहाँ यह घुटने को क्रॉस करती है, फैली रहती है और

टिबिआ मे प्रवेशित होती है। यह दर्जी के समान बैठने पर जोड़ो की हलचलों में सहायता करती है अर्थात् कूल्हे एवं घुटने को जोड़ती है और फीमर को घुमाती है।

- **एडक्टर पेशियाँ (Adductor muscles) :** ये पेशियां जाँघ के अन्दर की तरफ का माँसल भाग बनाती हैं। इन पेशियों से कूल्हे की समीपीकरण गति होती है। इस क्रिया में एक छोटी बाहर की ओर स्थित ग्रेसिलिस पेशी (Gracilis) सहायक होती है। घुड़सवारी करने वाले व्यक्तियों मे ये पेशियाँ अच्छी तरह विकसित रहती हैं, क्योकि घुड़सवार कूल्हों का समीपीकरण करके घुटनों के द्वारा पकड़ बनाये रखता है।

(ब) टाँग की पेशियाँ (The muscles of the Leg)

टांग मे कुछ बडी पेशियाँ होती हैं जो पांव को घुमाती हैं। टांग की मुख्य पेशियाँ है

- गैस्ट्रॉक्नीमिअस एवं सोलीअॅस
- टिबिएँलिस एन्टीरिअर एवं उँगलियों की मुड़ाव और प्रसरण पेशियाँ।
- **गैस्ट्रॉक्नीमिअस (Gastrocnemius) एवं सोलीअँस (Soleus)** मिलकर पिण्डली का मांसल भाग बनाती हैं, गैस्ट्रॉक्नीमिअस पीछे की ओर सोलीअॅस उसके आगे की ओर स्थित रहती है। गैस्ट्रॉक्नीमिअस दो सिरों के द्वारा फीमर से उत्पन्न होती है तथा नीचे की ओर पॉप्लिअल स्थान की किनारे बनाती है, जैसे कि हैमस्ट्रीन्ग्स घुटने के ऊपर की ओर इस जगह की किनारें बनाती है। सोलिअँस टिबिआ से उत्पन्न होती है और घुटने के जोड़ को क्रॉस नहीं करती है और इसलिये घुटने की गति को प्रभावित नहीं करती।
- **टिबिएलिस (Tibialis) :** टाँग के सामने टिबिआ की किनारे के एकदम बाहर की ओर स्थित रहती है, जहाँ इसे देखा जा सकता है और जब पाँव की उंगलियाँ तथा गोल भाग जमीन से ऊपर उठाया जाता है तब इसे अनुभव किया जा सकता है। पहाड़ों पर चढ़ने के अनभ्यस्त लोग जब पहाड़ पर चढ़ते हैं तब यही पेशी असामान्य व्यायाम के कारण जकड़ जाती है।

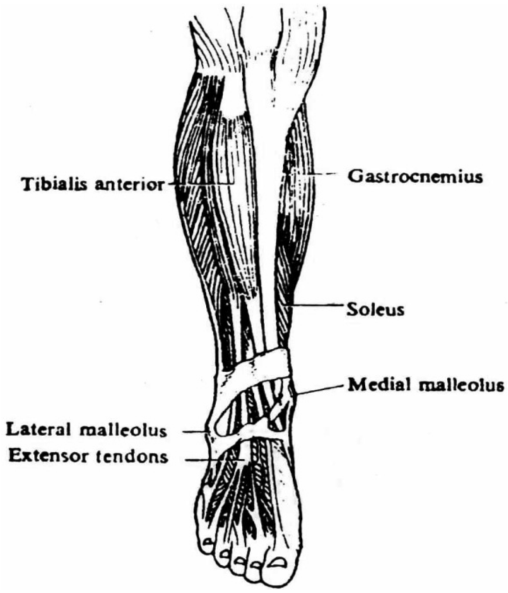

चित्र - टांग और पाँव के सामने की पेशियाँ

(स) पाँव की पेशियाँ (The muscles of the Food)

हाथ के समान पाँव में भी कुछ पेशियाँ रहती हैं। पाँव को घुमाने वाली मुख्य पेशियाँ ज्यादातर टांग मे ही स्थित रहती हैं। उँगलियों की प्रसरण पेशियों के टेन्डॅन्स पाँव की पृष्ठ सतह को क्रॉस करते हैं, पाँव के अगठे की अलग पेशी और टेन्डॅन रहता है। उँगलियों की मुड़ाव पेशियों (Flexors) के टेन्डॅन्स तलुए को क्रॉस करते हैं और मजबूत रहते हैं, तथा साथ ही 'पाँव की आर्च' ' को सहारा देने में महत्वपूर्ण मदद करते हैं। पाँव की उँगलियों के लिये एक उभय मुड़ाव पेशी ओर अंगूठे के लिये अलग मुड़ाव पेशी रहती है। इसके अतिरिक्त उँगलियों की छोटी मुड़ाव पेशी तलुए से क्रॉस होकर कैल्केनीअम से फैलेजेन्स तक जाती है, तथा आर्च को भी सहारा देती है। मेटाटारसल अस्थियों के बीच स्थित छोटी-छोटी इन्टररॉसिअँस पेशियाँ उँगलियों का दूरीकरण एवं समीपीकरण करती है, लेकिन उनका उपयोग कम होता है और इसलिये ये अल्पविकसित रहती हैं ।

1.9 जोड़ या सन्धियाँ (Joint or Articulations)

जहाँ कहीं दो या दो से अधिक अस्थियाँ मिलकर एक दूसरे से जुड़ती हैं वहाँ जोड़ या सन्धियाँ बनती हैं। जोडों को तीन वर्गो में विभाजित किया जाता है

1. तन्तुमय या अगतिशील जोड़
2. उपास्थिमय या मामूली गतिशील जोड़
3. साइनोविअल या पूर्णत. गतिशील जोड़

अस्थियाँ आपस में लिगॅमेन्ट्स (अस्थि बन्धनों) द्वारा जुडी रहती हैं। ये तन्तुमय ऊतक की मजबूत डोरियाँ (Cords) हैं जो एक अस्थि से दूसरी अस्थि तक फैली होती हैं और पेरिऑस्टिअँम से मजबूती से जुडी रहती हैं। ये लिगॅमेन्ट्स थोडे तन सकते हैं लेकिन अलचीले होते हैं। लिगॅमेन्ट्स न सिर्फ गाते होने देते हैं बल्कि अपनी मजबूती, अलचीलेपन और अच्छी संवेदक स्नायु संपूर्ति के कारण ये गति को सीमित भी करते हैं और इस प्रकार ये अत्यधिक तनाव से जोडों की सुरक्षा भी करते हैं।

1.9.1 जोड़ों के प्रकार (Types of Joints)

यहाँ पर पूर्व में उल्लेखित तीन प्रकार के जोड़ों. का संक्षिप्त वर्णन दिया जा रहा है. _

1. **तन्तुमय जोड़ (Fibrous Joint) -** यह जोड़ आरी के समान किनारों वाली दो अस्थियों का बना होता है और ये किनारे एक दूसरे मे फिट हो जाते हैं। पहले ये अस्थियाँ तन्तुमय ऊतक की रेखा' द्वारा जुड़ती हैं, लेकिन अन्तत. इसमें अस्थिविकास हो जाता है और अस्थि से अस्थि जुडकर स्थायी जोड़ बन जाता है, जो किसी भी प्रकार की हलचल नही होने देता है। ये जोड़ खोपडी में पाये जाते हैं तथा इन्हें सन्धि रेखाएँ (Sutures) कहते हैं।

चित्र - तंतुमय जोड़ का रेखाचित्र ।

2. **उपास्थिमय जोड़ (Cartilagenous Joint)**

   उपास्थिमय जोड़ वहीं -होता है जहाँ दो अस्थियॉ हाएलिन कार्टिलेज से ढँकी रहता हैं और फाइब्रोकार्टिलेज की गद्दी तथा लिगॅमेन्ट्स से जुडी रहती हैं। लिगॅमेन्ट्स जोड़ की दोनो अस्थियों पर अधूरे चढ़े रहते हैं। उनमें थोडी हलचल सम्भव है क्योकि उपास्थि की गद्दी दब सकती है। वर्टीब्री के मुख्य भागों, मेन्यूबिअग के बीटा और स्टर्नम के मुख्य भाग मे उपास्थिमय जोड़ पाए जाते हैं।

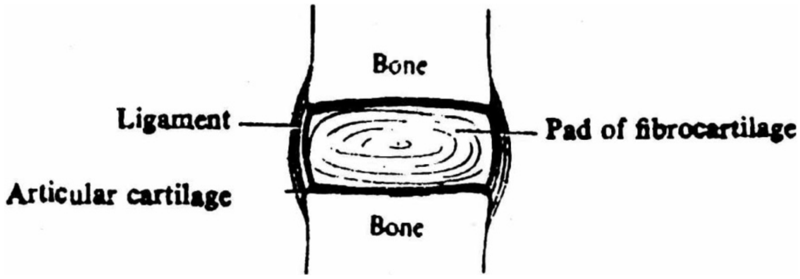

चित्र-उपास्थितमय जोड़ (मामूली गतिशील) के काट का रेखाचित्र।

3. **साइनोबिअल जोड़ (Synovial Joint)**

   साइनोविअल जोड़ उन दो या दो से अधिक अस्थियों मे मिलने है जो कि आर्टिक्यूलर (जोड़ बनाने वाली उपास्थि) से ढँकें रहते हैं। इसमे जोड़ गुहिका होतो है जिसमें साइनोविअल द्रव भरा रहता है जो रक्तवाहिका विहीन आर्टिक्यूलर कार्टिलेज को पोषण प्रदान करती है। अस्थियॉ कई लिगॅमेन्ट्स से जुडी रहती हैं जिसके कारण कुछ साइनोविअल जोड़ में हलचल बहु त ही सीमित हो सकती है।

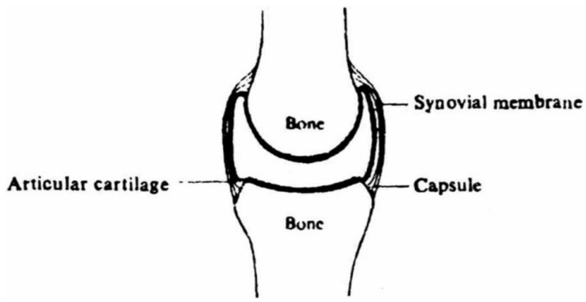

चित्र-साइनोबिअल (पूर्णत: गतिशील) जोड़ की काट का रेखाचित्र

साइनोविअल जोड़ों के प्रकार (Types of Synovial Joints)

साइनोविअल जोडों को होने वाली हलचल के प्रकार के अनुसार विभिन्न वर्गो मे विभाजित किया जा सकता है

- **हिन्ज जोड़ (Hings Joints) -** ये एक ही दिशा मे हलचल होने देते हैं, उदाहरणार्थ, कोहनी के जोड़।

- **घुमावदार जोड़ (Pivot Joints) -** इनमे एक अस्थि दूसरी अस्थि के ऊपर घूमती है. उदाहरणार्थ कोहनी के जोड़ में रेडिअस अल्ना के ऊपर, तथा "एटलस" "एक्सिस" पर घूमता है, जो क्रमश: हाथ एवं सिर की घुमावदार हलचल करते हैं।
- **कॉन्डाइलर जोड़ (Condylar Joints) -** इसमे दो जोडी जुड़ने वाली सतहें एक ही दिशा मे हलचल करती हैं। चाहे वे सतहें एक या अलग के केप्सूल मे हो। घुटने का जोड़ इसका अच्छा उदाहरण है।
- **बॉल-एवं-सॉकेट जोड़ (Ball and socket Joints) -** इसमे अर्द्धगोलाकार सिर कप के आकार के सॉकेट में "फिट" होता है, उदाहरणार्थ, कन्धे एवं कूल्हे का जोड़।
- **प्लेन जोड़ (Plane Joints) -** इसमें अस्थियाँ एक दूसरे के ऊपर फिसलती हैं । फिसलने वाली (Gliding). कोणीय (Angular) और घुमावदार (Angular)। ये हलचलें आपस मे मिलकर किसी भी जोड़ मे कई तरह की हलचलें पैदा कर सकती हैं।

1.9.2 शरीर के मुख्य जोड़

(अ) सिर के जोड़ (The Joins of the Head)

- **टेम्पोरोमेंडिबुलर जोड़ (Tempotomandibular Joint)** - टेम्पोरल अस्थि और मेंडीबल के सिर के बीच होता है। सिर का यही एक-मात्र गतिशील जोड़ है। इसकी हलचल तीन दिशाओं में हो सकती है। ऊपर और नीचे, पीछे और आगे तथा अगल-बगल में।

(ब) धड के जोड़ (The Joints of the Trunk)

सभी वर्टिब्री में, दूसरे सर्वाइकल से लेकर सेक्रम तक, जोड़ होते हैं। वर्टिब्री के मुख्य भागों के बीच उपास्थिमय जोड़ होते हैं ओर वर्टिब्रल आर्चेस के बीच साइनोविअल जोड़ पाए जाते हैं। कई जोडी के कारण रीढ में काफी हलचल हो सकती है। ये जोड़ सैक्रम तक सहारा देने के लिए होते हैं। अन्य लिगॅमेन्ट्स वर्टिब्रल आर्चेस के बीच से गुजरते हैं।

पसलियों और वर्टिब्री के बीच कॉस्टोवर्टिब्रल जोड़ होते हैं जो फिसलने वाली हलचल करते हैं। ऐसी ही हलचल स्टर्नोकॉस्टल जोड़ में होती है। धड के अन्य जोड़ : स्टर्नोक्लेविक्यूलर एवं एक्रोमिओ क्लेविक्यूलर है।

(स) कन्धे का जोड़ (The Joint of the Shoulder)

बॉल-एवं-सॉकेट प्रकार का जोड़ है तथा शरीर के सभी जोडो की अपेक्षा अधिक मुक्त गति होने देता है। यह छोटी उथली ग्लीनॉइड गुहिका मे ह्यूमरस के सिर के फिट होने से बनता है। जोड़ बनाने वाली सतहें जोड़ बनाने वाली उपास्थियों के द्वारा ढँकी रहती हैं।

(द) कोहनी का जोड़ (Elbow Joint)

यह जोड़ जटिल है क्योकि इसमें एक ही गुहिका में ह्यूमरस, अलना व रेडिअँस के बीच हिन्ज जोड़ और रेडिअॅस व अल्ना के बीच पाइवॅट जोड़ रहता है। इसमें तीनों अस्थियों के बीच कैप्स्यूलर लिगॅमेन्ट्स और आजू-बाजू लेटरल लिगॅमेन्ट्स भी रहते हैं। एन्यूलर

लिगॅमेन्ट्स नामक एक गोलाकार लिगॅमेन्ट्स भी रेडिअस के सिर के आसपास स्थित रहता है। जो इसे अल्ना की रेडिअल खाँच में रखता है। रेडिअस का निचला सिरा भी अल्ना के साथ पॉइवेट जोड़ बनाता है।

(य) कलाई का जोड़ (Wrist Joint)

रेडिअस के निचले सिरे और स्केफॉइड, ल्यूनेट और ट्राइक्वीट्रल अस्थियों से मिलकर बनता है। कारपल अस्थियों के जोडों के साथ मिलकर इसमें मुड़ाव, प्रसरण, समीपीकरण (अल्ना का विचनल- Deviation) दूरीकरण (रेडिअस का विचलन) और चक्राकार हलचलें होती है।

(र) मेटाकारपोफैलेन्जिअल का जोड़ (Metacarpophalangeal Joint)

यह भी कलाई के जोड़ की तरह हलचलें कर सकता है। लेकिन इन्टर-फैलेन्जिअल जोड़ हिन्ज जोड़ होते हैं जो सिर्फ मुड़ाव और प्रसरण की हलचल होने देते हैं।

(ल) सैक्रोइलिअक जोड़ (Sacroliac pubis)

यह साइनोविअल जोड़ है जो धड के मुड़ाव और प्रसरण के समय कुछ चक्रकार हलचल होने देता है।

(व) कूल्हे का जोड़ (Hip Joint)

यह बॉल-एवं-सॉकेट प्रकार का जोड़ है जो कप के आकार के गहरे एसिटेब्यूलम में फीमर के सिर के फिट होने से बनता है। जोड़ बनाने वाली सतहें जोड़ बनाने वाली उपास्थि से ढँकी रहती है।

(क) घुटने का जोड़ (Knee Joint)

यह शरीर का सबसे बडा जोड़ है। यह मिश्रित जोड़ है। एक कॉन्डाइलर जोड़ फीमर के कॉन्डाइल और टीबिआ को जोड़ता है। एक सीधा जोड़ जो पटेला और फीमर को जोड़ता है। जोड़ पर एक तन्तुमय केप्स्यूल होता है जिसमे सामने की ओर पटेला प्रवेश करती है और साइनोविअल झिल्ली का अम्लर उसमें रहता है।

(ख) ऊपरी टिबिओफिबुलर जोड़ (Upper Tibiofubular Joint)

यह साइनोविअल प्रकार का सीधा जोड़ है जो कुछ फिसलने वाली हलचल कर सकता है। अस्थियों के निचले सिरे पर टखने की हलचलों के दौरान फिबुला में कुछ घुमावदार हलचल भी हो सकती है।

(ग) टखने का जोड़ (Ankle Joint)

एक हिन्ज जोड़ है जो टिबिआ, फिबुला एवं टैलस के बीच बनता है। इसकी गति मुड़ाव एवं प्रसरण है, लेकिन साधारणत: इन्हें डॉसिलेक्शॅन (पाँव को ऊपर की और उठाना) तथा प्लान्टर लेक्शॅन (ऐडी को ऊपर उठाना) कहते हे।

विभिन्न टार्सल अस्थियों के बीच तथा टारसस एवं मेटाटारसस अस्थ्यियों के बीच फिसलने वाले जोड़ होते हैं और इनकी हलचल सीमित होती है। मेटाटारसो फैलेन्जिअल जोड़ इन्टर फैलेन्जिअल जोड़ मे भी, जोडों की तरह हलचलें हो सकती हैं।

1.10 सारांश

- इस ईकाई में हमने पढा है कि :
- कोशिका को जीवन की रचनात्मक, क्रियात्मक एवं आनुवांशिक ईकाई कहते हैं।
- कोशिका के अन्दर जीवित पदार्थ जीवद्रव्य उपस्थित होता हे। जिसमें कोशिका के सभी कोशिकांग पाये जाते हैं।
- कोशिकाओं के समूह को ऊत्तक कहते हैं जो विभिन्न प्रकार के होते हैं तथा भिन्न-भिन्न कार्य करता हूँ।
- विभिन्न प्रकार के ऊतक मिलकर अंगों का तथा विभिन्न अंग मिलकर अग तंत्रों का निर्माण करते हैं।
- हमारे शरीर में कई प्रकार के अग सम्मिलित रूप से कार्य करते हैं।
- अध्यावरणी तंत्र मे त्वचा सम्मिलित है जो हमारे शरीर की विभिन्न प्रकार से रक्षा करती है।
- कंकाल तंत्र मनुष्य के शरीर मे अंतः कंकाल उपस्थित होता है जो शरीर को सहारा प्रदान करता है तथा आकार बनाने मे सहायता करता है इसमें उपस्थित विभिन्न जोड़ शरीर को गतिशीलता प्रदान करते है।
- पेशीय तंत्र - विभिन्न प्रकार की पेशियाँ अलग-अलग प्रकार से कार्य कर शरीर को सुचारू रूप से चलाने में सहायता करती है।

1.11 प्रश्न

1 कोशिका को परिभाषित कीजिये?
2 कोशिका मे पाये जाने वाले विभिन्न कोशिकांगों के नाम तथा उनके कार्य बताइये '
3 ऊतक क्या है, ऊत्तक का वर्गीकरण संक्षिप्त मे समझाइये?
4 संयोजी ऊतक को संयोजी ऊतक क्यों कहा जाता है
5 संयोजी ऊतक मे कितने प्रकार के तन्तु पाये जाते हैं? उनके बारे मे संक्षिप्त में समझाइये '
6 तंत्रिका ऊतक का चित्र बनाकर वर्णन कीजिये?
7 त्वचा की सरचना का चित्र बनाकर विस्तार से समझाइये।
8 त्वचा के कार्य बताइये।
9 कंकाल कितने प्रकार के होते है? संक्षिप्त मे कंकाल के कार्य बताईये।
10 अस्थियों मे जोड़ क्यों है, यह कितने प्रकार के होते है
11 उपास्थिमय जोड़ को चित्र बनाकर समझाइये।
12 साइनोविअल जोडों के प्रकार बताईये।
13 पेशियाँ क्या होती है? इनकी विशेषतायें बताइये।
14 आरेखित व रेखित पेशी मे अन्तर बताइये।

इकाई-2 शारीरिक तन्त्र

इकाई की रूपरेखा

2.0 प्रस्तावना

2.1 उद्देश्य

2.2 शरीर के तंत्र एवं अंग

2.3 संचरण तंत्र

2.3.1 रक्त : संरचना तथा कार्य

2.3.2 हृदय : संरचना तथा कार्य

2.3.3 रक्त वाहिकाएं. धमनियाँ एवं शिराएं

2.4 श्वसन तंत्र'

2.4.1 अंग एवं कार्य

2.4.2 गैसों का विनिमय

2.4.3 श्वसन की क्रियाविधि

2.5 सारांश

2.0 प्रश्न

2.0 प्रस्तावना

मनुष्य का शरीर विकसित बहुकोशिकीय जीव का एक जटिल उदाहरण है जो कोशिकाओं का बना होता है ये विशिष्ट रूप से विकसित होकर ऊतक बनाती हैं। ऊतक सम्मिलित रूप से अग बनाते हैं जो विशिष्ट कार्य करते हैं। अगों का समूह तंत्र बनाता है जो शरीर का एक मुख्य कार्य करता है। जैसे -पाचन तंत्र, भोज्य पदार्थ को पचाकर हमारे शरीर को ऊर्जा प्रदान करता है। इस प्रकार हमारे शरीर की सरचना एवं कार्यप्रणाली में विभिन्न तंत्रो का सम्मिलित योगदान है। प्रारम्भ मे शरीर के विभिन्न तंत्रों का उल्लेख करते हुए, इस इकाई में संचरण तंत्र एवं श्वसन तंत्र को विस्तार से वर्णित किया गया है।

रक्त परिसंचरण तंत्र शरीर का परिवहन तंत्र है। जिसके द्वारा आहार, ऑक्सीजन पानी एवं अन्य सभी आवश्यक पदार्थ शरीर के विभिन्न भागों में पहुँचते हैं और वहाँ से अपशिष्ट पदार्थ एकत्रित कर शरीर से बाहर निकाले जाते हैं। रक्त परिसंचरण तंत्र मे हृदय तथा रक्त वाहिनियाँ सम्मिलित होती हैं।

श्वसन तंत्र से जीवित कोशिकाओं के लिये ऑक्सीजन की निरन्तर पूर्ति होती है। ऑक्सीजन वायु मे उपस्थित होती है जहाँ से इसे हमारे सुविकसित श्वसनीय तंत्र द्वारा ग्रहण कर फुप्फुसों में पहुँचाया जाता है। जिसका उपयोग शरीर के लिये कर लिया जाता है तथा उत्पन्न कार्बन-डाई-ऑक्साइड को शरीर से बाहर निकाल दिया जाता है।

2.1 उद्देश्य

इस ईकाई को पढ़कर प्रसूति विज्ञान सहायिका निम्न के विषय मे जानकारी प्राप्त कर सकेगी -

1. हमारे शरीर में कौन-कौन. से तंत्र उपस्थित हैं?
2. इन विभिन्न तंत्रों का कार्य क्या है? -
3. रक्त की संरचना के बारे में समझ सकेंगी ।
4. विभिन्न प्रकार के रक्त समूह के बारे में जानकारी प्राप्त कर पायेंगी।
5. RH -कारक के बारे में जान पायेगी।
6. हृदय की सरचना तथा उनके कार्यो के बारे में जान पायेंगी।
7. धमनियों तथा शिराओं के बारे मे जान पायेगी।
8. श्वसन तंत्र से सम्बन्धित अगों के बारे मे जानकारी प्राप्त कर सकेगी।
9. मानव शरीर में गैसों का आदान-प्रदान किस प्रकार होता है?

2.2 शरीर के तंत्र एवं अंग

अस्थि तंत्र :

कई अस्थियों का बना होता है, जो सख्त, आधार देने वाला गतिशील ढाँचा बनाता है। हलचल सिर्फ जोडों या संधियों पर ही होती है। जहाँ दो या दो से अधिक अस्थियाँ मिलती हैं। लेकिन अस्थिमय ढाँचे में स्वय में हलचल करने की कोई शक्ति नही रहती हैं।

पेशीय तंत्र

अनगिनत पेशियों का बना होता है जो अस्थियों से जुडी रहती हैं और उन्हें हिला सकती हैं। पेशियाँ शरीर का मांसल भाग बनाती हैं और सभी प्रकार की गति एवं हलचल अर्थात् एक स्थान से दूसरे स्थान तक चलना-फिरना, वस्तुओं को जकड़ने, पकड़ने एवं उन तक पहुँचने के लिए तथा सिर, आँखों व मुँह को घुमाने के लिये या झुकने, बैठने तथा खडे होने के लिये सहायक होती हैं। इसी कारण, अस्थि, जोड़ एवं पेशीय तंत्र को मिलाकर गति-तंत्र भी कहते हैं।

रक्त परिसंचरण तंत्र

शरीर के प्रत्येक अग का पोषण करता है। इसके अन्तर्गत रक्त, हृदय एवं रक्तवाहिकाएँ आती हैं। रक्त, एक अंग से दूसरे अग तक आहार, ऑक्सीजन व्यर्थ-पदार्थ एवं अन्य आवश्यक पदार्थ वहन करता है। हृदय, रक्त को पम्प करता है ताकि शरीर के सभी अगों में रक्त पहुँच सके। रक्तवाहिकाओं के द्वारा रक्त परिसंचरित होता है। रक्तवाहिकाएँ दो प्रकार की होती हैं : धमनियाँ (Arteries) जो हृदय से ऊतकों तक रक्त ले जाती हैं, और शिराएँ (Veins) जो ऊतकों से हृदय तक रक्त लाती हैं।

श्वसन तंत्र :

यह शरीर के लिए प्राण वायु-ऑक्सीजन की पूर्ति करता है। इस तंत्र के मुख्य अंग फुप्फुस (फेफड़े) हैं, जहां पर गैसों का विनिमय होता है।

पाचन तंत्र

मुख्य रूप से आहार-मार्ग है जिसमें भोज्य-पदार्थो पर पाचक रसों की क्रिया होती है, पचने योग्य पदार्थ साधारण पदार्थ मे परिवर्तित होते हैं और अवशोषित हो जाते हैं। अपाच्य अवशेषी पदार्थ बाहर उत्सर्जित होते हैं।

अन्त:स्त्रावी ग्रन्थियां :

विशिष्ट कोशिकाओं की बनी होती है। जो रक्त से कुछ पदार्थ ग्रहण करने में सक्षम रहती हैं और इन पदार्थो से नये पदार्थ बनाती हैं जो शरीर के अन्य अंगों के विभिन्न कार्यो पर नियंत्रण रखते हैं। इन ग्रन्थियों द्वारा जो पदार्थ बनते हैं उन्हें हॉर्मोन्स कहा जाता है, ये सीधे रक्त में स्त्रावित होते हैं, और अगों के कार्य को उत्तेजित करते हैं।

मूत्रीय तंत्र :

शरीर का मुख्य उत्सर्जन तंत्र है। मूत्र गुर्दों में बनता है और मूत्र-वाहिकाओं (Ureters) द्वारा मूत्राशय में पहुँचता है, जहाँ यह संचित होता रहता है। मूत्र का उत्सर्जन, मूत्र त्याग की क्रिया द्वारा होता है।

स्नायुविक तंत्र :

मनुष्य को अपने आस-पास के वातावरण के प्रति सचेत बनाता है और उस -वातावरण में होने वाले परिवर्तनों के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करने मे सहायता करता है। यह मस्तिष्क, स्पाइनल कार्ड (सुषुम्ना) और स्नायुओं (Nerves) का बना होता है, कुछ स्नायु ऊतकों के संदेश मस्तिष्क तक ले जाते हैं और कुछ स्नायु मस्तिष्क के संदेश ऊतकों तक ले जाते हैं।

प्रजनन तंत्र

लिंग कोशिकाएँ पैदा करता है, पुरूषों मे शुक्राणु और स्त्रियों में अण्डाणु बनते हैं जो मिलकर मानव प्रजाति का अस्तित्व बनाये रखते हैं ।

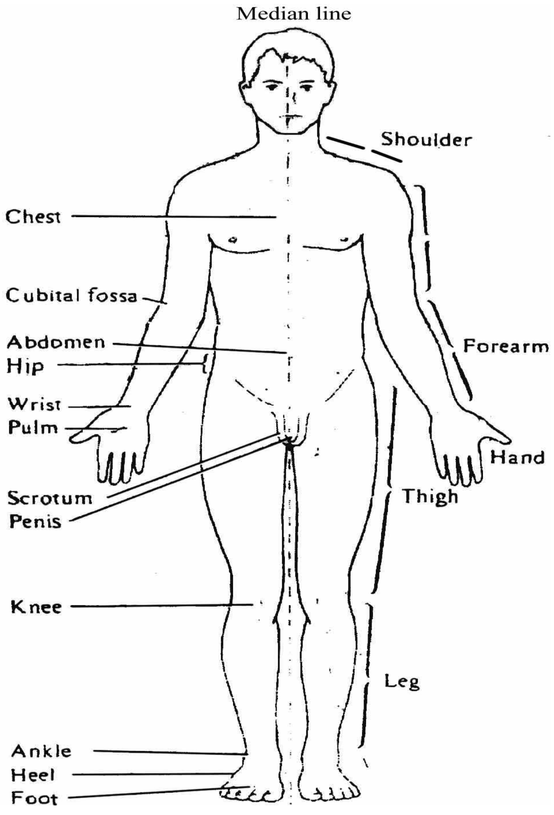

चित्र-शरीर के अंग. संरचनानुसार (सामने का भाग)

2.3 संचरण तंत्र (Circulatory System)

रक्त परिसंचरण तंत्र शरीर का परिवहन तंत्र है जिसके द्‌वारा आहार, ऑक्सीजन, पानी एवं अन्य सभी आवश्यक पदार्थ ऊतक, कोशिकाओं तक पहुँचते हैं और वहाँ के व्यर्थ पदार्थ ले जाये जाते हैं। यह तीन भागों से बना होता है

1. रक्त वह द्रव पदार्थ है जिसके द्‌वारा विभिन्न पदार्थ ऊतकों तक पहुँचते हैं और ऊतकों से वापस ले जाये जाते हैं।
2. हृदय वह संचालक शक्ति है जिसके द्‌वारा रक्त आगे बढता है।
3. रक्त वाहिकाएँ वे मार्ग हैं जिनके द्‌वारा रक्त ऊतकों तक और ऊतकों में से संचरित होता है, और पुन. हृदय मे आता है।

2.3.1 रक्त. संरचना एवं कार्य.

रक्त गाढा लाल, द्रव है। धमनियों मे यह चमकीला लाल होता है क्योकि यह ऑक्सीजिनेटेडं रहता है और शिराओं में यह गहरा बैंगनी-लाल होता है क्योकि उनमें यह डिऑक्सीजिनेटेड रहता है। रासायनिक प्रतिक्रिया मे यह मामूली क्षारीय होता है:, और जीवन के दौरान यह प्रतिक्रिया (pH) बहुत कम बदलती है. क्योकि शरीर की कोशिकाएँ सिर्फ तब तक ही जीवित रह सकती हैं जबकि प्रतिक्रिया सामान्य हो।

यह शरीर के वजन का लगभग बारहवां भाग होता है, इस प्रकार इसका औसत आयतन 4 से 5 लीटर बनता है।

- **रक्त की संरचना (Composition of the Blood)**

  रक्त देखने में केवल द्रव मालूम होता है लेकिन वास्तव मे यह द्रव और ठोस भाग का बना होता है। जब माइक्रोस्कोप द्‌वारा इसका परीक्षण किया जाता है तब इसमें कई छोटी-छोटी गोल कणिकाएँ देखी जा सकती है जिन्हें रक्ताणु या रक्त कोशिकाएँ कहते हैं। ये रक्त का ठोस भाग बनाती हैं, जबकि जिस तरल पदार्थ में ये तैरती रहती हैं वह द्रव भाग बनाता है, इस द्रव भाग को प्लाज्मा (Plasma) कहते हैं। रक्त के कुल आयतन का 45 प्रतिशत भाग रक्ताणु और 55 प्रतिशत भाग प्लाज्मा होता है।

(अ) प्लाज्मा (Plasma)

प्लाज्मा या रक्त का द्रव भाग साफ, हल्के पीले रंग का पानी जैसा द्रव है, जो साधारण फफोले मे पाये जाने वाले द्रव के समान होता है। प्लाज्मा में निम्नलिखित शामिल है :

– पानी, जो कुल प्लाज्मा का 90 प्रतिशत से भी अधिक भाग बनाता है ।

– खनिज लवण इनके अन्तर्गत सोडियम, पोटैशियम और कैल्शियम क्लोराइडस, फॉस्फेट्स एवं कार्बोनेट्स आते हैं । प्लाज्मा में मौजूद मुख्य लवण सोडियम क्लोराइड या सामान्य लवण

होता है। शरीर के ऊतकों को सामान्य कार्य करने के लिए विभिन्न लवणों का सही संतुलन आवश्यक है और इसमें ' कुल 0.9 प्रतिशत अकार्बनिक पदार्थ रहते है।

- प्लाज्मा, प्रोटीन्स, एल्ब्यूमिन, फाइब्रिनोजन, प्रोथ्रॉम्बिन एवं हेपॅरिन।
- भोज्य पदार्थ अपने सरल रूप में. ग्लूकोज, एमिनोएसिडस्, वसीय अम्ल एवं ग्लिसेरॉल और विटामिन्स।
- घोल में गैसें ऑक्सीजन, कार्बन-डाई-ऑक्साइड एवं नाईट्रोजन।
- ऊतकों से आने वाले व्यर्थ पदार्थ. यूरिया, यूरिक एसिड एवं क्रिएटिनिन।
- एन्टिबॉडीज एवं एन्टिटॉक्सिन्स जो बेक्टीरिअल संक्रमण से शरीर की सुरक्षा करते है।
- वाहिकाविहीन (अन्त:स्त्रावी) ग्रन्थियों से आने वाले हार्मोन्स।
- एन्जाइम्स।

प्लाज्मा में उपस्थित पानी उस द्रव को ताजा पानी प्रदान करता है जो शरीर की सभी कोशिकाओं को भिगोए रखता है। शरीर के वजन का 60 प्रतिशत भाग पानी होता है और 70 किलोग्राम वजन वाले मनुष्य में यह करीबन 46 लिटर होता है।

प्लाज्मा में उपस्थित लवण प्रोटोप्लाज्म के निर्माण के लिये आवश्यक होते हैं और ये शरीर में आवश्यकतानुसार अम्लों या क्षारों को निष्प्रभावित करने के लिये प्रतिरोधक पदार्थ (Buffer Substances) का कार्य करते हैं तथा रक्त की उपयुक्त रासायनिक प्रतिक्रिया बनाये रखते हैं। स्वस्थ व्यक्ति में रक्त सदैव मामूली क्षारीय होता है और इसका pH 7.4 होता है।

प्लाज्मा में मौजूद प्रोटीन्स रक्त को चिपचिपा बनाते हैं। प्लाज्मा के इस गुण को लसलसापन कहते हैं और यह कोशिकीय दीवारों से ऊतकों मे अधिक द्रव बहने से रोकने के लिए आवश्यक होता है। यदि प्रोटीन की कमी है, जैसे गुर्दे की बीमारी मे, जिसमे प्रोटीन एल्ब्यूमिन के रूप में मूत्र के साथ शरीर से निकलता रहता है तो प्लाज्मा का परासरण था रसाकर्षण दबाव (Osmotic Pressure) कम हो जाता है और ऊतकों में अधिक द्रव वला जाता है। ऊतकों में उपस्थित इस अधिक द्रव की स्थिति को इडीमा (Oedema) कहते हैं। रक्त दबाव बनाये रखने में रक्त का लसलसापन भी सहायता करता है। ऐसा माना जाता है कि एल्ब्यूमिन यकृत मे बनता है और ग्लोब्यूमिन उन सफेद रक्ताणु से जिन्हें लिम्फोसाइट्स कहते हैं, उत्पन्न होता है। फाइब्रिनोजन एवं प्रोथ्रॉम्बिन यकृत में बनते हैं और रक्त के थक्का बनने की क्रिया मे दोनों ही आवश्यक होते हैं।

ग्लूकोज, एमिनों एसिड्स, वसीय अम्ल एवं ग्लिसेरॉल के रूप में भोज्य-पदार्थ आहार नाल द्वारा रक्त में शोषित किये जाते हैं। ये कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन एवं वसा के चपापचय (Metabolism) के अन्तःपदार्थ हैं।

यूरिया, यूरिक एसिड एवं क्रिएटिनिन प्रोटीन चपापचय के व्यर्थ पदार्थ हैं। ये यकृत में बनते हैं और गुर्दों के द्वारा उत्सर्जित होने के लिये रक्त द्वारा ले जाये जाते हैं। एन्टिबॉडीज एवं एन्टिटॉक्सिन्स जटिल प्रोटीन पदार्थ हैं जो संक्रमण के विरूद्ध सुरक्षा प्रदान करते हैं और विषाक्त बेक्टीरिअल टॉक्सिन्स को निष्प्रभावित करते हैं।

एन्जाइम्स शरीर के द्वारा निर्मित रासायनिक पदार्थ हैं जो प्रतिक्रिया मे भाग लिये बिना अन्य पदार्थो मे रसायनिक परिवर्तन पैदा करते हैं।

(ब) रक्त कोशिकाएँ (The Blood Cells)

रक्त कोशिकाएँ तीन प्रकार की होती हैं लाल रक्ताणु. (एरिथ्रोसाइट्स), सफेद रक्ताणु (ल्यूकोसाइट्स) एवं प्लेट्लेट्स (थॉम्बोसाइट्स)।

(i) **लाल, रक्ताणु (The Red Cells) -** ये छोटी-छोटी डिस्क के आकार की कोशिकाएँ हैं जो दोनों तरफ अवतल (Concave) रहती हैं। ये बहुत बडी संख्या में होती हैं और रक्त में 5,000,000, प्रति क्यूबिक मि.लि. के हिसाब से विद्यमान रहती हैं। इनमें न्यूक्लिअस नहीं होता है, बल्कि एक विशिष्ट प्रोटीन रहता है जिसे हीमोग्लोबिन (Haemoglobin) कहते हैं। यह एक प्रकार का रंग होता है जो पीला रहता है ओर बहुत सारी पीली कोशिकाओं के संयुक्त प्रभाव से रक्त लाल दिखाई देता है। हीमोग्लोबिन में थोडा सा आयरन (लोहा) होता है. और आयरन का होना सामान्य स्वास्थ्य के लिये जरूरी है, हालांकि ऐसा कहा जाता है कि पूरे शरीर में लोहे की कुल मात्रा सिर्फ 2 इन्ची कील बनाने के लिये ही पर्याप्त होती है। हीमोग्लोबिन में ऑक्सीजन के प्रति अत्यधिक आकर्षण होता है। जैसे ही लाल रक्ताणु फुप्फुसों से गुजरते हैं, हीमोग्लोबिन वायु मे उपस्थित ऑक्सीजन से मिल जाता है (ऑक्सीहीमोग्लोबिन) चमकीले रंग का हो जाता है। इससे ऑक्सीजिनेटेड रक्त चमकीला लाल हो जाता है। जैसे ही लाल रक्ताणु ऊतकों से गुजरते हैं, रक्त से ऑक्सीजन निकल जाती है ओर हीमोग्लोबिन का रंग हलका हो जाता है (न्यूनीकृत हीमोग्लोबिन) जिससे रक्त बैंगनी लाल रग का हो जाता है। हीमोग्लोबिन को ग्राम्स प्रति 100 मि ली. के रूप में नापा जाता है। इसका सामान्य मान 14 से 16 ग्राम प्रति 100 मि .लि. है।

लाल रक्ताणुओं का कार्य फुप्फुसों से ऊतकों तक ऑक्सीजन लाना और थोडी कार्बन-डाई-ऑक्साइड वहाँ से वापस ले जाना है। यही इनका एकमात्र कार्य है. और यह इनमें उपस्थित हीमोग्लोबिन की मात्रा पर निर्भर रहता है। लाल रक्ताणुओं की संख्या में कमी आने के कारण या प्रत्येक कोशिका में हीमोग्लोबिन की मात्रा सामान्य से कम होने के कारण यदि हीमोग्लोबिन की मात्रा में कमी हो जाती है तो वह व्यक्ति एनीमिया से पीडित हो जायेगा। लाल रक्ताणुओं का निर्माण जालीदार अस्थि के लाल बोन मैरो मे होता है। लाल रक्ताणुओं के सामान्य निर्माण के लिए कई पदार्थ आवश्यक होते हैं। प्रोटीन प्रोटोप्लाज्म के निर्माण के लिये जरूरी है।

आयरन हीमोग्लोबिन के लिए आवश्यक है। बहुत कम आयरन उत्सर्जित होता है। जैसे ही लाल रक्ताणु टूटते हैं, आयरन संचित होकर पुन.; उपयोग में आ जाती है, लेकिन आयरन की कुछ मात्रा आहार में लेना जरूरी होता है। पुरूष को प्रतिदिन करीब 10 मिग्रा. आयरन की आवश्यकता होती है, जबकि स्त्री को 15 मिग्रा. प्रतिदिन, ताकि रजोधर्म के दौरान होने वाली कमी और गर्भावस्था, प्रसव एवं दुग्धक्षरण के दौरान होने वाली कमी को पूरा किया जा सके।

आयरनयुक्त भोज्य -पदार्थ लाल मांस, अण्डे की जर्दी, हरी सब्जियॉ, मटर, सेम, काटने के बाद काले पडने वाले फल (अमरूद, सेव) कुछ मसाले इत्यादि हैं।

विटामिन B_{12} (साइनोकोबालमिन) लाल रक्ताणुओं के निर्माण के लिये जरूरी है और यह समशीतोष्ण जलवायु में रहने वाले व्यक्तियों के आहार मे प्राय. पर्याप्त मात्रा मे होता है। यह छोटी ऑत से तब ही शोषित हो सकता है तब यह आमाशय द्वारा स्त्रावित इन्ट्रिन्सिक फैक्टेर से जुडा हुआ हो। इन दोनों पदार्थो को मिलाकर एन्टि-एनीमिक फैक्टॅर (या हीमोपॉइटिक फैक्टॅर) कहते हैं, जो यकृत में संचय होता है और आवश्यकतानुसार अस्थि मैरो में चला जाता है।

अन्य पदार्थ जो थोडी मात्रा मे ही क्यों न हों, मगर आवश्यक होते हैं । ये हैं, विटामिन C, फॉलिक एसिड (विटामिन B कॉम्पलेक्स का एक घटक), थाइरॉक्सिन हार्मोन तथा कीपर, मैंगनीज की थोडी मात्रा।

लाल रक्ताणु रक्तपरिसंचरण में करीब 120 दिन तक रहते है जिसके बाद ये स्पलीन और लिम्फ नोड्स में स्थित रेटिक्यूलोएन्डोथीलिअॅल तंत्र की कोशिकाओं द्वारा अन्तर्ग्रहित हो जाते हैं। लाल रक्ताणुओं का निर्माण और क्षयकरण प्राय: समान दर से होते हैं जिससे रक्ताणुओं की संख्या स्थिर रहती है।

(ii) **सफेद रक्ताणु** या ल्यूकोसाइट्स लाल रक्ताणुओं की अपेक्षा बडे होते हैं, इनका डाइमीटर करीब 10 mm होता है और इनकी संख्या कम रहती है। ये रक्त में 7,000 से 10,000 प्रति क्यूबिक मि मी. (mm) रहते हैं. हालांकि जब शरीर मे कोई सक्रमण होता है तब यह संख्या काफी बढकर 30000 प्रति क्यूबिक मिमी. तक पहुँच जाती है । ल्यूकोसाइटस की संख्या की इस वृद्धि को ल्यूकोसाइटोसिस कहते हैं। ल्यूकोसाइटस अथवा सफेद रक्ताणु तीन प्रकार के होते हैं

1. **पॉलिमॉर्फोन्यूक्लिअर ल्यूकोसाइट्स** को ग्रैन्यूलोसाइटस भी कहते हैं क्योंकि इसका साइटोप्लाजम ग्रैन्यूलर (कणमय) दिखता है। न्यूक्लिअस में धीरे-धीरे कई खण्ड (Lobes) बन जाते हैं। इसलिये यह नाम दिया गया है। (पालि = कई, मॉरफ = प्रकार) । सफेद रक्ताणु की कुल संख्या का करीब 75 प्रतिशत भाग ये कोशिकाएँ बनाती हैं। ये अस्थि के लाल मैरो में बनती हैं और करीब 21 दिन तक जीवित रहती हैं । ग्रैन्यूलोसाइटस को पुन: इनकी रंग सोखने की क्षमता (रंजकता- Staining) के गुणों के अनुसार न्यूट्रफिल्स इओजिनोफिल्स एवं बैसोफिल्स में वर्गीकृत किया जा सकता है।
2. **लिम्फोसाइट्स** कुल सफेद रक्ताणुओं की संख्या का करीब 20 प्रतिशत भाग बनाते हैं, ये लिम्फ नोड्स और लिम्फेटिक ऊतक में बनते हैं जो स्प्लीन, यकृत और अन्य अंगो मे रहते हैं।
3. **मोनोसाइट्स** कुछ सफेद रक्ताणुओं की संख्या का करीब 5 प्रतिशत भाग बनाते हैं । सभी सफेद रक्ताणुओं में ये सबसे बड़े होते हैं।

(A) (B) (C)

चित्र - सफ़ेद रक्ताणु (A) पॉलीमॉर्फोन्यूक्लिअर ल्यूकोसाइट (B) लिंफोसाइट (C) मोनोसाइट।

(iii) **प्लेट्लिट्स (Platelets)** प्लेटलिट्स या थ्रोम्बोसाइटस लाल रक्ताणुओं की अपेक्षा छोटेहोते हैं और अस्थि मज्जा में बनते हैं। इनकी संख्या रक्त में करीब 2,50,000/mm_3 होता है। ये रक्त का थक्का बनाने के लिये आवश्यक होते हैं।

- **रक्त के कार्य (Functions of Blood**)

रक्त के कार्य (उपयोग) निम्नलिखित हैं :-

1. ऊतकों तक आहार ले जाना ।
2. ऑक्सिहीमोग्लोबिन के रूप में ऊतकों तक ऑक्सीजन ले जाना।
3. ऊतकों तक पानी ले जाना।
4. व्यर्थ पदार्थो को उत्सर्जित करने वाले अग तक व्यर्थ पदार्थो को ले जाना ।
5. सफेद रक्ताणुओं और एन्टिबॉडीज के द्वारा बेक्टीरियल संक्रमण से प्रतिरोध करना।
6. ग्रन्थियों को उन पदार्थो की पूर्ति करना जिनसे वे अपना स्रावण बनाती हैं ।
7. वाहिकाविहीन ग्रंथियों के स्रावणों, तथा एन्जाइम्स का वितरण करना ।
8. सम्पूर्ण शरीर मे समान रूप से उष्मा वितरित करना, और इस प्रकार शरीर के तापक्रम का नियंत्रण करना ।
9. थक्का बनाकर रक्तस्त्राव को रोकना ।

- **रक्त समूह (Blood Groups)**

किसी एक व्यक्ति के रक्त को दूसरे व्यक्ति के रक्त के साथ मिश्रित करना हमेशा सुरक्षित नही है। यह तथ्य रक्ताधान की शुरूआत से स्पष्ट हुआ, जिससे आरम्भ मे कभी- कभी रोगी की मृत्यु भी हुई। ऐसा इस तथ्य के कारण हुआ था कि रक्त के चार मूलभूत समूह होते हैं। यदि भिन्न समूहों के रक्त को मिलाया गया तो लाल रक्ताणु आपस में चिपककर गुच्छे बना सकते हैं। इसे संयोजन कहते हैं। यह मारक है क्योकि लाल रक्ताणु के गुच्छे रक्तवाहिकाओं को अवरूद्ध करके रक्तपरिसंचरण को रोक देते हैं। इसके अलावा क्षतिग्रस्त लाल रक्ताणुओं से निकलने वाले वर्ण की अत्यधिक मात्रा को उत्सर्जित करने के कारण गुर्दे गम्भीर रूप से क्षतिग्रस्त हो जाते हैं।

जब किसी व्यक्ति को रक्ताधान की आवश्यकता होती है तब पहले उसका रक्त समूह ज्ञात करना और बाद मे उसी समूह के रक्तदाता को ढूंढना जरूरी है। लाल रक्ताणुओं में पाये जाने वाले एग्ल्यूटिनोजन्स (Aglutinogens) नामक पदार्थों की उपस्थिति या अनुपस्थिति के अनुसार रक्त समूहों का नाम दिया जाता है। दो एग्ल्यूटिनोजन्स होते हैं जिन्हें A और बी कहा जाता है। यदि A एग्ल्यूटिनोजन उपस्थित है तो रक्त समूह को A और B है तो

B समूह, यदि दोनों A और B हैं तो AB समूह तथा कोई भी एग्ल्यूटिनोजन नही हैं तो रक्त समूह को समूह कहा जाता है। रोगी का रक्त समूह ज्ञात करने और उसी समूह के व्यक्ति (रक्तदाता) से रक्त लेने के बाद, दाता के रक्त से लाल रक्ताणुओं का नमूना लेकर जिसे रक्त देना है उस रोगी के कुछ प्लाजा के साथ मिलाया जाता है (इस रोगी को अब रक्तप्राप्तकर्ता कहा जाता है)। ऐसा इसलिये किया जाता है क्योंकि प्लाज्मा में (एग्ल्यूटिनिन्स) नामक पदार्थ रहते हैं जौ असंगत रक्त समूहों का मिलान होने पर लाल रक्ताणुओं का संयोजन कर देते हैं। समूह (AB) के रक्त। वाला रोगी अन्य किसी भी समूह का रक्त प्राप्त करने में सक्षम रहेगा, अत: इस समूह को सर्वसमूह प्राप्तकर्ता (Universal recipient) कहते हैं। O समूह के लाल रक्ताणुओं में कोई एग्ल्यूटिनोजन्स नही रहते हैं और इसीलिए ये किसी भी प्रकार के प्लाजा मे उपस्थित एग्ल्यूटिनिन्स द्वारा संयोजित नहीं हो सकते। अत इस समूह का रक्त किसी भी रक्त समूह वाले रोगी को सुरक्षित रूप से दिया जा सकता है. तथा इसे सर्वसमूह दाता (Universal donor) कहते हैं। व्यवहारिक तौर पर किसी भी रोगी को रक्त देने के पूर्व की संगतता या अनुकूलता (Compatibility) की जाँच हमेशा बहु त ही सावधानी पूर्वक करनी चाहिए।

- **Rh - तत्व (Rh - Factor or Antigen)**

लैण्डस्टीनर एवं वीनर (Landsteiner and Weiner) ने रीसस बन्दर के (Rheus monkey) रूधिर मे एक विषेश प्रकार के प्रतिजन (Antigen) खोज की और उसे रीसस तत्व या Rh- Factor नाम दिया। इन्होंने पहले खरगोश के शरीर में इन बन्दरों के रूधिर को अन्त:क्षेपित (Inject)किया तो खरगोश के शरीर मे प्रतिरक्षी (Antibodies) उत्पन्न हो गये। खरगोश के इस रक्त का सीरम बनाया गया जो प्रतिरक्षी युक्त था। इस सीरम को मनुष्य में अन्त:क्षेपित कराया गया तो 85% मनुष्यों के रक्त में प्रतिजन पाया अर्थात 85% मनुष्यों के रूधिर मे गुच्छे बन गये। इस प्रकार भारतीयों में 97% में यह पाया गया। मनुष्य जिनका रक्त Rh सीरम से गुच्छित हो जाता है Rh धनात्मक (Rh)तथा जिनका गुच्छित नही होता Rh ऋणात्मक (Rh) होते हैं ।

Rh का महत्व

सामान्यत: मत मनुष्यों मे Rh. के प्रति प्राकृतिक प्रतिरक्षी का अभाव होता है किन्तु Rh मनुष्य को Rh.-रूधिर चढा दिया जाए तो प्राप्तकर्ता के प्लाज्मा मे धीरे-धीरे Rh प्रतिरक्षी बन जाते हैं। प्रतिरक्षियों की मात्रा कम होने पर तुरन्त तो प्राप्तकर्ता पर कोई विशेष प्रभाव नहीं होगा पर दुबारा यदि प्राप्तकर्ता को Rh. चढा दिया जायेगा तो उत्पन्न प्रतिरक्षियों के कारण दाता के लाल रूधिर कण चिपकने लगेंगे और प्राप्तकर्ता की मृत्यु हो सकती है। अत: रूधिर आदान-प्रदान के समय मत तत्व ज्ञात करने आवश्यक हैं।

अगर Rh. पुरूष की शादी Rh - स्त्री से हो जाए तो उनकी प्रथम सन्तान चाहे लड़का हो या लड़की सामान्य होंगे। किन्तु एक के पश्चात् सभी सन्तानों की भ्रूणीय अवस्था में माता

के गर्भाशय के अन्दर ही रूधिर का थक्का बनने के कारण मृत्यु हो जायेगी। इस रोग को **एरिथ्रोब्लास्टोसिस फीटेलिस (Erythroblastosis Foetalis**)कहते हैं।

2.3.2 हृदय की सरंचना एवं कार्य

(अ) हृदय की सामान्य रचना (General Structure of the Heart)

हृदय मनुष्य के वक्ष में स्थित एक खोखला, पेशीय अग है। यह रक्त परिसंचरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसका आकार शंकु जैसा होता है। हृदय का आकार व्यक्ति की बंद मुट्ठी के बराबर. वजन लगभग 280 ग्राम होता है।

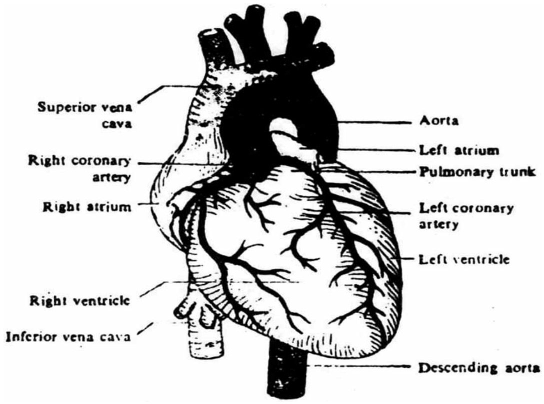

चित्र-हृदय का सामने का दृश्य ।

हृदय आधार से शिखर तक पेशीय पट द्वारा दो अलग-अलग भागों में विभाजित रहता है, जिनका प्रत्यक्ष में एक-दूसरे से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं रहता है। प्रत्येक भाग दो कोष्ठों में विभाजित होता है। परिकोष्ठ (Atrium), यह हृदय का छोटा ऊपरी कोष्ठ है। यह ग्राही कोष्ठ है जिसमें शिराओं द्वारा रक्त आता है। निलय (Ventricle) हृदय का बडा निचला कोष्ठ है। यह रक्त को बाहर निकालने वाला कोष्ठ है। जिसके द्वारा धमनियों मे रक्त प्रवाहित होता है। प्रत्येक परिकोष्ठ नीचे की ओर हृदय के उसी तरफ के निलय से एक छिद्र द्वारा सम्बन्धित रहते हैं। यह छिद्र एक वाल्व द्वारा सुरक्षित रहता है। जिसे एट्रिओवेन्ट्रिक्यूलर वाल्व कहते है। हृदय की रचना पेशी, **मायोकार्डिअम (Myocardium)** से होती है। जिसकी क्रिया से रक्त का परिसंचरण होता है। मायोकार्डियम की मोटाई भिन्न-भिन्न होती है, अर्थात् बायें निलय मे अधिक मोटी रहती है। क्योंकि इसे अधिक कार्य करना पडता है। दाहिने निलय मे पतली रहती है क्योकि इसे सिर्फ फुप्फुसों तक रक्त प्रवाहित करना होता है तथा यह परिकोष्ठों मे बहु त पतली रहती ह।

परिकोष्ठ और निलय मे चिकनी और चमकदार झिल्ली का अम्लर होता है। जिसे **एन्डोकार्डिअम (Endocardium**) कहते है। इसमे इन्डोथिलिअल कोशिकाओं की एक तह रहती है जो वाल्वस् और रक्तवाहिनियो के अम्लर तक फैली रहती है।

पेरिकार्डिअम (Pericardium) : हृदय और बडी रक्तवाहिनियों के मूल स्थानों को ढँकती है। इसकी दो तहें है। बाह्य तह या तन्तुमय पेरिकार्डिअम (Fibrous Pericardium) डायफ्राम तथा बडी रक्तवाहिकाओं की ऊपरी तह और स्टर्नम की पिछली सतह से अच्छी तरह जुडी रहती

है। इस कारण वह हृदय को सीने में ठीक स्थान पर रखती है। तन्तुमय होने के कारण यह हृदय को जरूरत से ज्यादा नही फैलने देती। भीतरी तह, सिरस पेरिकार्डिअम (Serous Pericardium) तन्तुमय पेरिकार्डिअम और हृदय का अम्लर बनाती है, इसलिए इसकी दो तहें होती है। अन्दरूनी तह को विसरल भाग या एपीकार्डिअम (Epicardium) कहते हैं।

(ब) हृदय के वाल्वस् (Valves of the Heart)

हृदय मे रक्त प्रवाह गलत दिशा मे होने रो रोकने के लिए कपाट या वाल्वस् होते हैं। हृदय मे बार मुख्य वाल्वस् है।

- **दायाँ एट्रिओ-वेन्ट्रिक्यूलर** (या ट्राइकस्पिड) वाल्व दाएँ परिकोष्ठ और दाएँ निलय के बीच होता है। इसमे तीन त्रिकोणोकार पल्ले या कस्पिड होते हैं।
- **बायाँ एट्रिओ-बेन्क्यूलर** वाल्व माइट्रल वाल भी कहलाता है। क्योकि उसमें केवल दो पल्ले होते हैं। उसकी रचना दाएँ एट्रिओं-वेन्ट्रिक्यूलर वाल्व की तरह ही होती है। यह बाएँ निलय के संकुचन के समय रक्त को बाएँ परिकोष्ठ मे वापस नहा जाने देता।
- **एऑर्टिक वाल्व (Aortic Valve)** मे तीन पल्ले होते हैं जो महाधमनी (Aorta) के बाएँ निलय मे प्रवेश द्वार को घेरते है। कस्पिड अर्ध-चन्द्रकार होते है। ये पल्ले अपनी मुडी हुई किनारों के द्वारा महाधमनी की दीवार से जुडे रहते हैं, जबकि सीधी किनार मुक्त रहती है।
- **फुप्फुसीय वाल्व (Pulmonary Valves)** रचना और क्रिया मे एऑर्टिक वाल्व के समान ही होता है, और यह फुप्फुसीय धमनी के मुख्य भाग को बन्द करके धमनी से दाहिने निलय मे रक्त के उलटे बहाव को रोकता है। मायोकर्डिअम से हृदय मे लौटने वाला रफा कॉरोनरी-साइनस से होता हुआ सीधा दाएँ परिकोष्ठ मे खाली होता है। कॉरोनरी साइनस का छिद्र एक्, पतले और अर्ध गोलाकार वाल्व से सुरक्षित रहता है। जिसे **कॉरोनरी** का वाल्व कहते हैं। यहाँ दाएँ परिकोष्ठ के संकुचन के समय रक्त को साइनस मे लौटने से रोकता है।

(स) हृदय को रक्तापूर्ति (Blood Supply of Heart)

हृदय को रक्त की पूर्ति दांई और बाई कॉरोनरी धमनियों से होती है जो कि महाधमनी की शाखाएँ है। हृदय पेशियो मे कई स्थानों पर इनका मिलन होता है लेकिन उनका अधिकांश रक्त मायोकार्डियम से शिराओं मे लौट जाता है, जो कि कॉरोनरी साइनस में खाली होती है।

(द) हृदय के कार्य (The Functions of the Heart)

हृदय एक पम्प है जिसका उद्देश्य रक्त को अन्दर खीचना और धमनियों के द्वारा शरीर के अन्य भागों मे पहुँचाना है, लेकिन हृदय का दायां और बायां भाग बिल्कुल एक दूसरे से पृथक रूप मे काय करते हैं।

रक्त शरीर के सभी अंगों से दो महाशिराओं के माध्यम से दाएँ परिकोष्ठ में जमा होता है। इन महाशिराओं को ऊपरी और निचली महाशिरायें कहते हैं। जब दायाँ परिकोष्ठ पूरी तरह भर जाता है तो वह संकुचित होता है। और रक्त दाएँ एट्रिओ-वेन्ट्रिक्यूलर वाल्व से होकर दाएँ निलय में भर जाता है। जो बाद मे संकुचित होता है और रक्त फुप्फुसीय वाल्व से होकर फुप्फुसीय मुख्य

भाग (Trunk) मे पहुँच जाता है। फुप्फुसीय धमनी का मुख्य भाग दो शाखाओं मे विभाजित होता है जिन्हें दाहिनी ओर बायी फुप्फसीय धमनियाँ कहते हैं। ये धमनियाँ फुप्फुसों तक रक्त चार फुप्फसीय शिराओं के द्वारा एकत्र किया जाता है। ये शिराएँ बाएँ परिकोष्ठ में खाली होती हैं। बाया परिकोष्ठ दाएँ परिकोष्ठ के साथ संकुचित होता है और रक्त बाएँ एट्रिओ-वेन्ट्रिक्यूलर वाल्व से होकर बाएँ निलय में 'पहुँच जाता है। यह निलय दाएँ निलय के साथ संकुचित होता है और रक्त को महाधमनी (Aorta) जो कि शरीर की प्रमुख धमनी है, मे भेजता है।

हृदय आजीवन सत्तर से अस्सी बार प्रति मिनट के मान से धड़कता है, हालांकि उसकी गति, आयु, भावावेश और व्यायाम से प्रभावित होती है। प्रत्येक धडकन गतिविधियों का एक चक्र हे जिसमें 0.8 सैकण्ड लगते हैं।

रक्त परिकोष्ठों में महाशिराओं के द्वारा एकत्र होता है। दोनों के भरते ही एक साथ संकुचित होता है और रक्त निलयों में पहुँच जाता है। परिकोष्ठों के संकुचन में 0.1 सैकण्ड का समय लगता है। निलय में रक्त के प्रविष्ट होने से जो दबाव पैदा होता है उससे एट्रिओ वेन्ट्रिक्यूलो वाल्व बन्द होते हैं और हृदय में पहली आवाज होती है जिसे हृदय के सिरे पर स्टेथॅस्कोप रखकर सुना जा सकता है, यह आवाज ' 'लब' ' शब्द की तरह होती है। निलयों के संकुचन में 0.3 सैकण्ड का समय लगता है। इसके दबाव से फुप्फुसीय और एऑर्टिक वाल्वस् खुल जाते हैं। रक्त महाधमनी और फुप्फुसीय मुख्य भाग में ढकेला जाता है और जब निलय शिथिल पड़ते हैं तब बडी रक्तवाहिकाओं का दबाव एऑर्टिक और फुप्फुसीय वाल्वों को बन्द कर देता है। इस समय हृदय की दूसरी आवाज होती है जिसे दूसरी दाहिनी पसली के पास सुना जा सकता है। यह आवाज 'उप' ' की होती है और तेज होती है। निलयों के संकुचन के समय परिकोष्ठ शिथिल हो जाते हैं। निलयों के संकुचन के बाद पूरा हृदय करीब 0.4 सैकण्ड के लिए आराम करता है। संकुचन को सिस्टॉल (Systole) और शिथिलन को डाइस्टॉल (Diastole) कहते हैं।

2.3.3 रक्त वाहिकाएँ (Blood Vessels)

रक्त वाहिकाएँ, खोखली संरचना हैं जो कि नालियों के समान होती हैं। यह रक्त को ऊतकों 'तक पहुंचाने तथा वापिस लाने का कार्य करती हैं। रक्त वाहिकाएं तीन प्रकार की होती हैं।

1 **धमनियां (Arteries) -** ये रक्त को हृदय से शरीर के विभिन्न भागों तक ले जाती हैं तथा धमनी तंत्र का निर्माण करती हैं। ये वितरण वाहिकाये है। छोटी धमनियाँ आर्टीरिओल्स अंततः विभाजित होकर कोशिकाएँ (Capillaries) बनाती हैं।

2 **शिरायें (Veins) -** ये रक्त को शरीर के विभिन्न भागो से हृदय में वापिस लाती हैं तथा शिरा तंत्र का निर्माण करती हैं। ये संग्रह वाहिकायें हैं। ये अंतत: वेक्टर (Venules) बनाती हैं।

3 **केशिकायें (Capilaries) -** ये पतली भित्ति की विनिमय वाहिकाएं हैं, धमनी तथा शिराओं को जोड़ने का कार्य करती है। कोशिकाएँ जुडकर छोटी-छोटी शिराएं या वेन्यूल्स (Venules) बनाती है अर्थात आर्टीरिओल्स को वेन्यूल्स से जोडती है।

- **रक्त वाहिनियों की संरचना -** रक्त वाहिनियों में तीन स्तर होते हैं : बाह्यस्तर, मध्य स्तर तथा अन्त:स्तर।,

2.4 श्वसन तंत्र (The Respiratory system)

सभी जीवित कोशिकाओं को चयापचय के लिये ऑक्सीजन की निरन्तर पूर्ति की आवश्यकता होती है। ऑक्सीजन वायु में बहती है, और श्वसनीय तंत्र इस प्रकार से बना होता है कि वायु को फुप्फुसों में लिया जा सके, जहाँ कि कुछ ऑक्सीजन शरीर में उपयोग के लिये ले ली जाती है और उसी समय कार्बन-डाई-ऑक्साइड व पानी की वाष्प छोड दी जाती है।

2.4.1 अंग एवं कार्य

श्वसन तंत्र के प्रमुख अंग हैं :

1. नासिका
2. ग्रसनी
3. कंठ (स्वर'यंत्र)
4. श्वास नाल
5. फुप्फुस (फेफड़े)
6. श्वास नलिकाएँ
7. ब्रॉन्किओल्स-
8. एल्बिओलर. नलिकाएँ व एंल्बिओलाइ

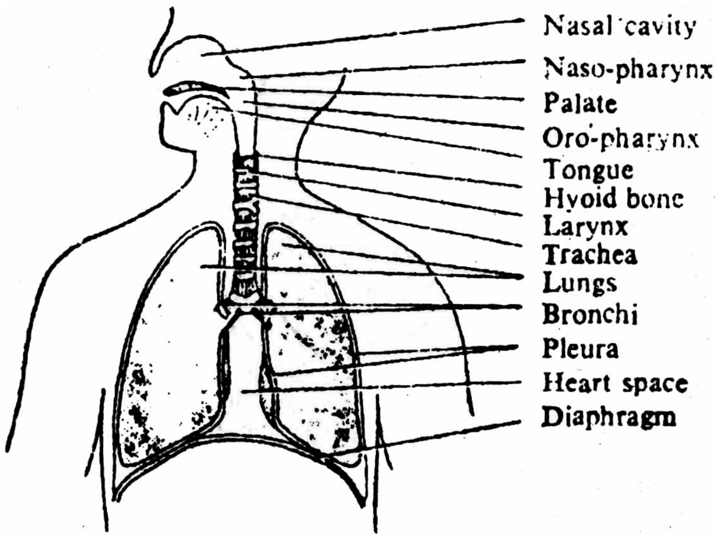

चित्र-श्वसनीय मार्ग का रेखाचित्र

- **नासिका (Nose)**

  बाह्य नासिका, नाक का दृश्य भाग है जो दो नासिका अस्थियों और उपास्थि द्वारा बनती है। यह दोनों तरफ से त्वचा द्वारा ढँकी रहती है तथा अन्दर की तरफ बाल रहते हैं जो बाह्य पदार्थों को नासिका के अन्दर जाने से रोकने में सहायता करते हैं। नासिका गुहिका

पट द्वारा विभक्त एक बडी गुहिका है। अग्र नासिका छिद्र-वे छिद्र हैं जो बाहर से अन्दर की ओर हवा ले जाते हैं तथा पश्च नासिका छिद्र पीछे की ओर स्थित रहते हैं एवं फैरिन्क्स तक हवा ले जाते हैं। पूरी नासिका गुहिका रोमयुक्त श्लेष्मिक झिल्ली से ढँकी रहती है। इसको काफी रक्त मिलता है क्योंकि इसमें बहुत ज्यादा केशिकाएं होती हैं। जैसे ही वायुमण्डलीय हवा एपिथीलिअम पर से गुजरती है वैसे ही वह गरम हो जाती है। श्लेष्मा वायु को नम करके धूल के कुछ कणों को रोक लेता है तथा रोम जैसी रचनाएँ श्लेष्मा को निगलने या खाँसी के साथ बाहर निकालने के लिए ग्रसनी मे पहुँचा देती है। नासिका के द्वारा ही गंध की पहचान होती है।

- **ग्रसनी (Pharynx)**

ग्रसनी का ऊपरी भाग स्फीनॉइड अस्थि के मुख्य भाग द्वारा बनता है तथा नीचे का भाग आहार नालिका के साथ मिला रहता है। ग्रसनी के पीछे की ओर ढीला -संयोजी ऊतक होता है जो इसे सर्वाइकल वर्टिब्री से अलग रखता है। ग्रसनी के सामने की दीवार अपूर्ण रहती है तथा ग्रसनी, नासिका मुँह एवं कंठ से सम्बन्धित रहती है । ग्रसनी तीन भागों में विभाजित रहती है। **नेजो-फैरिंक्स** जो नाक के पीछे रहते हैं। **ओरो-फैरिंक्स** जो मुँह के पीछे स्थित रहता है, तथा **लैरिन्जिअल फैरिन्क्स** जो कण्ठ के पीछे स्थित रहता है।

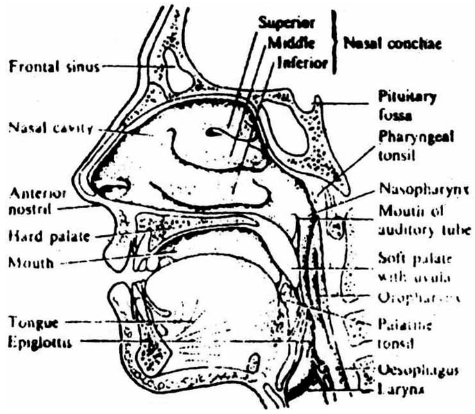

चित्र - नसिका मुँह. ग्रसनी एवं कंठ का सर्जिकल काट ।

ओरो-फैरिन्क्स (Naso pharynx) मुँह के पीछे नरम तातु की रेखा से नीचे स्थित रहता है, इसकी पार्श्वीय दीवारें नरम तालु के साथ मिली रहती है। इन दीवारों की तहों (Folds) के बीच (जिन्हें पैलेटों-ग्लॉसल आर्चेस कहते हैं) लिम्फॉइड ऊतक के उभार रहते हैं इन्हें पैलेटाइन टॉन्सिल्स कहा जाता है। ओरो-फैरिन्क्स श्वसनीय एवं आहार मार्ग दोनों का भी भाग है, लेकिन निगलने और श्वसन क्रिया क्षणिक रूप से बन्द हो जाती है क्योंकि नरम तालु के उठाने से नेजो-फैरिन्क्स का सम्बन्ध ओरो-फैरिन्क्स से नहीं रह जाना। ओरो-फैरिन्क्स स्ट्रेटिफाइड एपिथीलिअम द्वारा ढाका रहता है।

- **कंठ (स्वर-यंत्र) (The Larynx)**

कंठ ऊपर की ओर-फैरिंक्स एवं नीचे की ओर श्वास-नाल के साथ मिला रहता है। इसके ऊपर हाइऑएड अस्थि एवं जबान का निचला भाग रहता है। फैरिन्क्स के सामने गर्दन की

पेशियाँ तथा पीछे लेरिन्गो-फैरिन्क्स एवं सर्वाइकल वर्टिब्री रहते हैं। इसके दोनो तरफ थाइरॉइड ग्रन्थि के खण्ड रहते हैं। यह कई असमाकृति उपास्थियों का बना होता है जो आपस में लिगॅमेन्टस एवं झिल्लियों के द्वारा जुडी रहती हैं।

- **श्वास-नाल (Trachea)**

श्वास-नाल कंठ के नीचे से आरम्भ होकर गर्दन के सामने से वक्ष में जाता है। आहार नलिका श्वास-नाल के पीछे स्थित रहती है जो इसे थॉरेसिक वर्टिब्री के मुख्य भागों से पृथक रखती है। श्वास-नाल के दोनों तरफ फुप्फुस रहते हैं। जिनके ऊपर थाइरॉइड ग्रन्थि के खण्ड स्थित रहते हैं जो इसे थॉरेसिक वर्टिब्री के मुख्य भागों से पृथक रखती है। श्वास-नाल की दीवार अनेच्छिक पेशी एवं तन्तुमय ऊतक की बनी होती है और इसे हाएलिन उपास्थि के अपूर्ण छल्ले सहारा देते हैं। हाएलिन उपास्थि के छल्लों की यह अपूर्णता पीछे की ओर होती है जहाँ श्वास-नाल आहार नलिका के सम्पर्क मे रहता है। जब भोजन का कौर निगला जाता है जब आहार नलिका बिना किसी बाधा के फैलने में सक्षम रहती है, लेकिन उपास्थि वायुमार्ग का खुला रखती है।

- **फुप्फुस या फेफड़े (The Lungs)**

फुप्फुस दो बडे, स्पंजी अंग हैं जो हृदय एवं बडी रक्तवाहिकाओं के दोनो तरफ वक्ष में स्थित रहते हैं। ये गर्दन के निचले भाग से डायफ्राम तक फैले होते हैं तथा मोटे रूप से शंकु-आकार होते है जिनका शिखर ऊपर एवं आधार नीचे की ओर रहता हे। फुप्फुसों के सामने पसलियाँ, कॉस्टल उपास्थियाँ एवं इन्टरकॉस्टल पेशियाँ तथा पीछे की ओर पसलियाँ, इन्टरकॉस्टल पेशियाँ एवं थारेसिक वर्टिब्री की ट्रान्सबर्स प्रोसेसेस रहती हैं। फुप्फुसों के बीच मीडिरग्स्टाइनम (मध्यस्थानिका) रहता है. यह ऊतक का एक ब्लॉक है जो वक्षीय गुहिका के एक हिस्से को दूसरे से पृथक रखता है तथा पीछे की ओर वर्टिब्री से सामने की ओर स्टरनम् तक फैला रहता है! मीडिएस्टाइनम के अन्दर हृदय एवं बडी रक्तवाहिकाएँ, श्वास-नाल एवं आहार नलिका, थॉरेसिक डक्ट (वक्षीय नलिका) तथा थाइमस ग्रन्थि रहती है। फुप्फुस खण्डों मे विभाजित रहते हैं। बाये फुप्फुस मे दो खण्ड होते हैं जा तिरछी दरार द्वारा पृथक रहते हैं। ऊपरी खण्ड निचले खण्ड के ऊपर एवं सामने की ओर रहता है निचला खण्ड शंकु-आकार होता है। दाहिने फुप्फुस में तीन खण्ड रहते हैं। बाये निचले खण्ड के स मान ही इसका निचला खण्ड भी तिरछी दरार द्वारा पृथक रहता है। फुप्फुस का बाकी बचा हु आ भाग आडी दरार के द्वारा ऊपरी एवं मध्य खण्ड मे विभक्त रहता है। प्रत्येक खण्ड फिर छोटे-छोटे खण्डो मे विभाजित रहता है ब्रान्को- पल्मोनरी खण्ड कहा जाता है ओर जिनके अलग-अलग नाम हैं। ये खण्ड संयोजी ऊतक की दीवार द्वारा एक दूसरे से पृथक रहते हैं. और प्रत्येक मे धमनी तथा शिरा होती है। प्रत्येक छोटा खण्ड भी कई छोटी-छोटी इकाइयों मे विभक्त रहता है जिन्हें लोब्यूल्स कहते हैं।

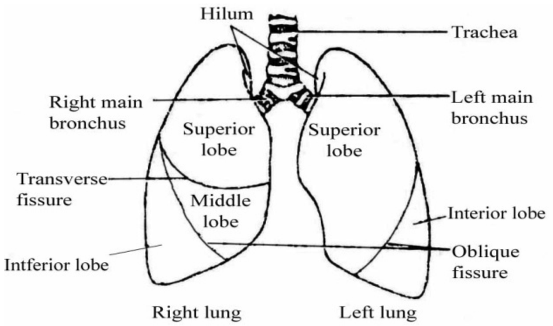

चित्र-फुप्फुसों के खण्ड दर्शाते हुए रेखाचित्र

एक सीरस झिल्ली, जिसे प्लुरा कहते है, प्रत्येक फुष्ठुस को घेरे रहती है। इसमें 2 तहें होती हैं जो कि सामान्यत: एक दूसरे के सम्पर्क में रहती हैं तथा सीरस द्रव की पतली फिल्म से पृथक रहती हैं। इन दोनों के मध्य स्थान को प्लुरल गुहिका (plural Cavity) कहते हैं।

- **श्वास नलिकाएँ (The Bronchi)**

  दो मुख्य श्वास नलिकाएँ श्वास-नाल के विभाजन के स्थान से आरम्भ होती है तथा एक-एक प्रत्येक फुप्फुस में जाती है। बायीं मुख्य श्वास नलिका दाहिनी मुख्य श्वास नलिका की अपेक्षा संकरी, लम्बी एवं अधिक आडी रहती है क्योंकि हृदय मध्य रेखा के कुछ बायी ओर स्थित रहता है। प्रत्येक मुख्य श्वास नलिका कई शाखाओं मे विभाजित होती है और प्रत्येक खण्ड मे एक-एक शाखा पहुँचती है। बाद मे हरेक शाखा, खण्ड के प्रत्येक छोटे-छोटे ब्रॉन्क्रोपल्मोनरी खण्ड में पहुँचने के लिए छोटी-छोटी शाखाओं मे विभाजित होती हे और पुन: छोटी नलिकाओं में विभाजित होकर फुप्फुस के पदार्थ में पहुँचती है। इन श्वास नलिकाओं की रचना श्वास नाल के समान ही होती है लेकिन इसमें उपास्थि श्वासनाल के तुल्य नहीं होती।

- **ब्रॉन्किओल्स (Bronchioles)**

  बहुत पतली श्वास-नलिकाओं को ब्रॉन्किओल्स कहते हैं। इनमे उपास्थि नहीं रहती है लेकिन ये पेशीय. तन्तुमय एवं लचीले ऊतक की बनी होती हैं। इनमे क्यूबॉइड एपिथीलिअम का अम्लर रहता है। जैसे-जैसे ब्रॉन्क्रिओल्स छोटे होते जाते हैं वैसे-वैसे पेशीय एंव तन्तुमय ऊतक समाप्त होते जाते हैं और बहुत ही छोटी नलिकाएँ, जिन्हें टर्मिनल ब्रॉन्क्रिओल्स कहते हैं, बन जाती हैं। ये चपटी एपिथीलिअल कोशिकाओं की एक तह की बनी होती हैं।

- **एल्बिओलर नलिकाएँ और एनिओलाइ (Alveolar ducts and Alveoli)**

  टर्मिनल ब्रॉन्क्रिओल्स कई शाखाओं मे विभाजित होकर छोटे-छोटे मार्ग बनाती है जिन्हें एल्विओलर नलिकाएँ कहते हैं। जिनसे एल्विओलर थैलियाँ एवं एल्विओलाइ बनते हैं। एल्विओलर केशिकाओं के जाल से घिरे रहते हैं। अ-ऑक्सीजनकृत रक्त फुप्फुसीय धमनी से केशिकीय जाल में प्रविष्ट होता है। यह केशिकीय जाल ही है जहाँ एल्विओलाइ उपस्थित वायु और वाहिकाओं में उपस्थित रक्त के बीच गैसों का आदान-प्रदान होता है।

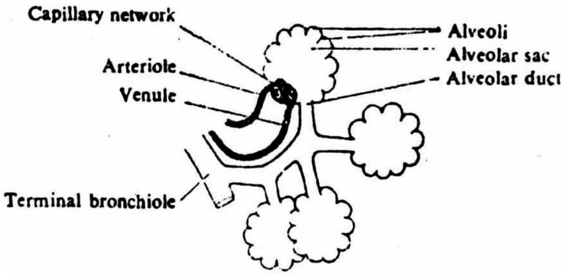

चित्र- एल्विओलाइ का रेखाचित्र।

2.4.2 गैसों का विनिमय (Gaseous Exchange)

शरीर के अन्दर गैसों का आदान-प्रदान फुप्फुसों में, जिसे बाह्य श्वसन कहते हैं तथा ऊतकों में, जिसे आन्तरिक श्वसन कहते हैं, दोनों स्थानों पर होता है। गैसों के सम्बन्ध में भौतिकी के प्रारम्भिक नियम के अनुसार गैसें उच्च दबाव से कम दबाव की ओर विसरित होती हैं। श्वास के साथ अन्दर ली हुई वायु में कई गैसें रहती हैं। प्रश्वसित वायु की सरचना (लगभग) निम्न है

नाइट्रोजन, 79 प्रतिशत

ऑक्सीजन 20-21 प्रतिशत

कार्बन-डाई-ऑक्साइड, 0.4 प्रतिशत

पानी की वाष्प

अन्य गैसें, बहुत कम मात्रा मै।

नि:श्वसित वायु की गैसीअँस संरचना परिवर्तित हो जाती है. अर्थात् इसमें ऑक्सीजन कम और कार्बन-डाई-ऑक्साइड ज्यादा रहती है। नाइट्रोजन मात्रा बराबर रहती है। निश्वसित वायु की सरचना निम्न (लगभग) है. '

नाइट्रोजन, 79 प्रतिशत

ऑक्सीजन 16 प्रतिशत

कार्बन-डाई-ऑक्साइड, 4.5 प्रतिशत

पानी की वाष्प

अन्य गैसें, बहुत कम मात्रा में।

2.4.3 श्वसन की क्रियाविधि (Mechanism of Respiration)

श्वसन क्रिया दो भागों में होती है - अन्तःश्वसन और नि:श्वसन। अन्तःश्वसन के दौरान डायफ्रॉम एवं इन्टरकॉस्टल पेशियो की गति के कारण वक्ष फैलता है। जब अन्तःश्वसन के दौरान डायफ्रॉम संकुचित होता है तब वह चपटा होकर नीचे की ओर खिसक जाता है तथा वक्षीय गुहिका की लम्बाइ 'बढ़ जाती है। एक्सटरनल इन्टरकॉस्टल पेशियाँ सिकुडकर पसलियों को ऊपर उठाकर उन्हें बाहर की ओर खींचती हैं, इस प्रकार वक्षीय गुहिका की गहराई बढ़ जाती है। जैसे ही वक्षीय दीवार ऊपर एवं बाहर की ओर उठती है. पेराइटल क्षार जो कि इससे जुडा रहता है, इसके साथ उठता है। विसरल क्षार भी पेराइटल क्षार के साथ खिचता है ओर इस प्रकार वक्ष के

अन्दर का आयतन बढ जाता है। इस खाली स्थान को भरने के लिए फुप्फुस फैलते हैं और वायु श्वास नलिकाओं मे चूषित होती है।

शान्त श्वसन क्रिया के दौरान निःश्वसन निष्क्रिय होता है। डायफ्राम शिथिल होकर अपनी सामान्य गुम्बज की आकृति ग्रहण कर लेता है। इन्टरकॉस्टल पेशियाँ शिथिल हो जाती हैं और पसलियाँ पुन: अपनी स्थिति मे आ जाती हैं। फुप्फुस सिकुड जाते हैं। और वायु श्वास नलिकाओं के द्वार बाहर निकल जाती है। शक्तिपूर्वक किये गये निश्वसन के दौरान पसलियों को नीचे की ओर लाने के लिये आन्तरिक इन्टरकॉस्टर पेशियाँ सक्रिय रूप से संकुचित होती हैं। गहरी श्वसन-क्रिया के दौरान या जब वायुमार्ग अवरूद्ध हो जाता है तब श्वसन क्रिया की सहायक पेशियाँ उपयोग में आ सकती हैं। ऐसे अंतःश्वसन के दौरान स्टरनोक्लीडोमैस्टॉइड पेशियाँ स्टर्नम को उठाकर सामने से पीछे तक वक्ष-स्थल का डाइमीटर बढा देती हैं। जब भुजा स्थिर रहती है तब सीरेटस एन्टीरिअर एवं पेक्टोरेलिस मेजर पेशियाँ पसलियों को बाहर की ओर खींचती है। लैटिसिमस डॉर्सी एवं अग्र उदरीय दीवार की पेशियाँ शक्तिपूर्वक किये गये निःश्वसन के दौरान वक्ष- स्थल को दबाने में सहायता करती हैं। इस प्रकार विभिन्न पेशियों एवं अंगों की सहायता से श्वसन की किया चलती रहती है। मैडूला आबलेगैटा मे स्थित श्वसन केन्द्र श्वसन क्रिया को नियंत्रित करता है।

2.5 सारांश

शरीर विभिन्न तंत्रों से मिलकर बना है जो शरीर के सभी आवश्यक कार्यो को सुचारू रूप से करते हैं।

परिसंचरण तंत्र मुख्यत: दो प्रकार का होता है।

रक्त परिवहन गैसीय विनिमय, पोषक पदार्थो का वितरण, जीवाणुओं से रक्षा तथा शरीर में जल व लवणों का सन्तुलन बनाये रखता है। हृदय अनवरत रूप से धड़कता रहता है। हृदय दर जाति, उस, क्रियाशीलता आदि पर निर्भर करती है। मानव मे हृदय दर 72 प्रति मिनट है। धमनियों रक्त को हृदय से शरीर के विभिन्न भागों में ले जाती है तथा शिराएँ शरीर के विभिन्न भागों से रक्त को इकट्ठा कर हृदय में लाती हैं।

जिन अंगों के द्वारा ऑक्सीजन व कार्बन-डाई-ऑक्साइड का विनिमय होता है उन्हें श्वसन अंग कहते हैं। कार्य के अनुरूप श्वसन अगों को दो भागों में विभक्त किया गया है :- (1) श्वसन मार्ग, (2) फेफडे या फुप्फुस

श्वसन मार्ग में अनेक सहायक अंग होते हैं जो वायु के संवहन का कार्य करते हैं। जैसे - बाह्य नासा रन्ध्र. नासा पथ, ग्रसनी, श्वसन नली. श्वसनियाँ आदि।

श्वसन प्रक्रिया में गैसों का विनिमय महत्वपूर्ण स्थान रखता है तथा इसका नियंत्रण मस्तिष्क मे स्थित श्वसन केन्द्र द्वारा होता है। प्रसूति विज्ञान सहायिका मानव शरीर मे रक्त परिसंचरण तथा श्वसन तंत्र के विषय मे अपनी जानकारी बढा सके, यही इन इकाईयों का अभीष्ट है।

2.6 प्रश्न

1. हृदय की संरचना समझाइये।

2. रूधिर की रचना स्पष्ट करें।
3. Rh-तत्व क्या है?
4. मनुष्य के हृदय का अधरतल से चित्र बनाओ?
5. मानव रूधिर वर्गो के नाम लिखो तथा बताओ यदि माँ का “A” तथा पिता का "छ" वर्ग हैं तो बच्चे में कौन सा वर्ग होगा?
6. नि: श्वसन तथा उच्छ्वसन को परिभाषित करो
7. गैसीय परिवहन पर टिप्पणी लिखो?
8. श्वसन का नियंत्रण किस प्रकार होता है ? वर्णन करो।
9. मनुष्य के श्वसन तंत्र का नामांकित चित्र बनाकर इसकी सरचना का वर्णन करो?
10. श्वसन की क्रियाविधि का विस्तृत वर्णन करो?

इकाई-3 पाचन एवं उत्सर्जन

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 पाचन तंत्र

3.2.1 आहारनाल

3.2.2 पाचन के सहायक अंग

3.3 चयापचय (Metabolism)

3.3.1 कार्बोहाइड्रेट चयापचय

3.3.2 वसा चयापचय

3.3.3 प्रोटीन चयापचय

3.4 उत्सर्जन

3.4.1 वृक्क

3.4.2 मूत्रवाहिनियां

3.4.3 मूत्राशय

3.4.4 मूत्रमार्ग

3.4.5 अन्य उत्सर्जी अंग

3.4.6 मूत्र निर्माण

3.4.7 मूत्र की संरचना

3.5 जल एवं लवण संतुलन

3.6 सारांश

3.7 प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

जैसा कि आप जानते हैं सामान्यत: हमें अपने दैनिक जीवन में विभिन्न क्रियाएं जैसे :- आना, जाना. बातें करना. उठना. बैठना तथा अन्य विभिन्न प्रकार की क्रियाएं करने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। महिलाओं में गर्भावस्था तथा स्तनपान के दौरान ऊर्जा की आवश्यकता और भी बढ जाती है। यह ऊर्जा हमें भोजन से प्राप्त होती है। जो भोजन हम लेते हैं उसके अणु बडे एवं अघुलनशील होते हैं। उन जटिल व अघुलनशील अणुओं को शरीर में पाचन क्रिया के द्‌वारा सरल एवं घुलनशील अणुओं में बदला जाता है एवं इनसे हमें ऊर्जा प्राप्त होती है।

जो भोजन हम लेते हैं वह पूरा ही हमें ऊर्जा प्रदान नहीं करता है बल्कि इसमें कुछ ऐसे पदार्थ भी होते हैं जिनका शरीर में कोई उपयोग नहीं होता है। यदि ये पदार्थ आवश्यकता से अधिक शरीर में एकत्रित होते हैं तो शरीर के लिए हानिकारक होते हैं। अत: इन पदार्थो को उत्सर्जन की क्रिया के द्‌वारा बाहर निकाला जाता है। महिलाओं में प्रसूति काल के दौरान पाचन एवं उत्सर्जन

क्रियाएं भी प्रभावित होती हैं। प्रसूति विज्ञान सहायिका को भी पाचन एवं उत्सर्जन के बारे में समझना आवश्यक है।

इस इकाई में हम पाचन एवं उत्सर्जन का विस्तार से अध्ययन करेंगें।

3.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद प्रसूति विज्ञान सहायिका निम्न के बारे में समझ सकेगी

1. पाचन तंत्र. उसके प्रमुख भाग एवं उनके कार्य
2. पाचन तंत्र में भोजन का चयापचय
3. उत्सर्जन तंत्र, उसके प्रमुख भाग एवं उनके कार्य
4. मूत्र निर्माण की क्रियाविधि
5. मूत्र की संरचना
6. मानव शरीर में जल एवं लवण संतुलन

3.2 पाचन तंत्र

पाचन तंत्र में वे सभी अंग आते हैं जो भोजन को चबाने, निगलने. पचाने और अवशोषित करने तथा अधपचे व अनपचे भोजन को बाहर निकालने का कार्य भी करते हैं।

पाचन आहार नाल में भोजन में उपस्थित जटिल. अघुलनशील पोषक पदार्थो को सरल. घुलनशील पदार्थो मे बदलने की क्रिया पाचन क्रिया कहलाती है। पाचन क्रिया के लिए आहार नली एवं पाचन के सहायक अग होते है। पाचन तंत्र में मुख्य भूमिका निभाने वाले आहार नाल एवं पाचन के सहायक अंगों का संक्षिप्त वर्णन आगे के पृष्ठों में दिया जा रहा है।

3.2.1 आहार नाल (Alimentary canal)

आहार नाल करीब 9 मी लम्बी होती है तथा इसके निम्न भाग होते हैं :-

(i) मुखगुहा (Buccal Cavity)

(ii) ग्रसनी (Pharynx)

(iii) ग्रसिका (Oesophagus)

(iv) आमाशय (Stomach)

(v) छोटी आत या क्षुद्रान्त्र (Small intestine)

(vi) बडी आत या वृहत आंत्र तथा मलाशय (Large intestine and Rectum)

(vii) पाचन के सहायक अंग, ग्रंथिया (सैलिवरी, आमाशायिक) आंत्र, यकृत (Liver) एवं अग्न्याशय (Pancreas) आदि हैं।

आहार नाल के इन भागो को दिए गए चित्र मे दर्शाया गया है।

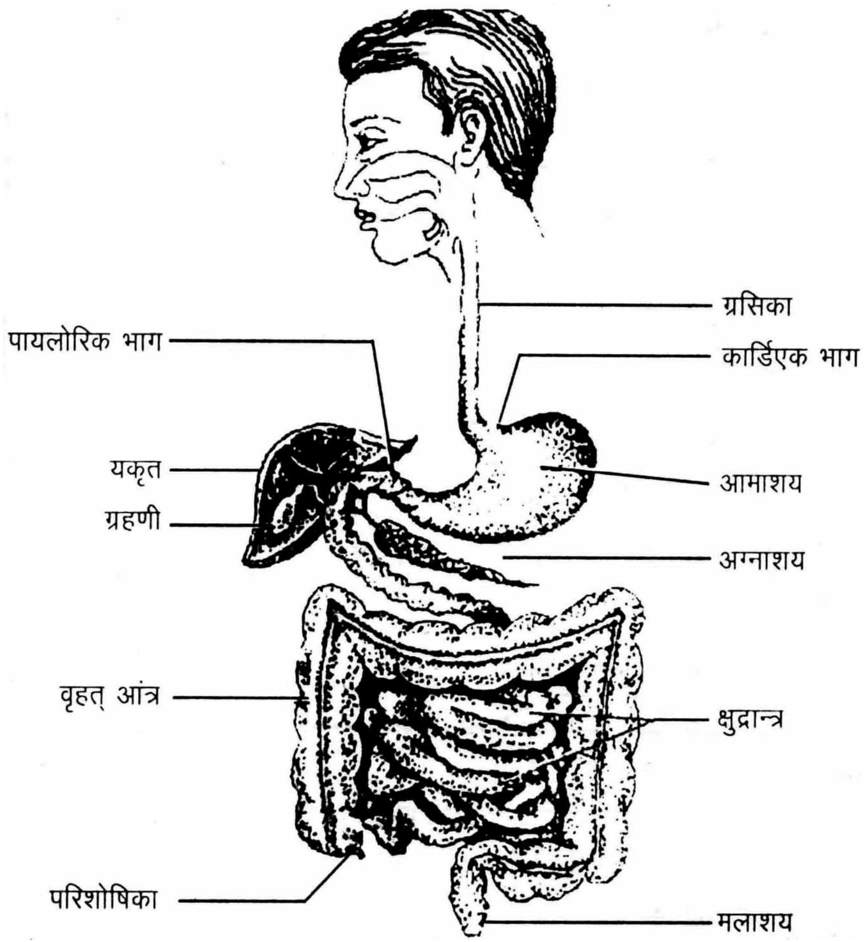

(i) मुखगुहा :

मुखगुहा बाह्य रूप से ओंठ ओर गालों से घिरी रहती है। इसके निम्नलिखित भाग होते हैं :-

(1) तालु (Palate) : यह मुखगुहा का ऊपरी भाग होता है। इसका अग्र भाग कठोर तालु एवं पिछला का होता है। कोमल तालु पर पीछे की ओर शंकुनुमा उभार युवूला लटका रहता है।

(2) जीभ (Tongue) : यह मुख गुहा का निचला भाग होता है। जीभ पर विभिन्न स्वाद कलिकाएं होती हैं जो हमें खट्टे मीठे, नमकीन आदि विभिन्न स्वादों का ज्ञान कराती है। जीभ भोजन में लार को मिलाने का कार्य करती है । जीभ भोजन को निगलने में मदद करती है।

(3) दाँत (Teeth) मनुष्य में दांतों के दो सेट्स होते हैं :

(अ) प्राथमिक दांत (Primary Teeth) ये जीवन के पहले या दूसरे वर्ष में निकलते हैं तथा स्थायी नहीं होते हैं।

(ब) स्थायी दांत (Permanent Teeth). ये 6वें वर्ष से निकलना प्रारम्भ होते हैं तथा 25वे वर्ष तक सभी दांत निकल जाते हैं। साधारणतया मनुष्य में 32 दांत होते हैं। दांत भोजन को काटने तथा चबाने का कार्य करते हैं।

(4) लार ग्रन्थियाँ (Salivary Glands) :- मनुष्य में तीन जोड़ी लार ग्रन्थियाँ होती हैं। भोजन के मुंह में आने पर या भोजन को देखने या भोजन की सुगंध से लार ग्रन्थियाँ सक्रिय हो जाती हैं तथा लार का स्रावण होता है। लार में टायलिन एन्जाइम होता है जो कार्बोहाइड्रेट को माल्टोज मे बदलता है।

मुखगुहा के कार्य

– दांतों के द्वारा भोजन को काटा व चबाया जाता है।
– लार ग्रन्थियाँ लार का स्रावण करती हैं।
– जीभ द्वारा लार को भोजन मै मिलाया जाता है एवं लार कार्बोहाइड्रेट पर क्रिया करती है।
– जीभ भोजन को अन्दर निगलने में सहायता करती है।

(ii) **ग्रसनी (The Pharynx) -** मुखगुहा आगे की ओर ग्रसनी में खुलती है। यह मुखमार्ग एवं नासामार्ग का सामान्य भाग होता है। भोजन ग्रसनी से होकर ग्रसिका में जाता है।

(iii) **ग्रासनली (Esophagus) :-** ग्रासनली, ग्रसनी से आमाशय तक पहुंचने वाली लगभग 25सेमी. लम्बी पेशीय नली है। ग्रासनली में विशेष क्रमाकुंचन गतियां होती हैं जिनसे भोजन आगे बढता है।

(iv) **आमाशय (Stomach) -** ग्रासनली का पश्च भाग एक थैलीनुमा संरचना, आमाशय में खुलता है। आमाशय के ग्रासनाल से जुडे भाग को कार्डिएक भाग एवं ग्रहणी से जुडे भाग को पायलोरिक भाग कहते हैं। कार्डिएक एवं पायलोरिक भाग के मध्य आमाशय का फंडस भाग होता है। आमाशय के ऊपर मुख्य भाग को बॉडी कहते हैं एवं बॉडी के ऊपर का भाग फन्डस कहलाता है।

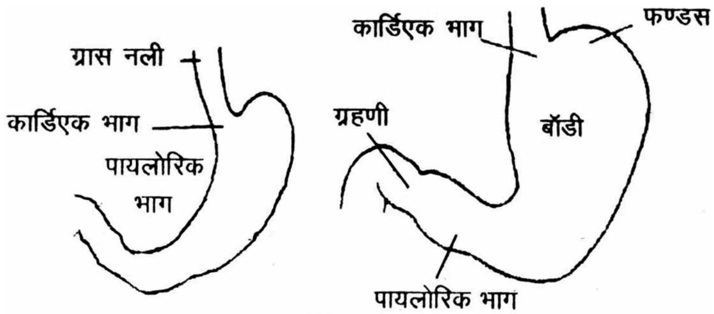

चित्र:आमाशय (अ) खाली (ब) भरा हुआ

अमाशय के कार्य

– भोजन को मथना ताकि भोजन छोटे-छोटे टुकडों में टूट जाए एवं इसमें पाचक रस अच्छी तरह मिल सके।
– जठर रस का स्रवण करना एवं भोजन को पचाना।

जठर रस :अमाशय द्वारा स्रावित रस जठर रस कहलाता है। यह निम्न पदार्थो से बना होता है:-

– पानी, खनिज लवण एवं म्यूकस
– हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (HCL)

– एंजाइम पेप्सिनोजन जो HCL द्वारा सक्रिय पेप्सिन में बदला जाता है। पेप्सिन प्रोटीन को पेप्टोन्स में बदल देता है।

पेप्सिनोजन $\xrightarrow{HCL}$ पेप्सिन

प्रोटीन $\xrightarrow{\text{पेप्सिन}}$ पेप्टोन्स

– रेनिन यह बच्चों में मिलता है। यह दूध में स्थित केसीनोजन को केसीन में बदल देता है।

(v) **छोटी आन्त (Small intestine) :-** आमाशय से आगे बहार नाल एक कुंडलित नली का रूप ले लेती है जिसे क्षुद्रान्त्र या छोटी आंत कहते हैं। यह लगभग 6 मीटर लम्बी होती है। इसके तीन भाग होते हैं :-

- **ग्रहणी (ड्यूऑडीनम)** : यह अग्र भाग है जहां पाचक रसों की क्रियाएं होती हैं। यह लगभग 25सेमी. लम्बी होती है, इसमें यकृत से आने वाली पित्तनली (Bile duct) एवं अग्न्याशय से आने वाले अग्न्याशयी नली (Pancreatic duct) खुलती है।

जेज्यूनम (Jejnum) और इलियम (Ileum): क्रमश: 2.5मीटर एवं 4मीटर लम्बी होती हैं। ये कुंडलित आकार में होती हैं छोटी आत की दीवार चार परतों की बनी होती है। भोजन का पाचन एवं अवशोषण है।

छोटी आंत का कार्य

– छोटी आत का कार्य भोजन को पचाना एवं उसका शोषण करना है।

– पाचन अग्न्याशय रस, पित्त रस एवं आंत्रिक रस से होता है।

– छोटी आत में विशेष प्रकार के उभार पाये जाते हैं जिन्हें विलाई कहते है। विलाई पचे हुए भोजन के अवशोषण का कार्य करती है।

भोजन के अवशोषण में सहायक विभिन्न रस निम्न प्रकार हैं

(क) अग्न्याशयी रस (Pancreatic juice) :- इसका स्त्रवण अग्न्याशय द्वारा होता है तथा यह ग्रहणी में आकर क्रिया करता है। इसमें निम्नलिखित एन्जाइम होते हैं :-

- ट्रिप्सन - प्रोटीन को एमीनो एसिड में बदलता है।
- एमाइलेज - स्टार्च को माल्टोज में बदलता है।
- लाइपेज - वरना को वसीय अप्ल + ग्लिसरॉल में परिवर्तित करता है

(ख) आंत्रिक रस (Intertinal Juice) - इसका स्रवण छोटी आंत द्वारा होता है। इसमें पानी, लवण व एन्ताइम होते हैं। ये एन्जाइम प्रोटीन. कार्बोहाइड्रेट. वरना का पाचन करते हैं।

- एन्टरोकाइनेज - ट्रिप्सिनोजन → ट्रिप्सिन
- पेप्टिडेज - पेप्टोन्स → अमीनो अम्ल
- माल्टेज - माल्टोज → ग्लूकोज

- सुक्रेस - सुक्रोस → ग्लूकोज
- लाइपेज - वसा → वसीय अम्ल

(ग) पित्तरस (Bile)

इसका लगा यकृत द्वारा होता है। इसमें कोई एन्जाइम नहीं होता है। यह वसा को छोटे-छोटे टुकडों में तोड़ता है। जिससे इस पर एन्जाइमों की क्रिया हो सके।

(vi) बड़ी आन्त (Large Intestine)

छोटी आत का अन्तिम भाग लगभग 1.5 मी. लम्बी एक नली में खुलता है जिसे बडी आत कहते हैं। बडी आंत को सीकम आरोही कोलन, आड़ी कोलन, अवरोही कोलन तथा सिग्मॉइड में विभाजित किया जा सकता है। बडी आत का अंतिम भाग मलाशय होता है जो गुदा हारा बाहर खुलता है।

बडी आन्त के कार्य

– पानी तथा लवणों का शोषण
– मल का गिरजा

3.2.2 पाचन के सहायक अंग

(क) यकृत
(ख) अग्न्याशय

(क) यकृत (Liver) :- यकृत शरीर की सबसे बडी ग्रन्थि होती है। यह उदरगुहा में दाहिनी ओर स्थित होती है। इसके दो खण्ड होते हैं :-

– दायां खण्ड
– बाया खण्ड, दायां खण्ड बायें खण्ड से कुछ बडा होता है।

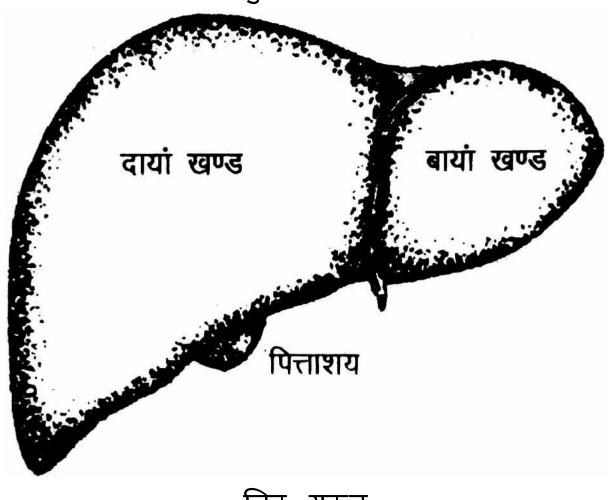

चित्र. यकृत

यकृत के कार्य :

- यकृत शरीर का उष्मा प्रदान करने वाला मुख्य अंग है।
- यह पित्त रस का स्रवण करता है।

- यकृत शरीर में उपलख आवश्यकता से अधिक उर्जा का संचय करता है एवं जरूरत पडने पर इस उर्जा को शरीर को प्रदान करता है।
- यकृत दवाईयों एवं विषों का दुष्प्रभाव कम करता है।
- यकृत विटामिन ए और डी का संग्रहण करता है।

(ख) **अग्न्याशय (Pancreas) -** अग्न्याशय मुलायम 12-15 सेमी. लम्बी ग्रन्थि है जो आमाशय के पीछे आडे रूप में स्थित रहती है।

– अग्न्याशय, अग्न्याशय वाहिका द्वारा ग्रहणी में अग्न्याशयी रस का स्रवण करता है।

– अग्न्याशय में विशेष कोशिकाओं के समूह होते हैं, जिन्हें लैंगरहेन्सद्वीप समूह कहते हैं। ये दो प्रकार के हार्मोन स्रावित करते है। - इन्सुलिन एवं ग्लुकागोन।

– इन्सुलिन रूधिर में ग्लूकोज की मात्रा को कम करके नियंत्रित करता है।

– ग्लूकागॉन रूधिर में ग्लूकोज की मात्रा बढाता है तथा नियंत्रित करता है।

3.3 चयापयच (Metabolism)

सजीव अपने जीवन में पोषण, वृद्धि, पाचन, उत्सर्जन, श्वसन, प्रजनन, उत्तेजन आदि विभिन्न जैव क्रियाएं सम्पादित करते हैं। इनके कार्यो के सम्पादन के लिए जैव शक्ति या ऊर्जा की आवश्यकता होती है।

यह ऊर्जा भोजन के परिवर्तन या विघटन से प्राप्त होती है। अत: सामान्य रूप में चयाचपय का अर्थ भोजन के उपयोग से सम्बन्धित सभी परिवर्तनों से है।

- **परिभाषा :-** चयापचय उन रसायनिक प्रतिक्रियाओं का सामूहिक नाम है जिनके कारण जीवों में पदार्थो का निरन्तर रूपान्तरण होता रहता है।" चयापचय के लिए आवश्यक पदार्थो को जीवों के पोषक पदार्थ कहते हैं। इसमें सबसे प्रमुख एवं जटिल भाग होते हैं - कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटीन्स एवं वसा।
- **चयापचय (Metabolism) के दो पहलू होते हैं :-**

(i) **उपचय (Anabolism) :-** यह रचनात्मक पहलू है। इसमें पचे हुए पोषक पदार्थो से कोशिका की वृद्धि, रचना करने वाले पदार्थो का संश्लेषण होता है। (इसमें सरल अणुओं से जटिल अणुओं का निर्माण होता है तथा ऊर्जा खर्च होती है।)

(ii) **अपचय (Catabolism) :-** यह विखण्डनात्मक पहलू है। इसमें भोजन के जटिल अणु छोटे अणुओं में टूटते हैं तथा इस प्रकार बने अणुओं का उपयोग ऊर्जा उत्पादन के लिए होता है। (इसमें जटिल अणुओं से सरल अणुओं का निर्माण होता है तथा ऊर्जा उत्पन्न होती है।)

शरीर के लिए आवश्यक प्रतिदिन ऊर्जा की मात्रा को कैलोरी में मापा जाता है। विभिन्न दशाओं में आवश्यक दैनिक कैलोरी आवश्यकताओं का वर्णन तालिका में दिया गया है :-

क्रम	**व्यक्ति**	**ऊर्जा की आवश्यकता**
1.	मजदूर	3500 कैलोरी

2.	ऑफिस कार्य करने वाला व्यक्ति	2500 कैलोरी
3.	विश्राम	1800 कैलोरी
4.	बिस्तर मै लेटे रोगी	1200 कैलोरी

शिशुओं, विकासशील बच्चों एवं गर्भवती महिलाओं को अपेक्षाकृत अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है। विभिन्न प्रकार के पोषक तत्वों से प्राप्त ऊर्जा का मान निम्नलिखित है:-

प्रोटीन - 4 कैलोरी प्रति ग्राम

वसा - 9 कैलोरी प्रति ग्राम

कार्बोहाइड्रेट - 4 कैलोरी प्रति ग्राम

3.3.1 कार्बोहाइड्रेट चयापचय

कार्बोहाइड्रेट के पाचन तथा अवशोषण के फलस्वरूप शर्कराएं तथा स्टार्च रक्त में ग्लूकोज के रूप में प्रकट होती हैं। रक्त में ग्लूकोज का सामान्य स्तर 80- 120/100ml होता है जिसे रक्त शर्करा स्तर (Blood Sugar Level) कहते हैं।

आवश्यकता से अधिक ग्लूकोज, यकृत एवं पेशियों में ग्लाइकोजन के रूप में संचित होता है तथा शरीर की आवश्यकतानुसार यकृत ग्लाइकोजन को पुन: ग्लूकोज में बदल देता है। इस क्रिया के लिए इन्सुलिन की आवश्यकता होती है।

(अ) पाचन -

- टायलिन पके हुए स्टार्च को माल्टोज़ में परिवर्तित करता है।
- ग्रहणी में अग्न्याशय का एमाइलेज सभी स्टार्चों को माल्टोज में परिवर्तित कर देता है।
- आन्त्र में डाइसैकेराइड शर्करा को मोनोसैकेराइड शर्करा (ग्लूकोज) में परिवर्तित कर दिया जाता है।

(ब) अवशोषण

मोनोसैकेराइड रक्त में अवशोषित होते हैं। रक्त में ग्लूकोज का स्तर इंसुलिन द्वारा नियंत्रित होता है। ऊतकों मे कार्बोहाइड्रेट के आक्सीकरण के फलस्वरूप ऊर्जा उत्पन्न होती है। कार्बोहाइड्रेट के दहन के फलस्वरूप कार्बनडाइऑक्साइड तथा जल का निर्माण होता है। कार्बनडाइऑक्साइड एक हानिकारक पदार्थ है अत: इसे श्वसन क्रिया द्वारा बाहर निकाल दिया जाता है।

3.3.2 वसा का चयापचय

वसा शरीर में वसा ऊतक (**Adipose Tissue**) के रूप में संचित होती है क्योंकि अवशोषण के तुरन्त बाद शरीर को इसकी आवश्यकता नहीं होती है। आवश्यकता के समय संचित वसा को वसा अम्ल एवं ग्लिसरॉल में परिवर्तित किया जाता है। वसा का यही रूप शरीर में प्रयुक्त होता है।

वसा के उपापचय के फलस्वरूप कीटोन बॉडीज शेष रह जाते हैं। इन पदार्थो की एक सीमित मात्रा ही शरीर द्वारा प्रयुक्त होती है। इनका उत्पादन इनके प्रयोग की गति से अधिक हो तो यह दशा कीटोसिस (**Ketosis**) कहलाती हैं। ऐसा अल्पाहार या भुखमरी (**Starvation**) के

समय होता है क्योंकि शरीर को काबोहाइड्रेट की पूर्ति नहीं होती हैं तथा ऊर्जा की आवश्यकताओं को निरन्तर वसा के चयापचय से पूरा किया जाता है।

(अ) पाचन

अग्न्याशय एवं आन्त्र के लाइपेज एन्ताइम वसा को वसा अम्ल एवं ग्लिसरॉल में बदल देते हैं।

(ब) अवशोषण

वसा अम्ल एवं ग्लिसरॉल का रक्त द्वारा अवशोषण होता है। यकृत द्वारा वसा को ऊतकों मे संचय के योग्य बनाया जाता है। वसा के दाह में कार्बनडाइऑक्साइड व जल उत्पन्न होते हैं। कार्बनडाइऑक्साइड श्वसन द्वारा तथा जल वृक्क और पसीने द्वारा शरीर के बाहर निकाले जाते हैं।

3.3.3 प्रोटीन चयापचय

प्रोटीन के पाचन के फल-स्वरूप एमीनों एसिड उत्पन्न होते हैं जो सम्मिलित रूप से प्रोटीन पूल कहलाते हैं। शरीर की कोशिकाएँ आवश्यकतानुसार प्रोटीन इसी पूल से ग्रहण करती हैं। प्रोटीन शरीर में ऊतक निर्माण एवं विकास के लिए आवश्यक होते हैं।

प्रोटीन अधिकता : जब आहार में प्रोटीन अधिकता होती है तो यकृत में प्रोटीन का विएमिनीकरण (Deamination) किया जाता है। इसमें प्रोटीन का नाइट्रोजन अंश निकल जाता है तथा कार्बन, हाइड्रोजन एवं आक्सीजन बचते हैं जिनका उपयोग ऊर्जा उत्पादन के लिए किया जाता है।

जब शरीर में ऊर्जा की कमी हो जाती है तथा ऊर्जा के सभी संचित स्त्रोत खत्म हो जाते हैं तो ऊतकों में स्थित प्रोटीन का दाह भी ऊर्जा की आवश्यकता की पूर्ति के लिए होने लगता है। फलस्वरूप पेशी शोष (Muscle wasting) प्रकट हो सकता है। यह दशा प्रोटीन-कैलोरी कुपोषण में पायी जाती है।

(अ) पाचन

प्रोटीन का पाचन मुख्यत: आन्त्र में होता है। आमाशय में प्रोटीन्स को पेप्टोन्स में बदला जाता है तथा आन्त्र में इन पेप्टोन्स को पॉलीपेप्टाइड में तथा इन पालीपेप्टाइडों को अमीनों अम्लों (Amino acids) में बदल दिया जाता है।

(ब) अवशोषण

रक्त द्वारा अमीनों एसिड प्रत्येक कोशिका तक पहुंच सकते हैं। शरीर की कोशिकाएं अपने विकास एवं मरम्मत की आवश्यकतानुसार विशेष अमीनों अश्व चुन लेती हैं। यकृत में अमीनों अम्लों का विएमिनीकरण होता है।

ऊतकों में प्रोटीन उपापचय के फलस्वरूप यूरिया, यूरिक एसिड तथा क्रिएटिनीन जैसे अवशिष्ट पदार्थो का निर्माण होता है तथा ये पदार्थ मूत्र द्वारा विसर्जित होते हैं।

इस प्रकार भोजन के चयापचय के फलस्वरूप भोजन के विभिन्न अणुओं का पाचन होता है फिर उनका अवशोषण होता है तथा ऊर्जा उत्पन्न होती है। इस ऊर्जा का उपयोग जैविक कार्यो में किया जाता है।

3.4 उत्सर्जन (Elimination)

पाचन क्रिया में विभिन्न उत्सर्जी पदार्थ बनते हैं। इन पदार्थो को शरीर द्वारा बाहर निकाला जाता है। अपशिष्ट या उत्सर्जी पदार्थो को शरीर से बाहर निकालने की क्रिया ही उत्सर्जन कहलाती है।

शरीर के वे अंग जो उत्सर्जन में सहायक होते हैं उत्सर्जी अंग कहलाते हैं। हमारे शरीर में निम्न उत्सर्जन के अंग एवं तंत्र है।

- वृक्क - मूत्रीय तंत्र (आगे विवरण दिया जा रहा है)
- त्वचा - आवरण एवं संवेदन तंत्र (प्रथम इकाई में वर्णित है)
- आंत्र - पाचन तंत्र (इसी इकाई में वर्णित है)
- फेंफडे या फुप्फुस - श्वसन तंत्र (द्वितीय इकाई में वर्णित है)

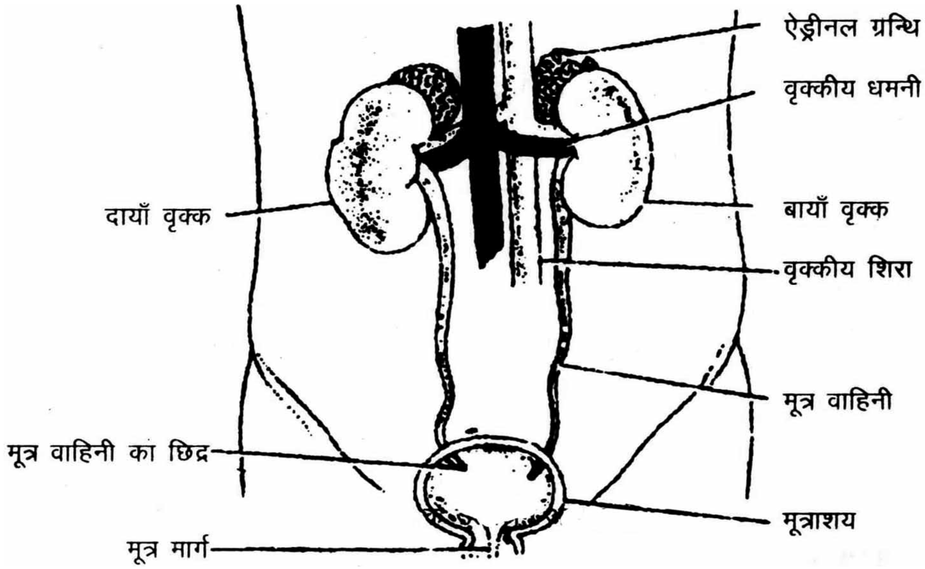

चित्र : मानव मूत्राशय

3.4.1 वृक्क (Kidney)

हमारे शरीर में सेम के बीज के आकार के गहरे लाल रंग के एक जोडी वृक्क. उदर गुहा में कशेरूक दण्ड के दोनों ओर पृष्ठ सतह पर स्थित होते हैं। प्रत्येक वृक्क दृढ, तन्तुमय, संयोजी ऊतक वृक्क सम्पुट से घिरा रहता है।

(vi) वृक्क दो भागों में विभेदित रहता है बाहरी भाग को वल्कीय या कार्टेक्स तथा आन्तरिक भाग को मध्यांश या मैड्यूला कहते हैं।

(vii) प्रत्येक वृक्क लगभग 10 लाख आन्तसूक्ष्म छोटी नलिकाओं से बना होता है। इन्हें वृक्क नलिका अथवा नेफ्रॉन कहते

(viii) नेफ्रॉन वृक्क की संरचनात्मक एवं कार्यात्मक इकाई होती है।

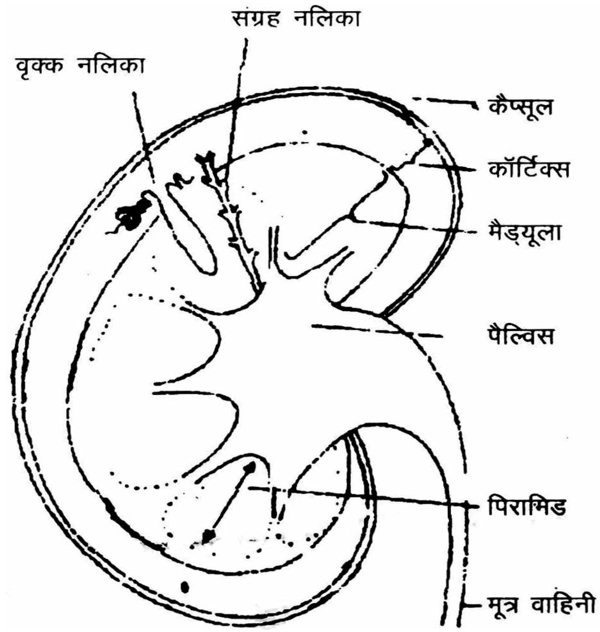

चित्र : वृक्क की संरचना

नेफ्रॉन की सरंचना

प्रत्येक नेफ्रॉन के निम्नलिखित भाग होते है :-

(1) बौमेन कैप्सूल :- यह अग्र भाग है। इसमें रक्त कोशिकाओं का जाल होता है जो केशिका गुच्छ या ग्लोमेरूलस कहलाता है।

(2) समीपस्थ कुण्डलिथ भाग

(3) हेनले का लूप

(4) दूरस्थ कुण्डलित भाग

(5) संग्रह नलिका

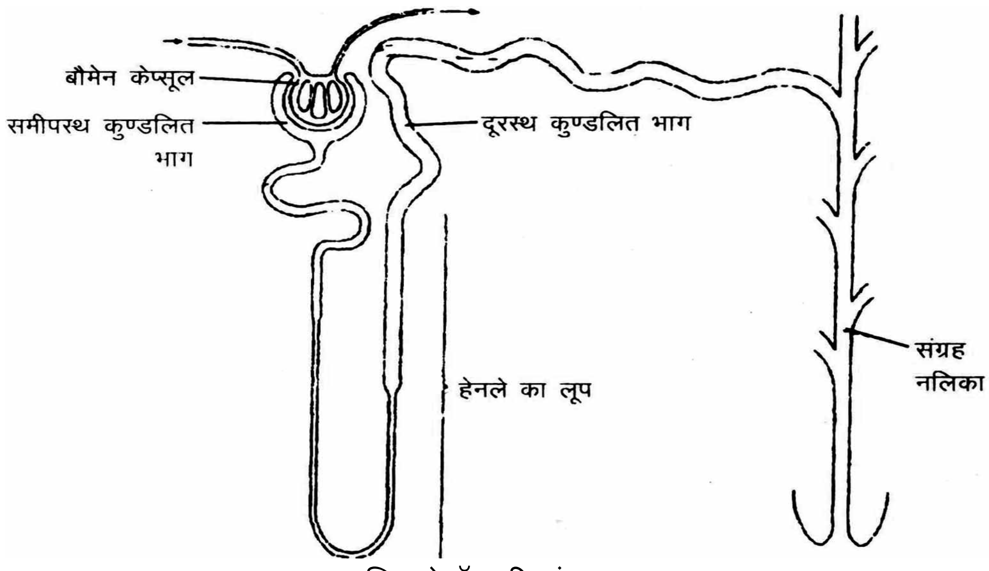

चित्र नेफ्रॉन की संरचना

3.4.2 मूत्रवाहिनियां (Ureters)

प्रत्येक वृक्क से महीन एवं पेशीय नलिका निकलती है। इसे मूत्र वाहिनी कहते हैं। यह नीचे की ओर चलकर एक छिद्र द्वारा मूत्राशय में खुलती है।

कार्य - मूत्रवाहिनियां मूत्र को वृक्कों से लाकर मूत्राशय में डालती हैं।

3.4.3 मूत्राशय (Urinary Bladder)

यह पेशियों की बनी थैली सदृश्य संरचना होती है। इस की भित्ति लचीली होती है। इसमें दोनों ओर की मूत्रवाहिनियों आकर खुलती है।

कार्य :- मूत्राशय में मूत्र का अस्थाई संग्रह होता है।

3.4.4 मूत्रमार्ग (Urethra)

मूत्राशय मूत्रमार्ग द्वारा बाहर खुलता है। पुरूष में यह लगभग 20 सेमी. लम्बी मूत्र एवं वीर्य दोनों के निष्कासन की सामान्य नलिका है जो मूत्र- जन.। छिद्र द्वारा शिश्न मुण्ड पर खुलती है। महिलाओं का मूत्र मार्ग अलग होता है तथा लगभग 4 से. मी लम्बा होता है ।

3.4.5 अन्य उत्सर्जी अंग

(i) **त्वचा (Skin) -** हमारी त्वचा पर अनेक सूक्ष्म छिद्र होते हैं। ये छिद्र नलिका के छिद्र होते हैं। स्वेद ग्रन्धियां इन छिद्रों द्वारा पसीना एवं इसमें घुलित लवण व यूरिया को निष्कासित करती हैं।

(ii) **प्लीहा (Spleen) -** प्लीहा एवं यकृत कोशिकायें क्षतिग्रस्त रक्ताणुओं को नष्ट करती हैं। इसके फलस्वरूप पित्त वर्णक बनते हैं जिन्हें पित्तरस के साथ आत में डाल दिया जाता है।

(iii) **यकृत (Lever) -** यकृत में यूरिया का संश्लेषण होता ह। यूरिया रक्त द्वारा वृक्क में पहुंचता है। वृक्कों से यूरिया शरीर के बाहर निकाल दिया जाता है।

(iv) **आंत (Intestine) -** यद्यपि आत स्वयं उत्सर्जन में सक्रिय भाग नहीं लेती किन्तु यकृत एवं प्लीहा द्वारा बने अपशिष्ट पदार्थ पित्त रस के साथ आत में पहुंचते हैं। अन्य अपशिष्ट पदार्थ जैसे :- कार्बोनेट एवं फास्फेट भी मल के साथ शरीर से बाहर त्याग दिये जाते हैं।

(v) **फुप्फुस(Lungs):-** विभिन्न भोज्य पदार्थो के आक्सीकरण के फलस्वरूप कार्बनडाइ ऑक्साइड (Co_2) का निर्माण होता है जिसे फुप्फुस शरीर के बाहर निष्कासित करते हैं।

3.4.6 मूत्र निर्माण

मूत्र निर्माण की क्रियाविधि निम्न है :-

- वृक्क को रूधिर अभिवाही धमनियां लाती हैं तथा रूधिर को ले जाने का कार्य अपवाही धमनियां करती हैं।
- अपवाही धमनी का व्यास अभिवाही धमनी के व्यास से कम होता है। इस कारण रक्त पर दबाव बन जाता है और रक्त के कुछ अवयव छनकर बोमेन कैप्सूल में आ जाते हैं।

- इसमें अपशिष्ट पदार्थो के आन्तरिक्त ग्लूकोज, अमीनों अम्ल एवं अन्य उपयोगी लवण भी होते है।
- बोमेन सम्पुट से यह तरल वृक्क नलिकाओं से होकर गुजरता है जहां इन उपयोगी पदार्थो का अवशोषण हो जाता है।
- अवशोषण के बाद बचा शेष भाग मूत्र होता है जो वृक्क से मूत्रवाहिनी द्वारा मूत्राशय में संग्रहित होता है और वहां से मूत्रमार्ग द्वारा बाहर निकाल दिया जाता है।

3.4.7 मूत्र की संरचना

पानी	-	96%
यूरीया	-	2%
यूरिक एसिड एवं लवण	-	2%
pH	-	अम्लीय
विशिष्ट गुरूत्व	-	1015-1025

एक स्वस्थ मनुष्य दिन में लगभग 1.5 ली. मूत्र का त्याग करता है। यद्यपि मूत्र की मात्रा तरल पदार्थों की खुराक, शारीरिक परिश्रम एवं वातावरण पर भी निर्भर करती है।

3.5 जल एवं लवण संतुलन

शरीर में जल एवं लवण संतुलन पर 3 हार्मोन नियंत्रण करते हैं -

(i) एल्डोस्टिरॉन (Aldosterone or mineralo corticoids)

यह हार्मोन सोडियम (Na+) के अवशोषण को बढाता है एवं पोटेशियम (K+) के अवशोषण को घटाता है। इसकी कमी से सोडियम की मात्रा कम एवं पोटेशियम की मात्रा बात जाती है।

(ii) एन्टीडाइयूरेटिक हार्मोन या वैसोप्रेसिन (Vassopresin)

यह हार्मोन मूत्र में पानी की मात्रा का नियमन करता है। यह नेफ्रान्स की दूरस्थ कुण्डलित नलिका एवं संग्रह नलिका की जल पारगम्यता को बढाता है। इसके कारण जल का अवशोषण बढता है। इस हार्मोन की कमी से जल को अवशोषण कम हो जाता है व मूत्र में पानी की मात्रा बढ जाती है। इसे पॉलियूरिया (बहुमूत्रता) कहते हैं। इस रोग को डाइबिटीज इन्सिपिड्स (Diabetes insipidus) कहते हैं।

(iii) पैराथॉरमोन (Parathomone)

यह हार्मोन पैराथायरॉयड ग्रन्थि द्वारा स्रावित होता है। यह नेफ्रान्स से कैल्शियम (Ca++)के अवशोषण को बढाता है एवं फास्फेट के अवशोषण को घटाता है।

3.6 सारांश

पाचन तंत्र में वे सभी अंग आते हैं जो भोजन को चबाने, निगलने, पचाने और अवशोषित करने तथा अधपचे व अनपचे भोजन को बाहर निकालने का कार्य भी करते हैं। आहारनाल में भोजन में उपस्थित जटिल, अघुलनशील पोषक पदार्थो को सरल, घुलनशील पदार्थो में बदलने की क्रिया

पाचन क्रिया कहलाती है। पाचन तंत्र में मुख्य रूप से आहारनाल व पाचन में सहायक अंग होते हैं। आहारनाल के मुख्य भाग होते हैं. मुखगुहा. ग्रसनी. ग्रसिका, आमाशय, छोटी आत. बडी आत। पाचन में सहायक अंगों में यकृत व अग्न्याशय प्रमुख हैं। चयापचय उन रासायनिक प्रतिक्रियाओं का सामूहिक नाम है जिनके कारण जीवों में पदार्थो का निरन्तर रूपान्तरण होता रहता है। चयापचय के दो पहलू होते हैं, उपचय यह रचनात्मक पहलू है. अपचय, यह विखण्डनात्मक पहलू है। पाचन में विभिन्न उत्सर्जी पदार्थ बनते हैं। इन पदार्थो को शरीर द्वारा बाहर निकाला जाता है। अत: अपशिष्ट या उत्सर्जी पदार्थो का शरीर से बाहर निकालने की क्रिया उत्सर्जन कहलाती है। शरीर में मुख्यत: वृक्क, पुत्र वाहिनियां मूत्राशय, मूत्रमार्ग, त्वचा, फुप्फुस आदि उत्सर्जन अंग पाये जाते हैं। शरीर में जल एवं लवण का संतुलन एल्डोरिस्टरॉन एटीडाइयूरेटिक हार्मोन तथा पैराथॉरमोन द्वारा होता है। इस प्रकार इस इकाई मे प्रसूति विज्ञान सहायिका की जानकारी हेतु पाचन एवं उत्सर्जन तंत्र को संक्षिप्त में वर्णित किया गया है।

3.7 प्रश्न

1. पाचन क्या है?
2. पाचन तंत्र के प्रमुख अंगों के नाम बताइये?
3. चयापचय किसे कहते हैं?
4. उत्सर्जन किसे कहते है।
5. उत्सर्जन अंगों के नाम लिखिये।
6. मानव शरीर मे जैल व लवण सन्तुलन मे सहायक हार्मोन्स के नाम लिखिये।

ब्लॉक - II

इकाई - 4 स्नायु, ज्ञानेन्द्रियां एवं ग्रन्थियां पोषण

इकाई - 5 पोषण

इकाई - 6 प्रजनन एवं भ्रूण विज्ञान

इकाई - 4 स्नायु ज्ञानेन्द्रियां एवं ग्रन्थियों

इकाई की रूपरेखा

4.0 प्रस्तावना

4.1 उद्देश्य

4.2 स्नायु या तंत्रिका तंत्र (Nervous System)

4.2.1 केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र

4.2.2 परिधीय तंत्रिका तंत्र

4.2.3 स्वायत्त तंत्रिका तंत्र

4.2.4 तंत्रिका कोशिका

4.3 ज्ञानेन्द्रिया (Sensory organs)

4.3.1 जिव्हा

4.3.2 नाक

4.3.3 त्वचा

4.3.4 आंख

4.3.5 कान

4.4 अन्त: स्त्रावी ग्रन्थियाँ (Endocrine Glands)

4.4.1 पीयूष ग्रन्थि

4.4.2 थायरॉयड ग्रन्थि

4.4.3 पैरा थॉयराइयड ग्रन्थि

4.4.4 एड्रीनल ग्रन्थि

4.4.5 अग्न्याशय

4.4.6 अण्डाशय

4.4.7 वृषण

4.5 सारांश

4.6 प्रश्न

4.0 प्रस्तावना

जीवित बने रहने के लिए हमारे शरीर द्वारा अनेक कार्य सम्पन्न होते है। कुछ प्रत्यक्ष जबकि कुछ हमें प्रत्यक्ष रूप से दिखाई नही देते है। जैसे - पाचन, रूधिर परिवहन आदि। इसके आन्तरिक्त हमें गर्मी, ठण्ड, चुभन, डर, भूख, प्यास, यौनेच्छा आदि का भी अनुभव होता है। हम चलना, फिरना आदि दैनिक कार्य भी करते हैं। उपर्युक्त कार्यो का संचालन एवं नियन्त्रण कैरो होता है? हमारे शरीर के विभिन्न अंगों, तंत्रो को सुचारू रूप से संचालित करने तथा उनमें आपस मे समन्वय स्थापित करने के लिए स्नायु तंत्र कार्य करता है। इसके द्वारा बाहरी और आन्तरिक उद्दीपनों के अनुसार कार्य किया जाता है ताकि हम जीवित रह सके। प्रजनन कार्य मे

भी तंत्रिका तंत्र की महत्वपूर्ण भूमिका है। प्रसूति विज्ञान सहायिका को शरीर क्रिया एवं सरचना की जानकारी प्रदान कर के क्रम मे इस इकाई मे स्नायु तंत्र का वर्णन किया गया है।

4.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद प्रसूति विज्ञान सहायिका निम्न के बारे में जान पायेंगी

1. स्नायु तंत्र, इसके प्रमुख अंग व उनके कार्य
2. ज्ञानेन्द्रियां, आंख, नाक जिव्हा, त्वचा
3. ग्रन्थियाँ प्रमुख ग्रन्थियों के प्रकार एवं उनके कार्य
4. ग्रन्थियाँ एवं यौनत्व

4.2 स्नायु या तंत्रिका तंत्र

तंत्रिका तंत्र, तंत्रिकाओं से बना एक जाल है। तंत्रिकाओं से शरीर के सभी भाग जुडे होते है। ये तंत्रिकाएं इनके कार्यो को नियंत्रित करती हैं। तंत्रिकाएं विशेष प्रकार की कोशिकाओं से मिलकर बनी होती हैं जिन्हें तंत्रिका कोशिकायें कहते हैं। तंत्रिका तंत्र हमारे शरीर की भौतिक एवं जैविक क्रियाओं का संचालन एवं नियंत्रण करता है।

तंत्रिका तंत्र को तीन भागो में बाटा जाता है

(1) केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र

(2) परिधीय तंत्रिका तंत्र

(3) स्वायत्त तंत्रिका तंत्र

4.2.1 केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र

यह मुख्य रूप से मस्तिष्क (Brain) एवं मेरूरज्यू (Spinal cord) से मिलकर बना होता है। मस्तिष्क एवं मेरूरज्यू के बारे मे कुछ तथ्य निम्न प्रकार हैं

(अ) **मस्तिष्क (Brain) -** मस्तिष्क सिर के कपाल मे सुरक्षित रहता है। इसका भार लगभग 15 कि ग्रा होता है। यह तंत्रिका तंत्र का प्रमुख अंग है। इसके तीन भाग होते हैं -

(i) प्रमस्तिष्क (ii) अनुमस्तिष्क (iii) मेडुला ऑब्लोंगेटा

(i) प्रमस्तिष्क

- यह सबसे बडा भाग है। यह दो प्रमस्तिष्क गोलार्धो से मिलकर बना होता है।
- प्रमस्तिष्क बोलने, सोचने, याद करने. पहचानने का नियंत्रण एवं नियमन करता है।

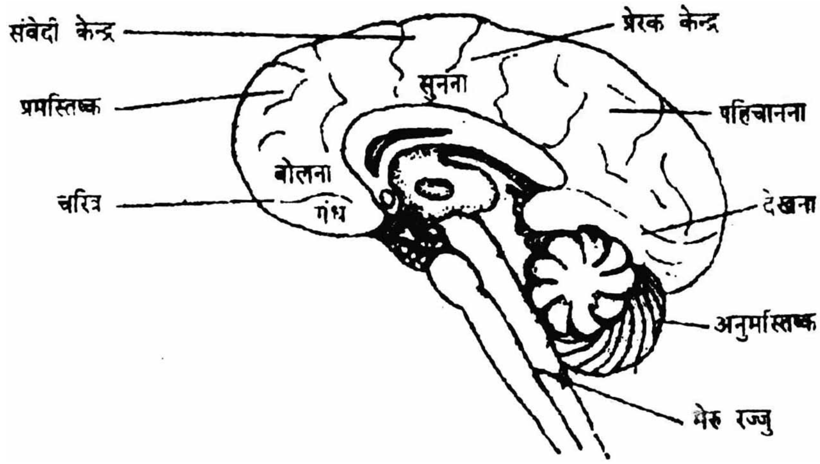

चित्र मस्तिष्क की संरचना एवं विभिन्न कार्य क्षेत्र

(ii) अनुमस्तिष्क

- यह भाग प्रमस्तिष्क से ढका रहता है। यह हाथ, पैर एवं शरीर के सभी अगों की पेशियों पर नियंत्रण एवं नियमन कर शरीर का संतुलन बनाये रखता है।

(iii) मेडुला ऑब्लोगेंटा

- यह भाग बेलनाकार होता है। यह शरीर की अनैच्छिक क्रियाओं जैसे :- पाचन, श्वसन आदि पर नियंत्रण करता

मस्तिष्क के कार्य

- मस्तिष्क सभी 'प्रमुख कार्य जैसे - हृदय की धड़कन, देखना. सुनना, सूंघना, स्वाद, ठंडा-गर्म, दर्द आदि का संचालन एवं नियंत्रण करता है।
- मस्तिष्क अनुभवों के आधार पर ज्ञान को संचित करता है एवं आवश्यकता पडने पर संचित ज्ञान का उपयोग करता

(ब) मेरूरज्यू (Spinal Cord)

जिस तरह मस्तिष्क कपाल में सुरक्षित रहता है उसी तरह मेरूरज्यू रीढ़ की हड्डी (मेरूदण्ड) में सुरक्षित रहती है।

- मेरूरज्यू मुख्य रूप से प्रतिवर्ती क्रियाओं के लिए उत्तरदायी होती है।
- प्रतिवर्ती क्रियाएं बाहरी उद्दीपन के प्रति मेरूरज्यू द्वारा निर्देशित प्रतिक्रियाएं है। जैसे :- काटा लगने पर हम तुरन्त पैर को ऊपर उठा लेते हैं एवं गर्म वस्तु को छूते ही हाथ स्वत: तत्परता से हट जाता है।

इस प्रकार गर्म वस्तु एक उद्दीपन है हाथ से स्पर्श करना एक क्रिया है तथा हाथ का हटाना इसकी प्रतिक्रिया है तथा यह प्रतिक्रिया मेरूरज्यू द्वारा निर्देशित होती है, इसे प्रतिवर्ती क्रिया कहते हैं।

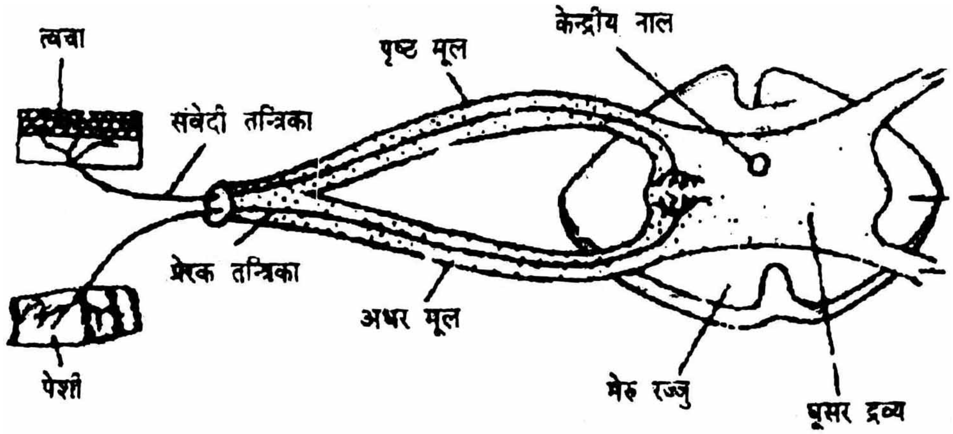

चित्र प्रतीवर्ती क्रिया

4.2.2 परिधीय तंत्रिका तंत्र

परिधीय तंत्रिका तंत्र, तंत्रिकाओं के द्वारा शरीर के सभी भागो में एवं अगो से जुडा रहता है।

- यह ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त सूचनाओ को मस्तिष्क तक लाता है तथा प्राप्त निर्देशों के अनुसार संवेदनाओं को अगों तक पहुंचाता है ।

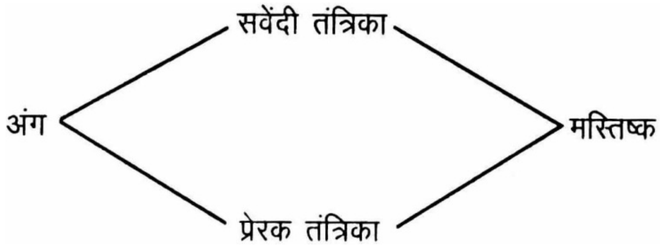

- यह तंत्र तंत्रिकाओं का जाल है जो मस्तिष्क एवं अंगों के बीच स्थित होती है ।
- इस तंत्र से सभी ऐच्छिक क्रियाएं जैसे - चलना, दौड़ना, बैठना, उठना, खाना. पीना, खेलना आदि सम्पादित होती है।

  दैनिक जीवन मे सम्पन्न होने वाले सभी कार्य मस्तिष्क के निर्देशानुसार सम्पन्न होते हैं।

4.2.3 स्वायत्त तंत्रिका तंत्र

स्वायत्त तंत्रिका तंत्र शरीर के सभी आंतरिक अंगों एवं रक्त वाहिकाओं को स्नायु - संपूर्ति करता है। इसका यह नाम इसलिए है क्योंकि ये अग स्व-नियंत्रित होते हैं तथा इच्छा शक्ति के नियंत्रण में नहीं रहते हैं। इस तंत्र द्वारा शरीर की सभी अनैच्छिक क्रियाएं जैसे - लार का बनना, ह्रदय का धचकना, श्वसन, पाचन. उत्सर्जन, आखों की पुतली का फैलाव आदि नियंत्रित होते हैं। स्वायत्त तंत्रिका सदैव जोडे मे होती है। इनकी क्रियाएं विपरीत होती हैं। एक तंत्रिका क्रिया को कम करती है एवं दूसरी तंत्रिका आवश्यकतानुसार क्रिया को बढाती है।

4.2.4 तंत्रिका कोशिका

यह स्पष्ट हो चुका हैं कि तीनों तंत्रो मे तंत्रिकाएं होती हैं। ये तंत्रिकाएं तंत्रिका कोशिका या न्यूरॉन की बनी होती है।

(अ) संरचना : न्यूरॉन की सरचना मे निम्नलिखित भाग होते हैं -

(i) **कोशिका काय (Cell-body) -** यह अंडाकार या गोल भाग है जिसमे केन्द्रक पाया जाता है। कोशिका काय में से अनेक छोटे-छोटे धागेनुमा प्रवर्ध निकलते है जिन्हें द्रुमाश्य (Dendrites) कहते है ।

(ii) **तंत्रिकाक्ष (Axon) -** कोशिकाकाय से एक लम्बी सरचना, तंत्रिकाक्ष निकलती है जो अन्त में धागेनुमा तंतुओं में विभक्त होती हैं।

तंत्रिकाक्ष दो तरह के आवरणों से ढका रहता है, प्रथम श्वसन आच्छद एवं द्वितीय माइलिन आच्छद । इन आवरणों के कारण उद्दीपनों का संचार आगे की ओर होता है।

(ब) तंत्रिका कोशिका की क्रियाविधि

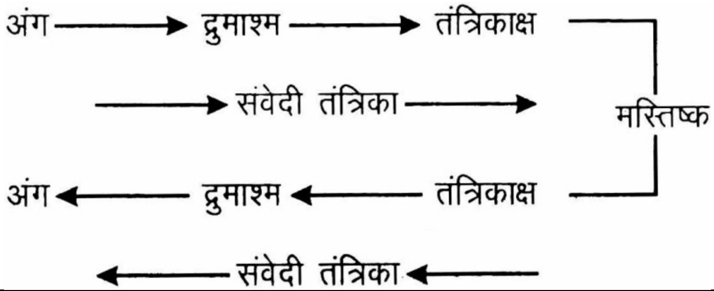

4.3 ज्ञानेन्द्रियां

ज्ञानेन्द्रियां हमारे शरीर में पाये जाने वाले वे अंग हैं जिनकी सहायता से हम बाहरी वातावरण का ज्ञान प्राप्त करते हैं। हमारे शरीर में पाँच ज्ञानेन्द्रियां हैं। इनके नाम एवं कार्य निम्न प्रकार हैं :-

(1) जीभ	-	स्वाद
(2) नाक	-	अना
(3) त्वचा	-	स्पर्श
(4) आंख	-	देखना
(5) कान	-	सुनना

4.3.1 जीभ या जिव्हा (Tongue)

जिव्हा या जीभ मुख गुहा के तल में स्थित होती है। यह मुख्यत: स्वाद से सम्बन्धित ज्ञानेन्द्रिय है। जिव्हा मोटी मांसल एवं लचीली होती है। इसका अधिकांश भाग पेशियों से बना होता है जो दो प्रकार की होती हैं :-

(i) **अन्तःस्थ पेशियाँ -** इन पेशियो के द्वारा जिव्हा की सूक्ष्म गतियां सम्पन्न होती हैं।

(ii) **बहिस्थ पेशियां :** ये जिव्हा को अन्य अगो से जोडती हैं तथा इनके द्वारा चबाने एवं भोजन को निगलने की गतियां सम्पन्न होती हैं।

जिव्हा का ऊपरी भाग अधिपृष्ठ होता है। जिव्हा को मोडने पर जो पिछला भाग दिखता है वह फ्रेनुलम कहलाता है। जिव्हा की श्लेष्मिक कला स्वस्थ व्यक्ति मे आर्द्र तथा गुलाबी होती है। जिव्हा की पृष्ठ सतह अंकुरकों द्वारा आच्छादित होती है। ये अंकुरक तीन प्रकार के होते है -

(1) **परिवृत्त अंकुरक -** यह अंकुरक जिव्हा के आधार भाग की ओर स्थित होते है। ये आकार में सबसे बडे एवं संख्या मे सबसे कम होते हैं।

(2) **कवकी अंकुरक :- ये जिव्हा के छोर तथा पार्श्व में फैले होते हैं तथा इनका स्वरूप कवक** के समान होता है।

(3) **सूत्राकार अंकुरक :-** ये संख्या में सर्वाधिक एवं जिव्हा के सारे पृष्ठ पर स्थित होते हैं।

- **स्वाद कणिकाएं :-** स्वादांकुरों पर स्वाद कलिकाएं होती हैं जो स्वाद का ज्ञान कराती हैं। परिवृत तथा कवकी अंकुरकों पर ये अत्यधिक संख्या में पाए जाते हैं।
- स्वाद संवेदक : जीभ के विभिन्न भाग विभिन्न स्वादों के लिए उत्तरदायी होते हैं। जैसे :-

अग्र छोर	-	मीठा स्वाद
अग्र छोर के बाद	-	नमकीन स्वाद
पार्श्व भाग	-	खट्टा स्वाद
पश्च भाग	-	कड़वा स्वाद ।

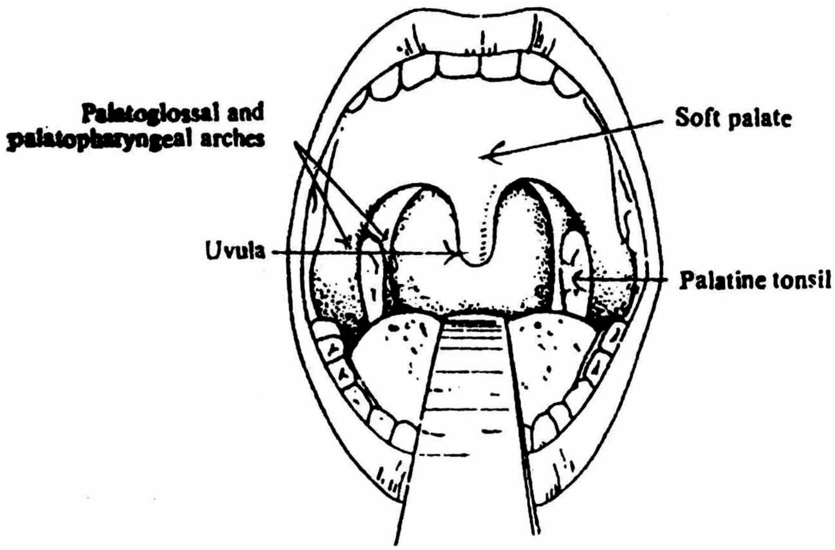

चित्र: जिव्हा

जिव्हा के कार्य

भोजन का स्वाद ज्ञात करना।

भोजन को इधर- उधर पलटना ताकि भली-भांति लार को मिलाया जा सके।

– भोजन को दांतों के बीच ले जाना ताकि उसे चबाया जा सके।
– जिव्हा द्वारा दांतों की सफाई की जाती है।
– मनुष्य में जिव्हा वाणी उत्पन्न करने में सहायक है।
– जिव्हा भोजन को निगलने में सहायक है।

4.3.2 नाक (Nose)

मनुष्य में गन्ध ज्ञान के लिए नाक के भीतर दो लम्बी नासागुहाएं होती हैं। नासागुहाएं उपास्थि की बनी एक लम्बी एवं खडी नासापट्टी (Nasal Septum) द्वारा दायीं एवं बायीं नासागुहाओं में पृथक् रहती हैं। प्रत्येक नासागुहा नाक के छोर पर स्थित बाह्य नासाद्वार से प्रारम्भ होकर

एक अन्त. नासाद्वार द्वारा ग्रसनी के नासाग्रसनी (Nosapharynx) भाग में खुलती है। पूरी नासिका मे अस्थियों एवं उपास्थियों का ढांचा होता है। प्रत्येक नासागुहा को तीन भागो मे विभक्त करते हैं :-

(1) प्रघ्राण भाग (Vestibule)

(2) श्वसन (Respiratry Region)

(3) घ्राण (Olfactory Region)

(i) **प्रघ्राण भाग (Vestibule) :-** बाह्‌य नासाद्वार के पीछे छोटा प्रकोष्ठ होता है। जो सामान्य त्वचा द्वारा आच्छादित एवं रोमयुक्त होता है।

(ii) **श्वसन भाग (Respiratory Region) :-** यह भाग नासास्थि (Nosan bone) एवं मैक्सेलारी हड्डियों से मिलकर बना होता है। इस पर श्लेष्मा का आवरण होता है। तथा यह भाग वायु को नम एय गर्म बनाता है।

(iii) **घ्राण भाग (Olfactory Region) -** इस भाग मे एथमॉइड हड्डी के कुण्डलित उभार होते हैं। यह विशेषीकृत घ्राण एपीथीलियम से ढका रहता है। घ्राण भाग से घ्राण तंत्रिका विशेष पथ द्वारा मस्तिष्क में खुलती हैं। किसी भी प्रकार की गंध आने पर घ्राण भाग में स्थित घ्राण संवेदी कोशिकायें सक्रिय हो जाती हैं एवं सवेदनाओं को मस्तिष्क तक पहुंचाती हैं एवं हमे गंध का ज्ञान होता है।

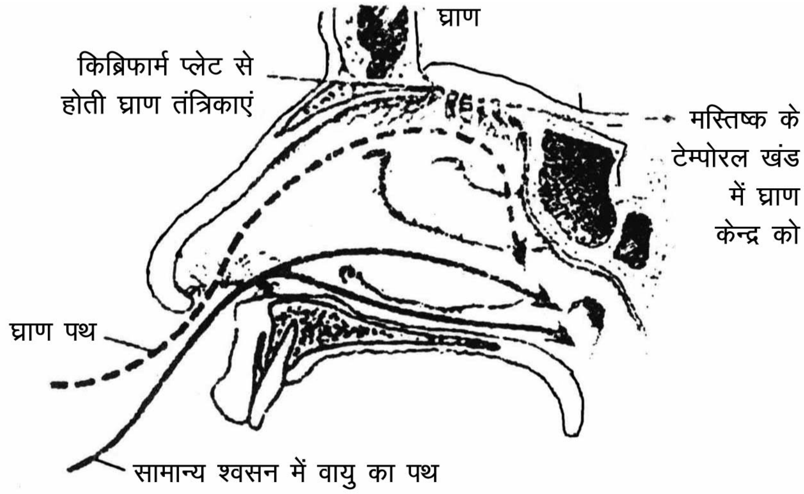

चित्र : नाक

4.3.3 त्वचा (The skin)

त्वचा शरीर का सुरक्षात्मक आवरण है। यह सम्पूर्ण शरीर को ढकती है एवं अदरूनी ऊतकों की सुरक्षा करती है। इसमे कई स्नायुओं के अत: सिरे रहते हैं एवं यह शरीर का तापक्रम नियत्रित करती है।

(अ) त्वचा की रचना

त्वचा को दो स्तरों में विभाजित किया जा सकता है।

(i) एपिडर्मिस

(ii) डर्मिस (कोरियम)

(i) एपिडर्मिस : यह त्वचा का बाहरी स्तर है। इसमें कोशिकाओं की बनी अनेक परते होती हैं जो दो स्पष्ट क्षेत्रों में व्यवस्थित होती हैं। इन पर्तों को सूक्ष्मदर्शी की सहायता से आसानी से देखा जा सकता है। यह रक्त असंवहनी तह है। अर्थात् इसमें रक्त की आपूर्ति नहीं होती है। इसमे स्नायु आपूर्ति भी नहीं होती है। त्वचा की बाहरी सतह से शल्क घर्षण के द्वारा निरन्तर निकलते रहते हे एवं अन्दरुनी कोशिकाएं वृद्धि करके सतह पर आकर नई शल्क के रूप मे निरंतन विकसित होती रहती है।

(ii) **डर्मिस :** यह स्तर एपिडर्मिस के नीचे पाया जाता है। तथा प्रत्यास्थ संयोजी ऊतक का बना होता है। यहां रक्त एवं स्नायु आपूर्ति होती है। त्वचा में स्थित स्नायु अंत: रिश्ते। का अधिकांश भाग संवेदी होता है जिनसे विभिन्न संवेदनों का अनुभव होता है। जैसे :- स्पर्श. ताप, दाब आदि

(ब) त्वचा के सहायक अंग

त्वचा में निम्नलिखित सहायक अंग होते हैं :-

(i) स्वेद ग्रन्थियाँ

(ii) केश अर्थात् बाल

(iii) नाखून

(i) **स्वेद ग्रन्थियां :-** स्वेद ग्रन्थियॉ मुडी हुई नली के आकार की ग्रन्थियां हैं जो त्वचा की गहराई मे स्थित होती हैं। इनकी वाहिकाएं एपिडर्मिस के छिद्रों द्वारा बाहर की ओर खुलती हैं। स्वेद ग्रन्थियाँ पसीना स्रवित करती हैं जो पानी. लवण एवं अन्य उत्सर्जी पदार्थो का बना होता है। स्वेद ग्रन्धियां सम्पूर्ण शरीर पर स्थित होती हैं लेकिन कुछ स्थानों पर ये बडी एवं अधिक मात्रा में होती हैं जैसे - हथेली, तलुए, बगल, जांघों का ऊपरी भाग एवं कपाल।

(ii) **रोम केश अर्थात बाल -** रोमों का विकास रोम कूप में होता है जो उपत्वचा मे गहरे स्थित होते हैं।

- **रोमकूप (Hair Follicles) :-** यह उपत्वचीय कोशिकाओं की परत होती है तथा इसके तल में एक अंकुरक होता है जिससे रोम का विकास होता है।
- **रोम मूल (Hair root) :-** यह रोम कूप में स्थित होता है। इसका निचला भाग कुछ फूला होता है जो रोम बल कहलाता है। यह बल अंकुरक के ऊपर फिट होता है। इस स्थान की कोशिकाएं रोम का विकास करती हैं।
- **रोम काण्ड (**Hair Shaft**) -** रोम का सतह से निकला भाग रोम काण्ड कहलाता है। रोम कूप में अनैच्छिक पेशियां पाई जाती हैं जिन्हें रोमों का खडा करने वाली पेशिया कहा जाता है। स्वेद ग्रन्धियां भी रोम कूप में पाई जाती हैं जो एक वसा पदार्थ सीबम का स्राव करती हैं। यह पदार्थ रोमों को मृदु, चिकना एवं चमकदार बनाए रखता है।

(ब) नख या नाखून

नाखून रूपान्तरिक त्वचा के बने होते हैं। जो अंगुलियों की सुरक्षा करते हैं। नाखून आधार पर स्थित नरम एपीथीलियम कोशिकाओं के मूल से विकसित होते हैं। ये सक्रमण को रोकते हैं यदि नाखूनों का निरन्तर ध्यान न रखा जाए तो सन हो सकती है एवं संक्रमण हो सकता है।

(स) त्वचा के कार्य

त्वचा का तंत्रिका, तंत्र में महत्वपूर्ण स्थान है। (नोट त्वचा एवं त्वचा के अन्य कार्यो के बारे में और अधिक जानकारी इस पाठ्यक्रम की प्रथम इकाई में दी गई है।

4.3.4 आँख यां नेत्र (Eyes)

हमारे शरीर की पांच ज्ञानेन्दियों में से आंख एक मुख्य ज्ञानेन्द्री है। आंख देखने का अंग है और यह नेत्र गुहा मे स्थित रहती है। आंख आकृति में गोलाकार एवं वसा मे अन्त: स्थापित रहती हैं इसका व्यास 25 सेमी होता है। सामने की ओर यह पारदर्शी होती है। इसमे तीन स्तर होते हैं:-

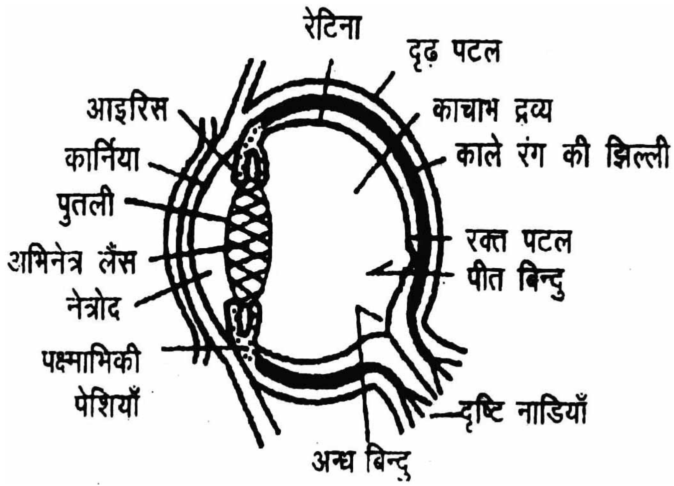

चित्र : मानव नेत्र

1. बाहरी तन्तुमय स्तर
2. रक्त वाहिनी स्तर
3. आन्तरिक स्नायविक स्तर

1. **बाहरी तन्तुमय स्तर -** इसमें दो भाग रहते हैं, श्वेत पटल एवं कॉर्निया।

(i) श्वेत पटल: - यह एक मजबूत अपारदर्शी, झिल्ली है। जो पिछला भाग बनाती है। इसके द्वारा नेत्रगोलक की आकृति सुरक्षित रहती है। इसकी बाह्य सतह सफेद रहती है और आंख का सफेद भाग बनाती है।

(ii) **कॉर्निया :-** तन्तुमय तह का अगला भाग है। यह आंख की सतह से कुछ उभरा हुआ रहता है पारदर्शी होता है, जो प्रकाश की किरणों को आंख में प्रविष्ट होने देता है और रेटीना पर केन्द्रित होने के लिए उन्हें झुकने देता है।

2. रंजक स्तर (रक्त संवहनी स्तर)

इस स्तर में तीन भाग होते हैं (1) कोरॉइड (II) सीलीएरी बॉडी (।।।) आइरिस (पारितारिका)

(i) **कोरॉइड :-** यह आंख के सामने के भाग को छोड़कर सम्पूर्ण भाग पर रहता है । यह गहरे भूरे रग का होता है । यह विशेष रूप से रेटीना को रक्त पूर्ति करता है ।

(ii) **सीलीएरी बॉडी :-** यह मध्य तह का मोटा भाग है । इसमें पेशीय एवं ग्रन्धीय ऊतक रहते हैं । सीलीएरी पेशियां लैन्स की आकृति नियन्त्रित करती हैं और आवश्यकतानुसार दूर या नजदीक की प्रकाश किरणों को केन्द्रित करती हैं । इन्हें समायोजन की पेशियां कहते हैं ।

(iii) **आइरिस -** यह आंख का रंगीन भाग है और यह कॉर्निया व लैंस के मध्य स्थित रहता है क्या दो चैम्बर्स में विभाजित होता है। आइरिस में गोलाकार एवं फैले हुए तन्तुओं के रूप में जमे हुए पेशीय ऊतक रहते हैं जो पुतली को संकुचित करते हैं और फैले हुए तन्तु पुतली को विस्तारित करते हैं । मध्य में एक गोलाकार छिद्र रहता है जिसे प्यूपिल कहते हैं, जो तेज रोशनी को आंख में प्रविष्ट होने से रोकने के लिए संकुचित हो जाता है और कम रोशनी में फैल जाते हैं ताकि अधिक से अधिक रोशनी रेटीना तक पहुंच सके ।

3. **आन्तरिक स्नायविक स्तर:-** इसे रेटीना भी कहते हैं यह एक बहुत ही नाजुक झिल्ली है जो प्रकाश की किरणों को ग्रहण करने के लिए अनुकूल रहती है और इसमें कई स्नायु कोशिकाएं एवं तन्तु रहते हैं । यह रोड्स एवं कोन्स की बनी होती है जिनके अलग-अलग कार्य होते हैं । रोड्स वस्तुओं की हलचल के प्रति संवेदनशील होते हैं एवं कोनर विस्तृत दृष्टि एवं रंगबोध के लिए जिम्मेदार होते हैं । रोड्स विटामिन ए के संश्लेषण के लिए आवश्यक हैं । आहार में विटामिन ए की कमी से रतौंधी रोग होता है । रेटीना के पीछे मध्य भाग के नजदीक एक अण्डाकार पीला क्षेत्र होता है. जिसे मेक्यूला ल्यूटिया कहते हैं. मेक्यूला ल्यूटिया के नाक वाले भाग की तरफ करीब तीन मिलीमीटर दूर ऑप्टिक स्नायु आंख से गुजरती है । इस क्षेत्र को ऑप्टिक डिस्क कहते हैं । यह रोशनी के प्रति असंवेदनशील होता है. इसीलिए इसे अन्ध बिन्दू कहते हैं ।

- **आंख में निम्नलिखित रचनाएं पाई जाती है**

– एक्वीअस टन मर

– विट्रीअस ह्यूमर

– लैंस

1. **एक्वीअस ह्यूमर :-** सीलीएरी ग्रन्थियां पानी जैसा द्रव बनाती हैं । जिसे एक्वीअस ह्यूमर कहते है । यह आंख में लैंस के सामने के भाग मे भरा रहता है और आइरिस एवं कॉर्निया के बीच मे छोटे-छोटे छिद्रों के माध्यम से शिराओं में जाता है।

2. **विट्रीअस ह्यूमर -** रंगहीन पारदर्शी जैली के समान पदार्थ है जो नेत्र गोलक की आकृति बनाए रखता है।

3. **लैंस :-** यह आइरिस के एकदम पीछे स्थित रहता है । यह पारदर्शी बाइकोनवेक्स रचना है जो पारदर्शक लचीले -कैप्सूल में बन्द रहता है। सस्पेंसरी लिगामेन्ट लैंस की स्थिति को बनाए रखने में मदद करते हैं।

- **नेत्र उपांग**

भौहें (Eyebrow). ये मोटी त्वचा के दो चाप होते हैं । जिन पर रोम स्थित होते हैं । इनका कार्य बहुत अधिक प्रकाश से आंख की सुरक्षा करना है ।

पलकें (Eyelids) ये सघन तन्तु ऊतक की बनी दो टार्सल प्लेट होती हैं जो बाहर की ओर त्वचा से तथा भीतर की ओर श्लेष्मा से ढकी रहती हैं । पलकों को पेशियों द्वारा ऊपर उठाया एवं बंद किया जा सकता है। पलकों के किनारों पर पम्प (Eyelashes) जुड़े रहते हैं। ये आंख की धूल तथा प्रकाश से सुरक्षा करते हैं।

- **आंख के कार्य**

आंख का कार्य दृष्टि से संबंधित है ।

दृष्टि की क्रियाविधि

जैसे ही प्रकाश की किरणें पारदर्शी कॉर्निया एक्वीअस झूमर एवं लैन्स से गुजरती हैं, वे झुक जाती हैं, इस प्रक्रिया को रिफ्रेक्शन कहते हैं। इस प्रक्रिया से रोशनी के बडे क्षेत्र में आने वाली किरणों को रेटीना के छोटे क्षेत्र पर केन्द्रित किया जाता है प्रकाश की समानान्तर किरणें जब कानवेक्स लैन्स से टकराती हैं तो रेटीना पर केन्द्र बिन्दु की तरफ झुकती हैं, यदि वस्तु सात मीटर से कम दूरी पर है तो लैन्स की गोलाई बढना आवश्यक है ताकि रेटीना पर उसकी प्रतिच्छाया केन्द्रित हो सके, इसे समायोजन कहते हैं ।

नेत्र में दृष्टि सम्बन्धी निम्न प्रकार के दोष हो सकते हैं -

(1) **निकट दृष्टि दोष :-** इस दोष में मनुष्य पास की वस्तुएँ साफ देख सकता है लेकिन दूर की वस्तुएं साफ नहीं देख पाता।

(2) **दूर दृष्टि दोष -** इस दोष में मनुष्य दूर की वस्तुओं को साफ देख पाता है लेकिन निकट की वस्तुएँ साफ नहीं. देख पाता।

(3) **जरा दृष्टि दोष :-** आयु बढने के साथ लैन्स का लचीला पन कम हो जाने के कारण आंख की समंजन क्षमता घटती है जिससे मनुष्य को न तो दूर की वस्तुएँ स्पष्ट दिखाई देती हैं न निकट की इस दोष को जरा दृष्टि दोष कहते हैं।

(4) **दृष्टि वैषम्य -** यह दोष कॉर्निया की गोलाई में अनियमितता के कारण उत्पन्न होता हैं । इस दोष युक्त आंख में समान दूरी पर स्थित क्षैतिज तथा ऊर्ध्वाधर रेखाओं का एक साथ स्पष्ट प्रतिबिम्ब दिखाई नही देता है।

4.3.5 कान (Ears)

कान सुनने का अंग है । कान को तीन भागों मैं बांटा गया है :-

(i) बाह्य कान

(ii) मध्यकान

(iii) आन्तरिक कान

(i) **बाह्य कान (External Ear,) :** इस के दो भाग होते हैं बाहरी कान (Auricle) और बाह्य श्रवण मार्ग (External auditory meatus)

- बाहरी कान सिर के पार्श्व से उभरा हुआ रहता है । यह ध्वनि तरंगों को एकत्रित करने मे सहायता देता हैं तथा कान की रक्षा करता है ।

- बाह्य श्रवण मार्ग लगभग 4 सेमी लम्बा नली के आकार का मार्ग है । इसका बाह्य एक तिहाई भाग कार्टिलेज तथा भीतरी दो तिहाई भाग अस्थि से बनता है । छिद्र का अन्दरूनी सिरा टिम्पेनिक झिल्ली से बद रहता है कार्टिलेजिनस मार्ग में बाल और कई ग्रन्थियां होती हैं जो एक पदार्थ स्रावित करती है । ये धूल एवं अन्य कोण से इस मार्ग की सुरक्षा करता है।

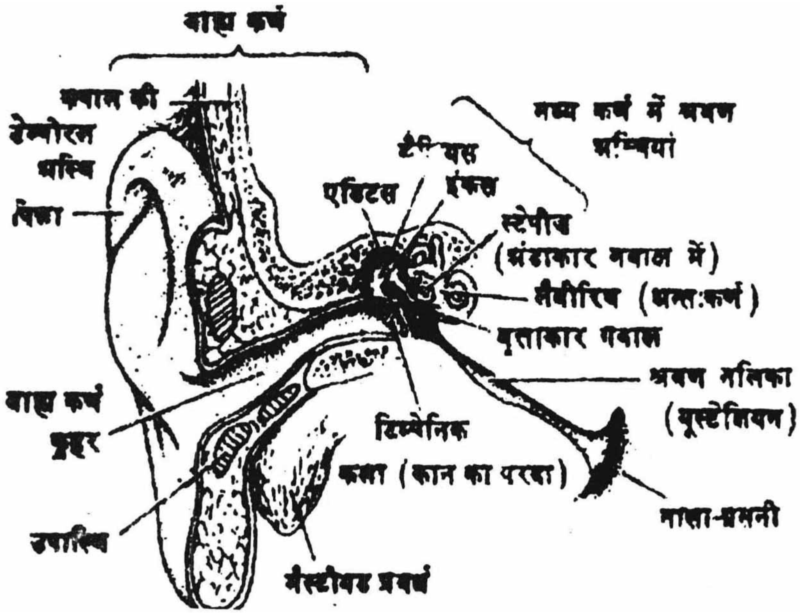

चित्र कान की संरचना

(ii) मध्यकान (Middle Ear) इसे टिम्पेनिक गुहा भी कहते हैं। यह एक छोटा सा वायुमय प्रकोष्ठ होता है जो टिम्पेनिक कला की भीतरी ओर स्थित होता है। टिम्पेनिक झिल्ली इसको बाह्य कण से पृथक करती है। मध्य कर्ण की गुहा से आगे की ओर नासाग्रसनी तक एक ट्यूब होती है जिसे यूस्टेशियन ट्यूब कहते हैं। इस प्रकार टिम्पेनिक कला के दोनों ओर का वायुदाब, एक ओर बाह्यकर्ण द्वारा तथा दूसरी ओर यूस्टेशियन ट्यूब द्वारा सन्तुलित रहता है। मध्यकर्ण में तीन छोटी अस्थियां होती हैं जो कर्णास्थियां कहलाती हैं। ये अस्थि मैलियस इंकस एकंस्टेपस होती हैं। ये श्रृंखला के रूप मे स्थित होती हैं। इन तीन कर्णास्थियों द्वारा विकंपन, कर्णपटक से अन्तःकर्ण तक पहुंचता है।

(iii) **आन्तरिक कान (Internal Ear) :** यह टेम्पोरल अस्थि के पीट्रिअस भाग में स्थित रहता है। यह दो भागों का बना होता है। अस्थि गहन (Bony Labyrimb) एवं झिल्लीमय लैबिरथ (Membrenous Labyrith)। इनमे सुनने तथा शरीर के नियंत्रण से सम्बन्धित कुछ तंत्रिका अन्तरण होते हैं तथा एक विशेष प्रकार का तरल होता है।

– अस्थि लैविरिथ के तीन भाग होते है। वेस्टिब्यूल, अर्ध-वृत कैनाल तथा कौक्लिया।
– झिल्लीमय लैबिरिथ अस्थिमय लैबिरंथ मे स्थित रहता है। इसके अन्तर्गत यूट्रिनल, सैक्यूल, सेमिसरक्यूलर वाहिकाएँ तथा कॉक्लीअर वाहिकाएँ होती हैं।

- कार्य कान के दो मुख्य काय होते है
– श्रवण (सुनना) एवं
– शारीरिक सन्तुलन बनाए रखना।

सुनने की प्रक्रिया ध्वनि तरंगों से टिम्पेनिक झिल्ली के कम्पन्न से ओसाइकिल्स और फैनेस्ट्रा वेस्टिब्यूलाई मे कम्पन्न तथा परिलिम्फ मे कम्पन्न होने के परिणाम स्वरूप होती है। स्नायु उत्तेजन को मस्तिष्क के टेम्पोरल लोब मे स्थित सुनने के केन्द्र तक ले जाता है। जहां से पहचाना एवं समझा जाता है। इसी प्रकार शरीर का संतुलन बनाये रखने मे कान महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

4.4 अन्त: स्त्रावी ग्रन्धियां

हमारे शरीर में निम्नलिखित अन्त: स्त्रावी ग्रन्थियां होती हैं :-

(1) पीयूष (पिट्यूटरी) ग्रन्थि

(2) थायरॉयड ग्रन्थि

(3) पैराथायरॉयड ग्रन्थि

(4) एड्रिनल ग्रन्थि

(5) अग्न्याशय

(6) अण्डाशय

(7) वृषण

4.4.1 पीयूष (पिट्रयटरी ग्रन्थि)

यह मस्तिष्क के निचले भाग मे स्थित होती है। इसका आकार मटर के दाने के समान होता है। यह दो पालियों से मिलकर बनी होती है :- अग्रपालि एवं पश्च पालि। इस ग्रन्थि से कई हार्मोन बनते हैं जो अन्य अन्त: स्रावी ग्रंथियों के कार्यो पर नियन्त्रण करते हैं, अंत: इसे मास्टर ग्रन्थि भी कहते हैं। इससे पिट्यूटराईन हार्मोन निकलता है।

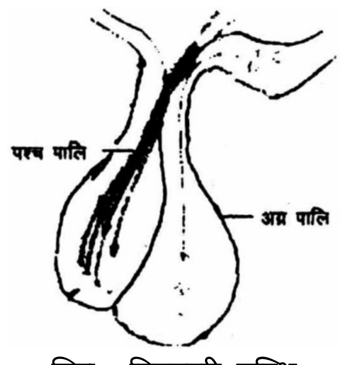

चित्र : पिट्यूटरी ग्रन्थि

- पिट्यूटराइन हार्मोन के कार्य
– पिट्यूटराइन हार्मोन मूत्र में जल की क्षति को कम करता है।
– शारीरिक वृद्धि को प्रेरित करता है।
– थायरॉयड ग्रन्थि को हार्मोन स्रावित करने के लिए प्रेरित करता है।
– स्तन ग्रन्थियों में दुग्ध के स्रवण को प्रेरित करता है ।

- **पिट्यूटराइन हार्मोन के प्रभाव**

क्र. स.	अधिकता	कमी
1.	अधिक सक्रिय होने से उपापचयी क्रियाओं की गति अधिक हो जाती है	उपापचयी क्रियाओं की गति मंद हो जाती है
2.	शरीर की लंबाई सामान्य से अधिक हो जाती है	लंबाई सामान्य से कम हो जाती है

4.4.2 थायरॉयड ग्रन्थि

यह ग्रन्थि श्वास नली के दोनों ओर अधर तल पर स्थित होती है। यह दो पिण्डों से मिलकर बनी होती है। यह ग्रन्थि थायरॉक्सिन हार्मोन स्रावित करती है।

- **थायराक्सिन हार्मोन के कार्य**

– थायराक्सिन हमारे शरीर में होने वाली उपापचयी क्रियाओं पर नियंत्रण करता है।

– यह शरीर के ताप तथा भोजन के आक्सीकरण की गति पर नियंत्रण रखता है ।

– भ्रूणीय अवस्था के विकास में सहायक है।

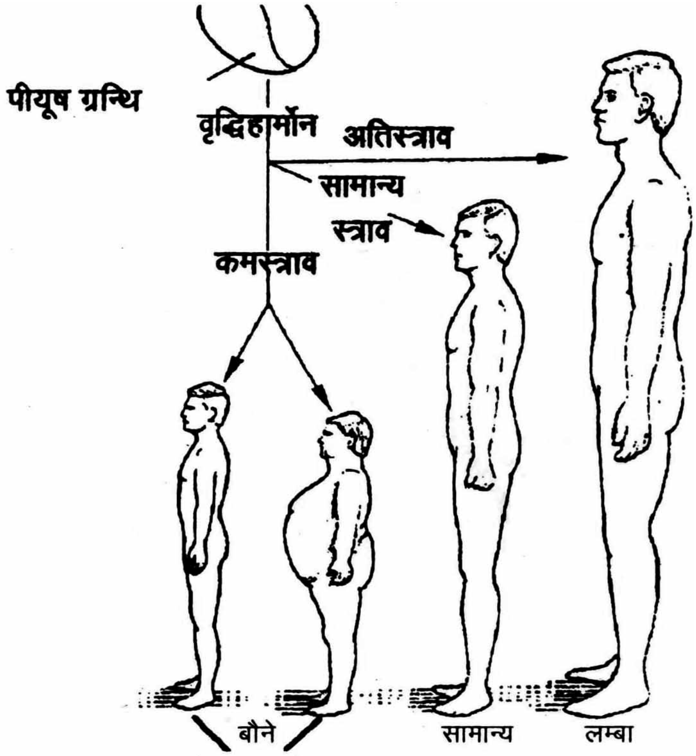

चित्र पिट्यूटराइन हार्मोन के प्रभाव

- **थायराक्सिन हार्मोन के प्रभाव क्रस अधिकता**

क्र. स.	अधिकता	कमी
1.	आक्सीकरण की गति बढ जाती है ।	कमी पेशियाँ कमजोर हो जाती है।
2.	त्वचा लाल हो जाती है तथा शरीर गर्म रहता है।	त्वचा शुष्क हो जाती है।
3.	बैचेनी होती है तथा आवश्यकता से	शरीर में सुस्ती रहती है एवं बाल

	अधिक पसीना आता है।	झडते रहते हैं।
4.	भूख बढ जाती है लेकिन शरीर का वजन कम होने लगता है।	शरीर का वजन बढ जाता है।
5.	था का विकास तीव्रता से होता है।	भूण का विकास विलम्ब से होता हैं।
6.	नेत्र बडे होकर बाहर की ओर निकले हुए दिखाई देते हैं ।	गला फूलकर लटक जाता है इसे गलगण्ड (घेंघा) रोग कहते है ।

- **गलगण्ड रोग से बचाव : आयोडीन युक्त नमक का सेवन करना ।**

4.4.3 पैराथायरायड ग्रन्थि

यह थायरायड ग्रन्थि के साथ स्थित होती है। इनकी संख्या 4 होती है। यह पैराथॉरमोन हार्मोन स्रावित करती है।

- **पैराथॉरमोन हार्मोन के कार्य**

– यह रूधिर में कैल्सियम के स्तर को बढाता है।

4.4.4 एड्रीनल ग्रन्थि

यह ग्रन्थि वृक्क के ऊपरी भाग पर स्थित होती है। अत. इसे अधिवृक्क ग्रन्थि भी कहते हैं। इससे एड्रनलीन हार्मोन स्रावित होता है।

- **एड्रीनलीन हार्मोन के कार्य**

– यह हार्मोन अचानक होने वालो घटना या संकटकालीन परिस्थितियों से सामना करने के लिए तैयार होने में काम आता है।

एड्रीनलीन हार्मोन के प्रभाव

क्र.स	अधिकता	कमी
1	मानसिक तनाव के समय हार्मोन्स का स्रवण अधिक होता है जिससे रुधिर दाब बड़ जाता है श्वसन एवं हृदय की धड़कन तेज हो जाती है तथा आंखो की पुतलियां फेल जाती है।	हृदय की धड़कन कम हो जाती है। रक्त दाब कम हो जाता है।

4.4.5 अग्न्याशय

यह ग्रन्थि अमाशय के नीचे पाई जाती है। अगन्याशय में विशेष कोशिकाओं के समूह होते हैं जिन्हें लैंगरहैन्स द्वीप समूह कहते हैं। ये दो प्रकार के हार्मोन स्रावित करते हैं - इन्सूलिन एवं ग्लूकागोन इन्सुलिन रूधिर मे ग्लूकोज की मात्रा को कम करता है। ग्लूकागोन रूधिर मे ग्लूकोज की मात्रा को बढ़ाता है।

- इन्सुलिन हार्मोन के प्रभाव

क्रस	अधिकता	कमी
1	रुधिर मै ग्लूकोज की मात्रा कम हो जाती है।	रुधिर मै ग्लूकोज की मात्रा हो अधिक जाती है जिससे मूत्र के साथ ग्लूकोज

		अधिक मात्रा मै शरीर से बाहर निकलता है। यह मधुमेह रोग (Diabetes) कहलाता है।

4.4.6 अण्डाशय

अण्डाशय मादा जनन तंत्र का महत्वपूर्ण अंग है जो कि उदर के निचले भाग में स्थित होता है। अण्डाशय से एस्ट्रोजन एवं प्रोजेस्टेरॉन हार्मोन स्रवित होते हैं। ये हार्मोन गौण लैंगिक लक्षणों के विकास एवं प्रजनन तंत्र की परिपक्वता के लिए उत्तरदायी होते हे।

- **स्त्री के गौण लैंगिक लक्षण**

  मादा के गौण लैंगिक लक्षण वे हैं जो जननागों के विकास के समय प्रकट होते हैं । जैसे :- आवाज का पतली होना, स्तनों का विकास, मासिक धर्म प्रारंभ होना, त्वचा का मुलायम होना आदि ।

एस्ट्रोजन एवं प्रोजेस्टेरॉन हार्मोन के प्रभाव अधिकता

क्र.स.	अधिकता	कमी
1.	मासिक धर्म निर्धारित समय से पूर्व प्रारम्भ हो जाता है	मादा मई गोण लैगिक लक्षण कम दिखाई देते है
2.	मासिक चक्र अनियमित हो जाता है	जनन क्षमता मै कमी होने की संभावना रहती है

4.4.7 वृषण

वृषण नर जनन तंत्र का प्रमुख अंग है । वृषण उदरगुहा के बाहर स्थित लटके वृषण कोश में वृषण टेस्टोस्टेरॉन हार्मोन स्रावित करते है

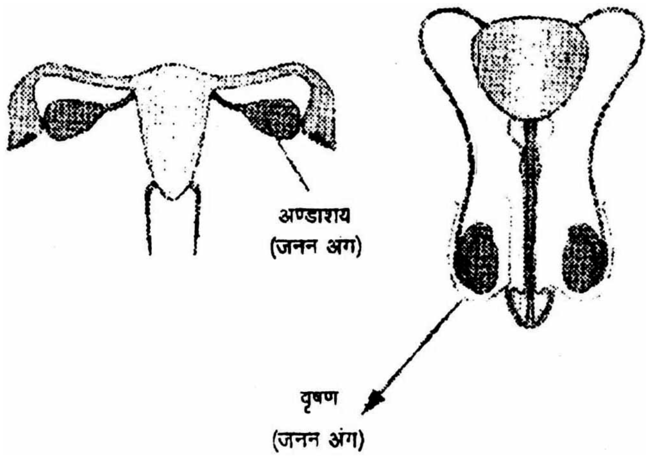

- **टेस्टोस्टेरान हार्मोन के कार्य**

  यह हार्मोन नर के गौण लैंगिक लक्षणों तथा जनन तंत्र की परिपक्वता के लिए उत्तरदायी होता है।

- **पुरूष के गौण लैंगिक लक्षण**

  आवाज का भारी होना, दाढी मूंछों का आना, शरीर पर अधिक बाल आदि।

- **टेस्टोस्टेरॉन के प्रभाव**

क्र.स.	अधिकता	कमी
1.	समय से पूर्व परिपक्वता आ जाती है	नर के गोण लैंगिक लक्षण कम दिखाई देते है। नपुंसकता आ जाती है

इस प्रकार अन्तः स्त्रावी तंत्र अन्तः स्त्रावी ग्रन्थियों से बना होता है। ये ग्रन्थियां विभिन्न हार्मोन स्त्रावित करती हैं जो शारीरिक संतुलन बनाये रखती हैं।

4.5 सारांश

प्रस्तुत इकाई में यह बताया गया है कि स्नायुतंत्र तंत्रिकाओं से बना जाल है। तंत्रिकाएं. विशेष प्रकार की कोशिकाओं से मिलकर बनी होती हैं. जिन्हें तंत्रिका कोशिका कहते हैं। तंत्रिका तंत्र हमारे शरीर की भौतिक एवं जैविक क्रियाओं का संचालन एवं नियन्त्रण करता है। स्नायुतंत्र को तीन भागों मे बांटा गया है. केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र, परिधीय तंत्रिका तंत्र,' स्वायत्त तंत्रिका तंत्र। इसी प्रकार प्रसूति विज्ञान सहायिका के ज्ञानवर्धन हेतु ज्ञानेन्द्रियों का सार संक्षेप भी प्रस्तुत किया गया है। वस्तुतः ज्ञानेन्द्रियां हमारे शरीर में पाये जाने वाले वे अंग हैं जिनकी सहायता से हम बाहरी वातावरण का प्राप्त करते हैं। हमारे शरीर मे पांच ज्ञानेन्दियां हैं जैसे-आंख, नाक, कान, जीभ, त्वचा। इन सभी को संक्षिप्त में वर्णित किया गया है।

अन्तः स्त्रावी ग्रन्थियों का प्रजनन से प्रत्यक्ष सम्बंध है।

यह शरीर मे पाए जाने वाली ग्रन्थिया है जो अपने श्राव (हार्मोन) को सीधे ही रूधिर मे स्रवित करती है। हमारे शरीर मे पीयूष ग्रन्थि एड्रिनल, थायरॉइड अग्न्याशय, अण्डाशय, वृषण आदि अन्त स्रावी ग्रथियाँ हैं।

इन सभी ग्रंथियो तथा उनसे स्रावित हार्मोन्स का अध्ययन. प्रसूति विज्ञान सहायिका के लिए प्रजनन स्वास्थ्य में सहायक हो सके, यही इस इकाई का सार एवं अभीष्ट है।

4.6 प्रश्न

1. स्नायु तंत्र किसे कहते है?
2. स्नायु तंत्र को कितने भागो में बाटा गया है
3. मस्तिष्क के काय लिखिए।
4. तंत्रिका तंत्र की मूल भूत ईकाई का नाम बताइये।
5. प्रतिवर्ती क्रिया किसे कहते है?
6. अन्त. स्त्रावी ग्रन्थि किसे कहते है ?
7. थायरॉक्सीन हार्मोन के कार्य बताइये।
8. जनन ग्रन्थियों के नाम व उनसे स्रावित होने वाले हार्मोन का नाम लिखिए।
9. चार विशिष्ट अन्तः स्त्रावी ग्रन्थियों के नाम लिखिए।

इकाई-5 पोषण इकाई की रूपरेखा

इकाई की रूपरेखा

5.0 प्रस्तावना

5.1 उद्देश्य

5.2 पोषण

5.2.1 पोषण की परिभाषा

5.2.2 पोषक तत्व

5.2.3 प्रोटीन

5.2.4 वसा

5.2.5 कार्बोहाइड्रेट

5.2.6 विटामिन

5.2.7 खनिज लवण

5.2.8 सूक्ष्म मात्रिक तत्व

5.2.9 जल

5.3 सन्तुलित आहार

5.3.1 विभिन्न वर्गों की पोषण आवश्यकताएं

5.4 कुपोषण

5.4.1 कुपोषण की पहचान

5.4.2 कुपोषण की समस्याएं

5.5 सारांश

5.6 प्रश्न

5.0 प्रस्तावना

मानव जीवन की आवश्यकताएं सक्रियता से पूर्ण होती हैं। इन कार्यों के लिए निरन्तर ऊर्जा की आवश्यकता होती है। गर्भकाल के दौरान भी ऊर्जा की आवश्यकता होती है। इस अवधि मे ऊर्जा की जरूरत और भी अधिक बढ जाती है। यह ऊर्जा हमें भोजन से प्राप्त होती है। भोजन में विभिन्न पोषकीय तत्व होते हैं जो यह ऊर्जा प्रदान करते हैं।

अत: एक प्रसूति विज्ञान सहायिका के लिए यह जानना आन्त आवश्यक है कि भोजन में क्या पोषकीय तत्व होते हैं? हमारे भोजन में इनकी क्या मात्रा होनी चाहिए? इन पोषकीय तत्वों के स्त्रोत एवं कार्य क्या हैं? तथा गर्भकाल एवं प्रसूति अवस्था में पोषण का क्या महत्त्व है? इस इकाई में हम पोषण, पोषकीय तत्व एवं इनके कार्यो का विस्तार से अध्ययन करेंगे।

5.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद प्रसूति विज्ञान सहायिका निम्न के बारे में समझेंगी -

1. पोषण क्या है?
2. विभिन्न पोषकीय तत्व, उनके स्त्रोत एवं कार्य।
3. पोषकीय तत्वो की कमी से होने वाले रोग।
4. संतुलित आहार क्या है?
5. कुपोषण क्या है?

5.2 पोषण

आहार जीवन की प्राथमिक आवश्यकता है। हम जो आहार लेते हैं उसका शरीर में पाचन किया जाता है। पाचन के फलस्वरूप प्राप्त होने वाले तत्व शरीर की वृद्धि और सुरक्षा के काम आते हैं। भोजन से कार्य करने के लिए शक्ति भी प्राप्त होती है।

5.2.1 पोषण की परिभाषा

शब्द पोषण आम प्रचलन में उस सक्रिय प्रक्रिया का द्योतक है जिसमें खाये गये भोजन का उपयोग शरीर के पालन एवं सम्बर्धन के लिए होता है।

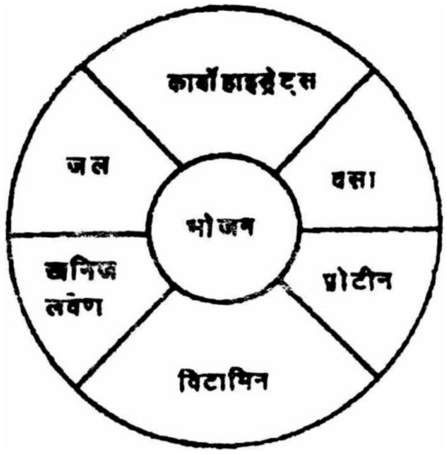

चित्र. भोजन शेर पोषकीय तत्व

एक अन्य अर्थ में शब्द पोषक या आहार घटक विशिष्ट रासायनिक यौगिकों जैसे-विटामिन. खनिज. अमीनो एसिड आदि के लिए प्रयुक्त होता है।

5.2.2 पोषक तत्व

वैज्ञानिकों द्वारा किये गये अध्ययनों से पता चला है कि भोज्य पदार्थो में अनेक रासायनिक तत्व मौजूद रहते हैं जो पोषक तत्वो के नाम से जाने जाते हैं। ये हैं :-

(1)	प्रोटीन	(2)	कार्बोहाइड्रेट	(3)	वसा
(4)	खनिज लवण	(5)	विटामिन	(6)	जल

आगे के पृष्ठों में इन पोषक तत्वों का संक्षिप्त वर्णन दिया जा रहा है।

5.2.3 प्रोटीन (Protein)

शब्द प्रोटीन का अर्थ है - प्रथम महत्व का। वस्तुत: मनुष्य के पोषण में इनका सर्वाधिक महत्व है। प्रोटीन की संरचना में कार्बन. हाइड्रोजन, आक्सीजन. नाइट्रोजन और गंधक विभिन्न अनुपात में हैं। प्रोटीन में नाइट्रोजन का होना उन्हें कार्बोहाइड्रेट और वसा से भिन्न करता है। प्रोटीन की

रचना अमीनों एसिड नामक साधारण पदार्थो से होती है। मानव शरीर में लगभग 24 अमीनों एसिड पाये जाते हैं। जिनमें से आठ आन्त आवश्यक कहलाते हैं। यह हैं - आइसोल्यूसिन, लयूसिन, मिथियोनीन फिनाइल ऐलेनाइन थ्रेयोंनाइन, ट्रिप्टोफेन एवं वेलिन। इन्हें ' 'आन्त आवश्यक एमीनों एसिड (Essential Aminoacids) इसलिए कहते हैं क्योंकि शरीर इन्हें पर्याप्त मात्रा में संश्लेषित नहीं कर सकता और इस कारण इन्हें खाये जाने वाले भोजन से ही प्राप्त करना होता है।

कार्य : -

शरीर को प्रोटीन की आवश्यकता निम्न कार्यो के लिए है :

(1) वृद्धि और विकास।

(2) शरीर के ऊतकों की मरम्मत और उनका रख-रखाव।

(3) प्रतिपिण्डों, एन्जाइम और हार्मोन का संश्लेषण।

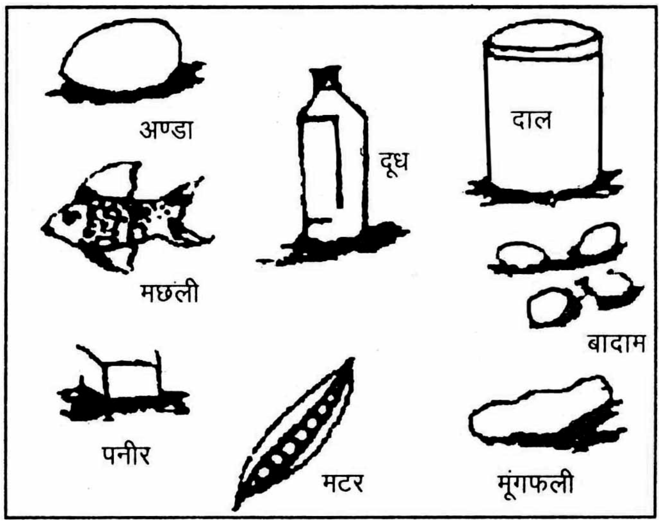

चित्र : प्रोटीन के कुछ स्त्रोत

स्रोत

प्रोटीन के आहार स्त्रोत मुख्य रूप से दो हैं

(1) प्राणी स्रोत (Animal Source) :- दूध, अण्डे, मांस, मछली आदि

(2) वनस्पति स्रोत (Vegetable source) :- दालें, अनाज, गिरी आदि

दैनिक आवश्यकता :

1 ग्राम / प्रति एक किलोग्राम शरीर के वजन के अनुसार प्रोटीन की प्रतिदिन आवश्यकता होती है। बच्चे गर्भवती महिला तथा स्तनपान कराने वाली महिलाएं, जिन्हें आन्तरिक्त प्रोटीन की आवश्यकता होती है, इनके अपवाद हैं।

प्रोटीन की कमी के परिणाम

प्रोटीन की कमी के परिणाम संक्षेप में निम्नानुसार हैं।

(1) गर्भावस्था में :- मृत प्रसव, जन्म के समय कम वजन, अरक्तता इत्यादि।

(2) शैशवकाल एवं प्रारम्भिक बाल्यावस्था :- सूखा रोग, क्वाशियोरकर, मानसिक मन्दता, अवरूद्ध वृद्धि एवं विकास इत्यादि।

(3) वयस्क रंजन की कमी, अल्पवजन, दुर्बल-पेशी विन्यास, अरक्तता, संक्रमण की अधिक प्रवणता. बार-बार पतले दस्त लगना, सामान्य सुस्ती, लगातार काम करने की अक्षमता, घाव ठीक होने में देरी, यकृत का सूत्रण रोग, जलोदर आदि।

5.2.4 वसा (Fat)

वसा में कार्बन, हाइड्रोजन और आक्सीजन रहती है। ये वसीय अम्ल नामक छोटी इकाईयों से बनते हैं। कुछ वसा जैसे मूंगफली तेल, जिंजली तेल सामान्य तापक्रम पर द्रव रहती हैं जबकि कुछ वसा जैसे घी और मक्खन घनीभूत रहती हैं। वसा का वर्गीकरण संतृप्त वसा और असंतृप्त वसा में भी किया जाता है। मोटे तौर पर प्राणी जन्य वसा 'संतृप्त वसा' ' और वनस्पति जन्य तेल और वसा असंतृप्त वसा है।

कार्य :

वसा के कार्य निम्नलिखित हैं

(1) भोजन से प्राप्त वसा ऊर्जा का सान्द्रित स्रोत है। एक ग्राम वसा ऊर्जा की 9 कैलोरी की पूर्ति करती हैं। बराबर वजन के कार्बोहाइड्रेट या प्रोटीन से प्राप्त कैलोरी की मात्रा से यह लगभग दुगुनी है।

(2) वसा, वसा घुलित विटामिन अर्थात विटामिन A,F,E,K के वाहक हें।

(3) भोजन की वसा, ' 'आन्तआवश्यक वसा अप्ल (Essential Fatty Acids) ' की पूर्ति करती है। लाइनोलेक एसिड. एक आन्त आवश्यक वसा अन्त, शल्की त्वचा निर्माण को रोकती है। सामान्यत: त्वचा की सुस्वस्थता की वृद्धि और अनुरक्षण के लिए आन्तआवश्यक वसीय अम्ल की आवश्यकता पड़ती है।

(4) शरीर के तापमान को स्थिर रखने में त्वचा के नीचे की वसा परत का योगदान महत्वपूर्ण है।

(5) हृदय, वृक्क जैसे शरीर के कई अंगों को वसा संभरण प्रदान करती है।

(6) वसा युक्त भोजन स्वादिष्ट होता है।

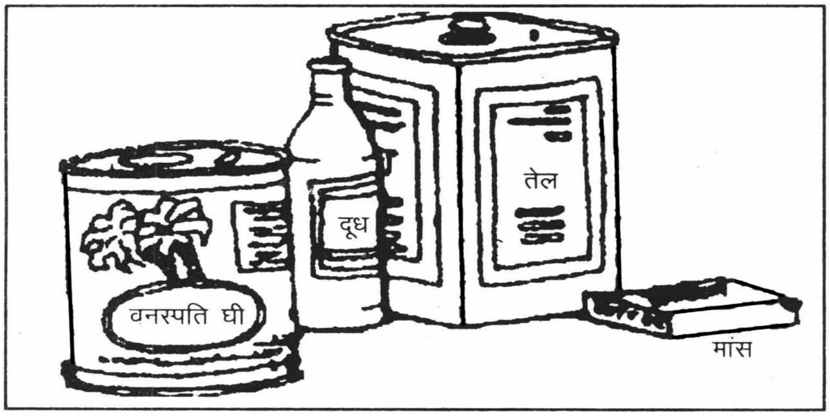

चित्र : वसा के कुछ स्त्रोत

स्त्रोत : -

भोजन में वसा दो मुख्य स्त्रोतों से प्राप्त होती है।

- प्राणीजन्य स्रोत (Animal Source). ये हैं - घी. मक्खन, मांस की वसा, मछली का तेल आदि।
- वनस्पति स्रोत (Vegetable Source) ये हैं - वनस्पति तेल जैसे मूंगफली जिंजली, सरसों. बिनौला, कुसुम (कर्डी), नारियल तेल आदि।

दैनिक आवश्यकता :

भारत में पोषण विशेषज्ञों ने वयस्कों के लिए 15 ग्राम प्रत्यक्ष वसा की दैनिक मात्रा की अनुशंसा की है। कुल कैलोरी आवश्यकता में वसा, संतुलित आहार की कुल कैलोरी की 30 से 40 प्रतिशत मात्रा उपलब्ध करा सकती है।

वसा और रोग :

वसा के अत्यधिक उपभोग से मोटापा और रक्त वाहिकाओं के रोग हो जाते हैं। कोलेस्ट्रॉल बढने से धमनी की भित्तियों पर इसकी परत जम जाती है जिससे हृदय विकार की संभावना हो जाती है। अत्यावश्यक वसीय अम्लों की कमी से त्वचा कठोर और शुष्क हो जाती है। त्वचा कान्तिहीन हो जाती है।

5.2.5 कार्बोहाइड्रेट (Carbohydrate)

कार्बोहाइड्रेट, कार्बन, हाइड्रोजन और आक्सीजन से बनते हैं। ये ऊर्जा के सबसे सस्ते स्रोत हैं। भारतीय भोजन में कार्बोहाइड्रेट की मात्रा बहुत अधिक होती हैं। यह वांछित कैलोरी की लगभग 90 प्रतिशत होती है। जबकि संतुलित आहार में कार्बोहाइड्रेट से उपलख कैलोरी की कुल मात्रा 50-60 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए। अधिक मात्रा में लेने पर कार्बोहाइड्रेट शरीर मे वसा में परिवर्तित हो जाती है।

कार्य :

कार्बोहाइड्रेट के प्रमुख कार्य निम्न है -

1. ये शारीरिक क्रियाओं हेतु ऊर्जा प्रदान करते हैं।
2. वसा के आक्सीकरण हेतु आवश्यक हैं।
3. ये ऊतकों में संग्रहित हो जाते हैं तथा आवश्यकता पडने पर शरीर द्वारा उपयोग मे लिये जा सकते हैं।
4. इनसे भोजन जायकेदार हो जाता है।

स्रोत :

कार्बोहाइड्रेट के तीन स्रोत हैं

1. स्टार्च : यह अनाज (चावल, गेहूं आदि), कन्दों (आलू में पाये जाते हैं।
2. शर्करा : (अ) मोनोसैकेराइड ग्लूकोज, फ्रक्ट्रोज, माल्टोज
   (ब) डाइसैकेराइड सुक्रोज, लेक्टोज माल्टोज़

3. सेल्यूलोज : यह सब्जियों, फलों और अनाजों में पायी जाने वाली कठोर रेशेदार परत है। यह मुश्किल से पचती है और इसका कोई पोषणात्मक महत्व नहीं है। तथापि सेल्यूलोज रुक्षांश (Roughage) का काम करती है और है।

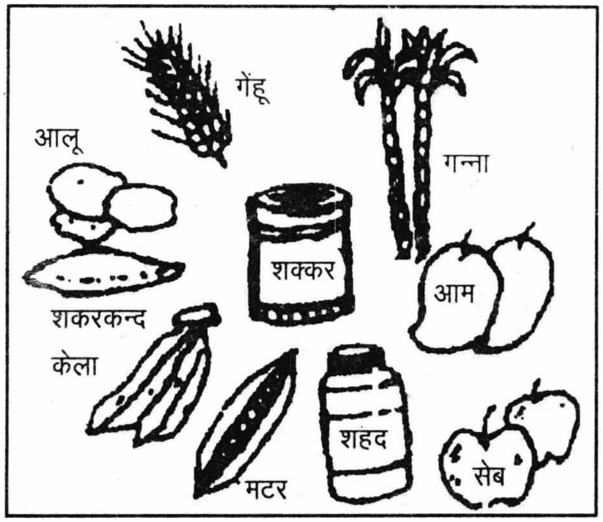

चित्र : कार्बोहाइड्रेट के कुछ स्त्रोत

आवश्यकता: संतुलित आहार में कैलोरीज की मात्रा का कम से कम 40 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट्स होने चाहियें।

5.2.6 विटामिन (Vitamins)

विटामिन मिश्रित रासायनिक पदार्थ हैं। शरीर को इनकी बहुत कम मात्रा की आवश्यकता होती है। वसा और कार्बोहाइड्रेट के समान ये ऊर्जा प्रदान नहीं करते। परन्तु इनकी भूमिका कम नही है। ये मनुष्य के अस्तित्व के लिए अनिवार्य हैं क्योंकि अनेक शारीरिक प्रक्रियाओं में ये उत्प्रेरक का कार्य करते हैं। ये अस्वस्थता, संक्रमण और रोग से शरीर की रक्षा करते हैं।

शरीर को लगभग 13 विटामिनों की आवश्यकता होती है। चूंकि शरीर उनका उत्पादन नही कर सकता। अत: उन्हें भोजन द्वारा उपलख कराना चाहिए। सामान्यतया सन्तुलित आहार, शरीर के लिए विटामिन की दैनिक आवश्यकता की पूर्ति करता है ।

वर्गीकरण :

विटामिनों का वर्गीकरण, दो मुख्य वर्गो में निम्नानुसार है

(1) वसा मे घुलनशील विटामिन

- विटामिन A या रेटिनॉल
- विटामिन B
- विटामिन D
- विटामिन E

(2) जल मे घुलनशील विटामिन

- थायमीन (विटामिन B1)
- राईबोफ्लोविन (विटामिन B2)

- निकोटिनिक एसिड
- पायरीडाक्सिन (विटामिन B6)
- पेंटोथोनिक एसिड
- फॉलिक एसिड
- विटामिन B12
- एस्कॉर्बिक एसिड (विटामिन C)

1. वसा में घुलनशील विटामिन

यहां पर इनका संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है।

(i) विटामिन ए

विटामिन ए वसा में घुलनशील विटामिन है। इसका रासायनिक नाम रेटिनाल है।

कार्य :

विटामिन ए के कार्य अभी तक ठीक से स्पष्ट नही हैं । ज्ञात कार्य हैं :-

(1) स्वस्थ नेत्र ओर सामान्य दृष्टि के लिए आवश्यक है।

(2) शरीर मे स्वस्थ उपकला ऊतकों जैसे त्वचा, श्लेष्मलकला के लिए आवश्यक है।

(3) विकास एवं वृद्धि, विशेषकर कंकाल वृद्धि से सम्बन्धित है।

(4) संक्रमण प्रतिरोधी है अर्थात शरीर को जीवाणु सक्रमण से सुरक्षित करती है।

स्रोत :

- प्राणीजन्य स्रोत :- प्राणीजन्य भोजन जैसे मक्खन, घी, अंडे, दूध, यकृत और मछली विटामिन ए के अच्छे स्रोत हैं।
- वानस्पतिक स्रोत :- विटामिन ए का सबसे सस्ता स्रोत हरी पत्ती वाली साग सब्जी है, जैसे पालक, चौलाई, सहिजन एवं अन्य सब्जियां जैसे गाजर, लौकी आदि । पके फल (आम, पपीता आदि) भी अच्छे स्रोत हैं।

दैनिक आवश्यकता :

वयस्क	:	750 माइक्रोग्राम
शिशु	:	400-300 माइक्रोग्राम
बालक	:	600 माइक्रोग्राम

कमी के परिणाम :

विटामिन ए की कमी के कुछ परिणाम निम्नानुसार हैं

- **रतौंधी (Night Blindness) :** रतौंधी या कम प्रकाश में देखने की अक्षमता विटामिन ए, की कमी का प्रारम्भिक लक्षण है।
- **शुष्क नेत्र प्रदाह.:** शुक नेत्र प्रदाह का अर्थ है नेत्र की शुष्कता। पलकों को लगभग आधा मिनट तक खुला रखने पर नेत्र का सफेद भाग 'शुक" हो जाता है। विटामिन ए की कमी का यह प्रारम्भिक नैदानिक लक्षण है। इसके आन्तरिक्त नेत्रश्लेष्मला कीचड़दार और शिकनयुक्त दिखाई देता है।

- **बिटाट स्पॉट्स** : ये नेत्र श्लेष्मला पर दिखाई देने वाली भूरी सी, त्रिकोणी उठी हुई, झागदार चिजिया या धब्बे है।
- **स्वच्छपटल मृदूता** : आंख का स्वच्छपटल नरम हो जाता है और अपनी पारदर्शिता खो देता है। स्वच्छ मण्डल (कार्निआ) आंशिक या पूर्ण रूप से नरम हो सकता है यदि तत्काल उपचार न किया जाय तो नेत्रगोलक पूर्णरूप से क्षतिग्रस्त या नष्ट हो सकता है जिसका परिणाम अन्धत्व है। एक बार इस स्थिति में पहुंचने पर अच्छे से अच्छा भोजन या उपचार नेत्र ज्योति लौटा नहीं सकता।

संग्रह : अधिक मात्रा में लिया गया विटामिन ए कुछ महीनों तक यकृत में संग्रहित किया जा सकता है। अध्ययन से पता चला है कि यदि गर्भवती माँ को गर्भावस्था के अंतिम 100 दिन में विटामिन ए की पूरक मात्रा दी जाय तो नवजात शिशु के यकृत में विटामिन ए का अधिक संग्रह होगा। अन्य की अपेक्षा ऐसे शिशु में विटामिन ए की कमी की संभावना कम रहती है। ऐसी माँ के दूध में विटामिन ए की मात्रा भी काफी अधिक होगी। तथापि लम्बी अवधि तक विटामिन ए का अधिक सेवन विषाक्त हो सकता है। इसके लक्षणों में सिरदर्द, उनींदापन वमन और त्वचा से अधिक पपड़ी निकलना हो सकते हैं।

(ii) विटामिन डी

विटामिन डी कई रूपों मे रहता है, परन्तु पोषण की दृष्टि से मुख्य है -

(1) विटामिन D_2 या Ergocalciferol

(2) विटामिन D_3 या Cholecalciferol

- विटामिन D_2 प्रकृति में नही होता। विटामिन D3 प्राणीजन्य वसा और मछली तेल में बहुत होता है। यह मानव त्वचा पर धूप लगने पर 7-डिहाइड्रोकोलेस्टराल से भी बनता है।

कार्य :

- विटामिन D स्वस्थ अस्थियों और दांतों के निर्माण के लिए आवश्यक है। अस्थियों के खनिजीकरण पर इसका प्रत्यक्ष प्रभाव होता है।
  यह आंतों के द्वारा Ca (कैल्शियम) और P (फास्फोरस) अवशोषण और उपयोग में सहायक है।

स्रोत :

- **धूप** : यह प्राकृतिक स्रोत है, विशेषकर भारत मे / प्रोविटामिन 7-डिहाइड्रोप कोलेस्टोरोल जो सामान्यत: त्वचा में रहता है, धूप की पराबैंगनी किरणों की क्रिया से विटामिन D_3 में परिवर्तित हो जाता है। त्वचा में विटामिन D_3 के संश्लेषण की गति शरीर पर धूप पडने की अवधि और त्वचा में रजक की मात्रा पर निर्भर होती है। रंजक जितना अधिक होगा. संश्लेषण उतना ही कम होगा।
- **भोजन** : विटामिन D वाले आहार मे सम्मिलित है - अण्डे. यकृत. मछली और मछली तेल। मछली तेल मे सबसे अधिक D है। दूध मे सामान्यत: यह कम होता है। यह वनस्पति मूल के भोजन में नहीं पाया बनाता है।

दैनिक आवश्यकता.

- **वयस्क** : वयस्कों को प्रतिदिन 25 जबकि शिशु या बालक को 5 माइक्रोग्राम की आवश्यकता' है। अधिकांशत: सामान्य वयस्क. विटामिन पर्याप्त मात्रा मे धूप से प्राप्त करते हैं।
- **गर्भावस्था, स्तनपान और बढते हुए बच्चे** : इन अवस्थाओं में विटामिन D की काफी मात्रा आवश्यक होती है। यह दैनिक व D माइक्रोग्राग या 400 I.U. तक हो सकती है।

विटामिन D शरीर में संचित होता है। इसलिए अत्यधिक मात्रा मे लेने पर विषाक्त लक्षण उत्पन्न हो सकते हैं। इनमें जी मितलाना, वमन. भूख की कमी. अत्यधिक पेशाब आदि लक्षण दिखाई दे सकते हैं। विषाक्तता की आन्त होने पर वृक्क, फुप्फुस और हृदय जैसे कोमल ऊतक क्षतिग्रस्त हो सकते हैं, जिससे मृत्यु तक हो जाती है।

कमी :

विटामिन D की कमी से बच्चों में सूखारोग और वयस्कों मे अस्थिमृदुता होते हैं। इन दोनों स्थितियों में अस्थियों में सामान्य से कम कैल्सियम होता है। बच्चे जिन्हें सीधी धूप नहीं मिलती हैं और जो दैनिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए अण्डे सरीखे प्राणीजन्य आहार नहीं लेते. सामान्य: सूखारोग से ग्रस्त होते हैं। अस्थिमृदुता (जिसका अर्थ अस्थियों का नरम होना है) वयस्कों. विशेषकर गर्भवती ओर स्तनपान वाली महिलाओं तथा वृद्धों का रोग है।

(iii) विटामिन E

विटामिन D कई खाद्य पदार्थो में व्यापक रूप से पाया जाता है। मास, फल और सब्जियों में यह अल्प मात्रा में उपलब्ध है। सबसे अच्छे स्रोत वनस्पति तेल (जैसे सूरजमुखी, बिनौले, कुसुम तेल) हैं। चूंकि विटामिन D अनेक आहारों में उपलब्ध है अत: संतुलित भोजन वाले व्यक्ति इसकी कमी महसूस नहीं करते। वास्तव में पोषण में विटामिन E की भूमिका अभी तक ज्ञात नहीं है। तथापि जानवरों में, बारबार गर्भपात. वृषण एवं हृदपेशी विकृति का संबध विटामिन D की कमी से जाना जाता है।

(iv) विटामिन K

विटामिन K ताजी हरी सब्जियों और फलों इत्यादि में रहता है। यह थोडा बहुत आंत्र जीवाणुओं से भी संश्लेषित होता है। इसकी आवश्यकता रक्त मे अच्छी तरह से थक्के बनने के लिए है। अत: इसे रक्तस्राव को रोकने और उपचार के लिए प्रयोग किया जाता है। विटामिन K की कमी नवजात शिशुओं में हो सकती है क्योकि उनका आंत्रक्षेत्र जीवाणुहीन होता है। पित्तलवण की कमी से सामान्य संतुलित भोजन करने वाले वयस्कों में विटामिन K की कमी बहुत विरली है। वयस्कों के लिए विटामिन K की दैनिक आवश्यकता ज्ञात नही है।

2. जल में घुलनशील विटामिन

(i) थायमीन या विटामिन B1

थायमीन या विटामिन B1 जल में घुलनशील है। यह B वर्ग का महत्वपूर्ण विटामिन है। यह ताप से अपेक्षाकृत अप्रभावित रहता हैं परन्तु निष्क्रिय या क्षारीय घोल में नष्ट हो जाता है।

कार्य :

कार्बोहाइड्रेट चयापचय में थायमीन की भूमिका महत्वपूर्ण है। इसकी कमी से ऊतकों और शारीरिक तरल में पाथरूविक अम्ल और दुग्धाम्ल जमा हो जाता है।

तन्त्रिका प्रणाली के सुचारू संचालन के लिए भी यह आन्त आवश्यक है।

स्त्रोत :

थायमीन सभी प्राकृतिक खाद्य पदार्थो में थोड़ी मात्रा में पाया जाता है। यह सबसे अधिक बिना पिसे अनाज, दालें और गिरी, विशेषकर मूंगफली में होता है। भारतीय भोजन में थायमीन के मुख्य स्रोत अनाज (जैसे गेहूं चावल) हैं । जो 60 से 85 प्रतिशत आवश्यकता की पूर्ति करते है। मांस मछली. अण्डे, सब्जी और फलों में विटामिन B अपेक्षाकृत कम रहता है।

क्षति :

अनाज को धोने और पकाने में थायमीन शीघ्र नष्ट हो जाता है। चावल को मिल में कूटने से थायमीन काफी मात्रा में नष्ट हो जाता है। इसके विपरीत उसनाना और हाथकुटे चावल से थायमीन सुरक्षित रहता है। फलों और सब्जी को लम्बे समय तक रखने से यह आशिक रूप से नष्ट होता है।

दैनिक आवश्यकता

थायमीन की दैनिक आवश्यकता 0.5mg 1000 कैलोरी है।

कमी से हानि :

थायमीन की कमी से बेरीबेरी पेशीय कमजोरी इत्यादि होती हैं। मामूली कमी से टखनों और घुटनों मे झटके का अभाव तथा पिंडलियों में वेदना पाई जाती है। शिशुओं में होने वाली बेरी-बेरी को ' शिशु बेरीबेरी ' कहते है।

(ii) रिबोफ्लोविन या विटामिन B_2 -

कार्य : इसके द्वारा प्रोटीन, वसा और कार्बोहाइड्रेट का चयापचय होता है।

स्रोत : दूध और इससे बने पदार्थ, अण्डे, लिवर और हरी पत्तीदार सब्जियां अच्छे स्रोत हैं। गेहूं बाजरा और दाल मे यह मामूली मात्रा में रहता है परन्तु चावल में बहुत कम रहता है। रिबोफ्लोविन अंकुरित दलहनों से भी मिलता है। बडी आत में जीवाणुओं द्वारा संश्लेषण एक आन्तरिक्त स्रोत है।

दैनिक आवश्यकता 0 .6mg 1000 कैलोरी है।

कमी से हानि : कमी के लक्षण हैं

छाले, होंठ फटना, जीभ मे जलन, आखों मे लालिमा और जलन, त्वचाशोथ।

(iii) नियेसिन

कार्य : नियेसिन या निकोटिनिक एसिड की आवश्यकता शरीर को कार्बोहाइड्रेट के उपयोग और ऊतक श्वसन के लिए पडती है

स्रोत : अनाज के दाने. दलहन. गिरी, मांस, लिवर और चूजों में अच्छी मात्रा में रहता है। मक्का में बहु त कम परन्तु मूंगफली में विशेष अधिक रहता है।

आवश्यकता : दैनिक आवश्यकता 6.6.mg 100 कैलोरी है।

कमी : इसकी कमी से पेलाग्रा रोग होता है। जिसके लक्षण हैं :- जीभ में व्रण, रंजित पपड़ीदार त्वचा और आन्तसार धूप में खुले रहने वाले अगों की त्वचा रंजित और पपड़ीदार हो जाती है उदाहरणार्थ, हाथ और पैर, चेहरा और गर्दन की त्वचा। निकोटिनिक एसिड की अधिक कमी मानसिक विकार का कारण बन सकती है।

(iv) पायरीडॉक्सिन या विटामिन B_6

पायरीडॉक्सिन या विटामिन B_6 की, अमीनोएसिड, वसा और कार्बोहाइड्रेट के चयापचय मे महत्वपूर्ण भूमिका है। यकृत, माँस, मछली, अनाज के दानों और फलियों में पायरीडॉक्सिन अधिक पाया जाता है। पायरीडॉक्सिन की कमी से त्वचा विक्षति. ओंठ फटना, जिव्हाशोथ बच्चों को मरोड़ इत्यादि होती हैं। पायरीडॉक्सिन की आवश्यकता का ठीक ज्ञान नही है। वयस्कों को लगभग 1.5.g प्रतिदिन की आवश्यकता है। मनुष्य के साधारण भोजन में पर्याप्त पायरीडॉक्सिन रहता है।

(v) पेटोथेनिक एसिड

पेटोथेनिक मांसाहारी और शाकाहारी भोजन में व्यापक रूप से रहता है। इसकी कमी से मनुष्य में कोई लक्षण नहीं पाए गए है। इसकी आवश्यकता की स्पष्ट जानकारी नहीं है।

(vi) फॉलिक एसिड

फॉलिक एसिड को "फोलासिन" भी कहते हैं। यह DNA के संश्लेषण के लिए आवश्यक है।

स्रोत : यह हरे पत्तों में रहता है। यकृत सबसे अच्छे स्त्रोतों में एक है। यह दलहनों गिरी और अनाज के दानों में भी पाया जाता है।

कमी : इसकी कमी के कारण अरक्तता होती है। उष्णकटिबंध में इसकी कमी से गर्भवती महिलाओं और गरीबों में अरक्तता होना साधारण बात है। भारत मे इससे निपटने के लिए गर्भवती महिलाओं और बच्चों की आयरन (लोहा) और फॉलिक एसिड की गोलियों के वितरण का राष्ट्रीय कार्यक्रम प्रगति पर है।

आवश्यकता : स्वस्थ व्यक्तियों के लिए 100ug अण्ड गर्भावस्था में 300ug तथा बच्चों को 100ug है।

(vii) विटामिन B_{12}

फॉलिक एसिड के समान विटामिन B_{12} भी DNA के संश्लेषण के लिए आवश्यक है । इसके आन्तरिक्त कार्बोहाइड्रेट, वसा और प्रोटीन के चयापचय के लिए भी इसकी आवश्यकता होती है ।

स्रोत :

यह यकृत, अंडा. मछली और दूध मे रहता है। वनस्पति मूल के खाद्य पदार्थो मे यह नही पाया जाता है। इस कारण दूध भी न लेने वाले पक्के शाकाहारियों (Strict Vegetarians or

Vegans) में इसकी कमी देखी जाती है। आंत्र जीवाणुओं द्वारा संश्लेषित होकर भी शरीर को यह उपलब्ध नहीं होता।

कमी :

इसकी कमी से अरक्तता होती है, इस रोग में लोहित कोशिकाओं की संख्या में बहुत कमी होती है। इसकी कमी मेरूरज्यू सहित तन्त्रिका तन्त्र को भी प्रभावित कर सकती है। B12 की कमी कुछ सीमा तक अन्य विटामिन, फॉलिक एसिड की कमी से संबंधित है।

मात्रा : दैनिक मात्रा बहुत कम है। वयस्कों के लिए लगभग 1ugm विटामिन B12 के सही उपयोग के लिए जठर स्राव सामान्य रहना चाहिए।

(viii) विटामिन C

विटामिन C या एस्कॉर्बिक एसिड जल में घुलनशील विटामिन है। समस्त विटामिनों में यह सबसे अधिक अस्थिर है क्योंकि यह उच्च तापमान, ऑक्सीकरण, सूखने या संचय से शीघ्र नष्ट हो जाता है।

कार्य :- विटामिन C अनेक जीवन प्रक्रियाओं के लिए आवश्यक है।

- कोशिकाओं को इकट्ठा रखने वाले कोलेजन नामक प्रोटीन पदार्थ को बनाने के लिए यह आवश्यक है । इस पदार्थ के न बनने पर घाव ठीक होने में विलंब होता है।
- विटामिन C कमी से रक्तस्राव होता है।
- आयरन की वृद्धि में सहायक है।
- सक्रमण के प्रतिरोध की वृद्धि में सहायक है।

स्त्रोत :

फल : सब ताजे फलों में विटामिन C रहता है। आँवला या भारतीय स्ट्राबेरी, आदि में यह बहुत अधिक मात्रा में रहता है। अमरूद एक अन्य सस्ता परन्तु अच्छा स्रोत है।

सब्जियां : सब्जियां विशेषकर हरी पत्तीवाली सब्जियों मे विटामिन C प्रचुर मात्रा मे होता है । कन्द, मूल, (आलू मे बहुत कम होता है। अंकुरित दलहन एक और स्रोत है।

प्राणीजन्य खाद्य - माँस और दूध में बहुत कम होता है।

कमी : विटामिन C की कमी से स्कर्वी नामक रक्तस्रावी रोग होता है। त्रुटिपूर्ण आहार पर पलने वाले बच्चों मे स्कर्वी देखी जाती है। स्कर्वी के गंभीर रोगियों मे पुराने घाव फूटकर नए घाव फिर बन सकते हैं। आशिक कमी से मामूली रक्तस्राव और घाव ठीक होने में विलंब होता है। विटामिन C की कमी से शरीर की प्रतिरोधक क्षमता प्रभावित होती है।

आवश्यकता :- भारत में अनुशंसित मात्रा निम्नानुसार है-

वयस्क	40 mg/day
शिशु और बच्चे	20-40 mu/day

5.2.7 खनिज लवण

शरीर मे लगभग 24 खनिज होते हैं, जो सब हमें भोजन से प्राप्त होने चाहिएं। इनमे अधिकांश खाद्य पदार्थो मे व्याप्त है, संतुलित आहार से शरीर को आवश्यक मात्रा में इनकी पूर्ति होती है। खनिजों के दो मुख्य वर्ग हैं :

- मुख्य खनिज कैल्शियम, फास्फोरस. सोडियम आदि।
- सूक्ष्ममात्रिक तल - इनकी सूक्ष्म मात्रा आवश्यक होती है, यथा आयोडीन, फलोरीन जिंक, कोबाल्ट आदि।

कार्य :

(1) कडी सरचना का निर्माण - अस्थियों एवं दांतों जैसी कडी संरचना के निर्माण के लिए कैल्शियम. फास्फोरस और मैग्नीशियम जैसे कुछ खनिज आवश्यक हैं।

(2) शरीर क्रियात्मक कार्य :- ' कुछ खनिज शारीरिक द्रव्यों मे पाए जाते हैं और शरीर क्रियात्मक काय करते हैं तथा परासरणी दबाव बनाए रखते हैं।

(3) विशिष्ट कार्य :- कुछ की आवश्यकता विशिष्ट कार्य के लिए होती है, उदाहरण के लिए आयरन रक्त निर्माण के लिए आवश्यक है।

शरीर द्वारा वांछित महत्वपूर्ण खनिजों का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया गया हे.-

कैल्शियम

कैल्शियम शरीर का मुख्य खनिज तत्व है। शरीर के वजन में इसका अंश 15 से 2 प्रतिशत रहता है अर्थात् वयस्क व्यक्ति के शरीर मे 850 से 1400 ग्राम कैल्शियम है सकता है। शरीर का लगभग 99 प्रतिशत कैल्शियम अस्थियों में पाया जाता है। कैल्शियम रक्त मे भी अच्छी मात्रा मे रहता है।

कार्य :

- अस्थियों और दांतों के निर्माण और अनुरक्षण के लिए।
- रक्त के स्कन्दन (Coagulation) के लिए।
- तन्तुपेशी क्षोभण और कैल्शियम पारगम्यता के नियमन के लिए

स्त्रोत :

दूध कैल्शियम का सर्वोत्तम स्रोत है। एक लीटर गाय के दूध में 1200 मि ग्रा. कैल्शियम होता है । मछली, अंडे, हरी पत्ती वाली सब्जियों और फल अन्य अच्छे स्त्रोत हैं।

कमी : कैल्शियम की कमी के कारण किसी सुस्पष्ट रोग का उल्लेख नहीं है। विटामिन D के पर्याप्त मात्रा में लेने पर सूखारोग और अस्थिमृदुता नहीं होते हैं।

मात्रा : वयस्क के लिए अनुशंसित मात्रा 0.5 ग्राम प्रतिदिन है। गर्भावस्था और स्तनपान मे 10 ग्राम होना चाहिए।

लोहा (Iron)

शरीर में 3 से 4 ग्राम लोहे की मात्रा अनुमानित होती है और इसका 75 प्रतिशत रक्त में पाया जाता है।

कार्य : लोहे की आवश्यकता हीमोग्लोबिन निर्माण के लिए है । शरीर में लोहे का प्रमुख कार्य ' 'ऑक्सीजन परिवहन' है।

स्रोत : लोहा मांसाहारी और शाकाहारी, दोनो खाद्यों में रहता है। मांसाहारी खाद्य (यकृत, गुर्दा, मांस, अंडा-पीतक) में विद्यमान लोहा, ' शाकाहारी खाद्य (अनाज, दाल, पत्तीवाली सब्जियां)

की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह से अवशोषित होता है। लोहे के बर्तनों मे भोजन पकाने से, काफी मात्रा में लोहा प्राप्त हो सकता है।

कमी :

लोहे की कमी से अरक्तता होती है। भारत में अल्परक्तता अनेक लोगों को रहती है. विशेषकर गर्भवती महिलाओं और शाला-पूर्व आयु के बालकों में।

मात्रा :

भारत में अनुशंसित मात्रा निम्नानुसार है-

वयस्क पुरूष	-	24mg/day
वयस्क महिला	-	32mg/day
गर्भावस्था	-	40mg/day
स्तनपान	-	32mg/day

सोडियम : सोडियम अनेक खाद्यों मे रहता है और पकाते समय भी भोजन में मिलाया जाता है। सोडियम सभी शारीरिक तरलों में रहता है और मूत्र और पसीने द्वारा शरीर में कम होता रहता है। जलवायु व्यवसाय और शारीरिक कार्य के अनुसार सोडियम क्लोराइड की दैनिक आवश्यकता 10 से 25 ग्राम होती है।

फास्फोरस : अस्थियों और दांत के निर्माण के लिए फास्फोरस अनिवार्य है। सभी चयापचयों में इसकी भूमिका महत्वपूर्ण है। यह खाद्य पदार्थो मे व्यापक रूप से रहता है। दैनिक आवश्यकता लगभग 0.5 ग्राम है।

5.2.8 सूक्ष्म मात्रिक तल

खनिजों के एक वर्ग की शरीर को अल्प या सूक्ष्म मात्रा में आवश्यकता होती है। इन्हें सूक्ष्ममात्रिक तत्व कहते हैं। इनमें आयोडीन. तांबा, कोबाल्ट, मैग्नीशियम आदि शामिल हैं। इनमें से अनेक तत्वों के कार्य पूर्ण रूप से ज्ञात नही हैं। जब तक मनुष्य संतुलित भोजन लेता है तब तक इन तत्वो की कमी से किसी रोग के होने की संभावना नही है। कुछ का वर्णन निम्न प्रकार है

- **आयोडीन :-** आयोडीन सूक्ष्ममात्रिक तत्व है। गर्दन में स्थित अवटुग्रन्थि के हार्मोन "थाइरॉक्सिन ' के निर्माण के लिए इसकी आवश्यकता है।

– **स्रोत :-** आयोडीन के सबसे अच्छे स्रोत हैं - कच्चा नमक (समुद्र जल से तैयार), समुद्री मछली और कॉर्ड लिवर तेल। थोडी मात्रा अन्य खाद्यों में होती है।

– **कमी :-** आयोडीन की कमी से गर्दन में अवटुग्रन्थि की सूजन हो जाती है, जिसे “गलगण्ड” कहते हैं। कश्मीर से आसाम तक फैले हिमालय के तराई वाले क्षेत्रों मे गलगण्ड सामुदायिक स्वास्थ्य समस्या है।

– **आवश्यकता -** आयोडीन की दैनिक आवश्यकता लगभग 0.2 mg है।

– **गलगण्ड की रोकथाम :-** भारत सरकार पूरे देश में सामान्य नमक के स्थान पर ' 'आयोडीन युक्त नमक ' अर्थात् सामान्य नमक में पोटेशियम आयोडेट मिलाकर उपलब्ध करा रही है। इस हेतु सरकार ने एक कानून भी बनाया है।

– **फ्लोरीन :-** फ्लोरीन शरीर के लिए आवश्यक एक और महत्वपूर्ण सूक्ष्ममात्रिक तत्व है। यह अधिकतर दांतों में पाया जाता है।
– **स्त्रोत -** मनुष्य के लिए फ्लोरीन का मुख्य स्त्रोत पेयजल है। सूक्ष्म मात्रा में यह अनेक खाद्यों जैसे समुद्री मछली, पनीर, चाय में भी पाया जाता है।
– **प्रभाव -** फ्लोरीन की कमी से दंतरक्षण संबंधित है। इसके विपरीत अधिक क्लोरीन लेने से ' कंकाली फ्लुरोसिस' ' नामक अपंग रोग की स्थिति बन जाती है। कंकाली फ्लुरोसिस आन्ध्रप्रदेश और पंजाब के कुछ भागो मे पाया जाता है, जहां पेय जल मे अधिक फ्लोराइड रहता है।

आवश्यकता : पेय जल में फ्लोराइड का सर्वोत्तम स्तर 0.5 से 0.6 mg प्रति लीटर है।

5.2.9 जल

जल मानव की मूलभूत आवश्यकता है। यह मानव शरीर भार का 60 प्रतिशत से अधिक है।

वितरण : जल 3 उपखण्डों में विभाजित रहता हैं -

1. अन्त: कोशिका तरल - यह शरीर के भार का लगभग 50 प्रतिशत है।
2. अन्तरालीय तरल - यह शरीर के भार का लगभग 15 प्रतिशत है।
3. रक्त - यह लगभग 5 प्रतिशत है।

स्रोत : मानव शरीर दो मुख्य स्त्रोतों से जल प्राप्त करता है - पेय जल और भोजन । थोडी मात्रा (लगभग 800 मिली.) चयापचय के परिणामस्वरूप ऊतकों में निर्मित होती है।

कार्य :

(1) जल अनेक जैव रासायनिक या शारीरिक तरलों मे जैसे रक्त. लेखिका, मस्तिष्क मेरू तरल का अनिवार्य घटक है।
(2) शारीरिक तापमान के नियमन मे सहायक है।
(3) शरीर के अन्दर पोषकों के परिवहन में सहायता करता है।
(4) शरीर के ऊतकों के निर्माण और मरम्मत में महत्वपूर्ण है।
(5) यह अनेक शारीरिक प्रक्रियाओं में प्रयुक्त होता है:- जैसे पाचन, अवशोषण, शरीर के अवशेषों को बाहर निकालने आदि में. इसके आन्तरिक्त नहाने, धोने एवं अनेक कार्यो के लिए भी जल आवश्यक है।

जल हानि : शरीर से जल की हानि इस प्रकार होती हैं-

गुर्दे द्वारा मूत्र में'
त्वचा द्वारा स्वेद और पसीने मे
फुप्फुस द्वारा निःश्वसित वायु में, और
कुछ हद तक आत द्वारा मल में. स्तनपान वाली महिलाओं द्वारा दूध मे।

आवश्यकता :- सामान्य स्वस्थ व्यक्ति को प्रतिदिन 6 से 8 गिलास जल पीना चाहिए (1 मिली / कैलोरी भोजन)। भारत जैसे गरम देशों मे रहने वाले लोगों को ठंडे देशों में रहने वाले लोगों की अपेक्षा अधिक जल की आवश्यकता होती है। सामान्य जल सन्तुलन को बनाए रखने के

लिए अन्तग्रहित जल और जल हानि समान होनी चाहिए। अत्यधिक जल हानि का परिणाम निर्जलीकरण है। (जैसे तीव्र आन्तसार में होती है)

5.3 सन्तुलित आहार (Balanced Diet)

अब तक हमने कैलोरी सहित शरीर की पोषण आवश्यकताओं पर विचार किया है। प्रश्न यह उठता है, कि संतुलित आहार को किस प्रकार सूत्रबद्ध किया जाए। परिभाषा के अनुसार 'संतुलित आहार उसे कहते हैं जो (1) पर्याप्त कैलोरी. (2) प्रोटीन, वसा और कार्बोहाइड्रेट समुचित मात्रा में एवं (3) स्वास्थ्य. जीवन शक्ति तथा सामान्य तंदुरुस्ती बनाए रखने के लिए उपयुक्त मात्रा में विटामिन और खनिज, उपलब्ध करे।

5.3.1 विभिन्न वर्गो की पोषण आवश्यकताएं

(i) शिशु

जीवन के प्रथम 6 माह :- 6 माह से कम आयु के शिशु को अपने शरीर के वजन के प्रत्येक किलो के हिसाब से 120 कैलोरी और 23 ग्राम प्रोटीन तथा इसके आन्तरिक्त खनिज और चाहिएं। यदि मा का दूध पर्याप्त मिलता है तो यह आवश्यकता मां के दूध से पूरी हो जाती है। स्तनकाल के प्रथम 6 माह में मां लगभग 600ml स्तन दुग्ध स्त्रवण करती है और यह मात्रा शिशु की आवश्यकता पूर्ण करने के लिए पर्याप्त है। मानव दुग्ध मे प्रति 100 मिली लगभग 65 कैलोरी मिलती है।

6 माह की आयु के बाद स्तनों के दूध की मात्रा कम होती जाती है, जब कि पोषणज आवश्यकतायें बढती हैं - (सारणी के अनुसार) इस प्रकार 6 से 12 माह के शिशु को लगभग 800 कैलोरी ऊर्जा और 13 ग्राम प्रोटीन चाहिए। परन्तु इस आयु तक मां के दूध से 300 कैलोरी ऊर्जा और 5 ग्राम प्रोटीन से अधिक प्राप्ति नहीं होती। इसी कारण, शिशु को 4 माह की आयु से ही ''पूरक-भोजन' प्रारम्भ कर देना चाहिए। दूसरे शब्दों में बच्चे का स्तनपान क्रमशः छुडाना चाहिए। चूंकि कुपोषण भारत में बडी समस्या है अत: पूरे प्रथम वर्ष तक स्तनपान जारी रखना चाहिए जिससे शिशु को मां के दूध से बहुमूल्य प्रोटीन को थोडी मात्रा मिलती रहे।

सारणी : शिशुओं और बच्चों की ऊर्जा और प्रोटीन की दैनिक आवश्यकतायें

आयु वर्ग	शरीर भार Kg	ऊर्जा K. Cal.	प्रोटीन (gm.)
जन्म से 6 माह	3-7	600	11
6 माह से 1 वर्ष	7-9	800	13
1 से 3 वर्ष	9-13	1200	18
4 से 6 वर्ष.	15-17	1500	22
7 से 9 वर्ष	18-21	1800	23
9 से 12 वर्ष	12-28	2100	41

शिशु के पोषण का सर्वोत्तम सूचक वजन है। औसत भारतीय शिशु का जन्म के समय वजन 28 किलोग्राम होता है।

5 माह के कत में शिशु का वजन जन्म के वजन से दो गुना और वर्ष के अन्त में तीन गुना हो जाता है।

(ii) स्तनपान छुड़ाने की विधि (Weaning)

स्तनपान एकाएक या अचानक बन्द नहीं किया जाता। यह 6 माह के आस-पास से प्रारम्भ होने वाली क्रमिक प्रक्रिया है. क्योकि 4 से 6 माह के बाद होने वाली 'वृद्धि को संपोषित करने के लिए केवल मा का -दूध पर्याप्त नहीं है। इसे प्रोटीन और अन्य पोषक तत्वो से युक्त उपयुक्त खाद्य पदार्थो द्वारा पूरा करना चाहिए। ये ' पूरक आहार ' कहलाते हैं। ये हैं गाय का दूध, फलों का रस, नरम पके चावल और सब्जियां इत्यादि। स्तनपान छुड़ाने वाली अवधि, जो बच्चें के विकास की सबसे महत्वपूर्ण अवधि है, में यदि बच्चा कुपोषित रहता है, जो उसके प्रोटीन-ऊर्जा कुपोषण की प्रवृति हो सकती हें (जैसे क्वाशीओरकॉर और सूखारोग) । अनाज. बाजरा, दाल, मूँगफली, शक्कर या गुड जैसी कम कीमत वाली, स्थानीय उपलब्ध खाद्य पदार्थ से पौष्टिक पूरक आहार सरलता से घर मे ही तैयार किए जा सकता हैं स्तनपान छुड़ाने की अवधि मे इन पूरक आहारों का उचित उपयोग कुपोषण रोकने मे सहायक है। एक वर्ष की आयु मे -या नमो अनाज, दाल सब्जी और फलों वाला ठोस आहार मिलना चाहिए।

(iii) शाला -पूर्व आयु वाले बच्चे

1 से 5 वर्ष के आयु वर्ग पे बच्चों का विशेष ध्यान देना आवश्यक है। इस समय उनमें शारीरिक और वृद्धि काफी अधिक दिखाई देती है। अत: उन्हें आन्तरिक्त प्रोटीन विटामिन और खनिजों की आवश्यकता होती है।

1 से -5 वर्ष की आयु वाले बच्चे बहुधा मा द्वारा उपेक्षित और न्यूनपोषित होते है। कारण यह है, कि मां नही जानती कि इन बच्चों को वयस्कों की अपेक्षा उनके आकार की तुलना में अधिक भोजन की आवश्यकता है। कई गरीब परिवारों मे बच्चों को 2 रो 3 वर्ष की आयु तक स्तनपान कराया जाता है और उन्हें अन्य परिवारजनों द्वारा खाया जाने वाला दूसरा भोजन नही दिया जाता। इस प्रथा के कारण क्वाशिओरकॉर और सूखारोग अधिक होता है। बच्चे की वृद्धि के आकलन का सर्वोत्तम गाइड उसका शारीरिक वजन है।

(नोट -COA-iii की इकाई-3 तथा COA-iv की इकाई-6 भी देखे।)

(iv) वयस्कों हेतु सन्तुलित आहार

वयस्कों का आहार (पुरूष एवं महिला) निम्न सारणी के अनुसार होना चाहिए।

सारणी. सन्तुलित आहार (पुरूष)

भोज्य पदार्थ	साधारण कार्य (Gm)	मध्यम कार्य (Gm)	भारी कार्य (Gm)
अनाज	460	520	670
दालें	40	50	60
पत्तेदार सब्जियां	40	40	40
अन्य सब्जियां	60	70	80
कन्दमूल	50	60	80
दूध	150	200	250
वसा एवं तेल	40	45	65
शक्कर या गुड	30	35	55

नोट : मांसाहारी 20-30 ग्राम दाल के स्थान पर मीट. 1 अण्डा तथा 5 ग्राम वसा आन्तरिक्त ले सकते हैं।

सारणी सन्तुलित आहार (महिला)

भोज्य पदार्थ	साधारण कार्य (Gm)	मध्यम कार्य (Gm)	भारी कार्य (Gm)
अनाज	410	440	575
दालें	40	45	50
पत्तेदार सब्जियां	100	100	50
अन्य सब्जियां	40	40	100
कन्दमूल	50	50	60
दूध	100	150	200
वसा एवं तेल	20	25	40
शक्कर या गुड	20	20	40

नोट : मांसाहारी दालों के स्थान पर मीट अण्डे. मछली आदि सम्मिलित कर सकते हैं।

(v) गर्भावस्था एवं स्तनपान काल में आहार

गर्भवती महिला के लिए प्रतिदिन लगभग 2800 कैलोरीज की जरूरत होती है। गर्भावस्था में सामान्य संतुलित आहार के आन्तरिक्त लगभग 300 Kcal आन्तरिक्त प्रदान की जानी चाहिए।

सारणी : गर्भावस्था मई आहार

भोज्य पदार्थ	साधारण कार्य (Gm)	मध्यम कार्य (Gm)	भारी कार्य (Gm)
अनाज	445	475	605
दालें	60	65	70
पत्तेदार सब्जियां	100	100	50
अन्य सब्जियां	40	40	100
कन्दमूल	50	50	60
दूध	200	250	300
वसा एवं तेल	20	25	40
शक्कर या गुड	30	30	50

नोट : गर्भावस्था में आहार के चयन में दूध, हरी सब्जियां, फलों के सेवन को बढ़ावा देना चाहिए। इससे आयरन, कैल्शियम व प्रोटीन की आवश्यकता की पूर्ति होती है

सारणी : स्तनपान काल में आहार

भोज्य पदार्थ	साधारण कार्य (Gm)	मध्यम कार्य (Gm)	भारी कार्य (Gm)
अनाज	470	500	635
दालें	80	85	90
पत्तेदार सब्जियां	100	100	50
अन्य सब्जियां	40	40	100
कन्दमूल	50	50	60
दूध	200	250	300
वसा एवं तेल	30	35	50
शक्कर या गुड़	60	60	80

नोट : स्तनपान काल मे महिला को आन्तरिक्त प्रोटीन. कैल्शियम व आयरन की आवश्यकता होती है, जिसे हरी पत्तीदार सब्जियां, दूध, फल इत्यादि देकर पूर्ण किया जाना चाहिए।

5.4 कुपोषण (Malnutrition)

कुपोषण की स्थिति तब उत्पन्न होती है जब शरीर को आवश्यक मात्रा मे उपयुक्त प्रकार का भोजन नहीं मिलता। कुपोषण किसी भी आयु मे हो सकता है परन्तु यह सबसे अधिक बच्चों मे मिलता है। कुपोषित बच्चों की सबसे अधिक संख्या 6 माह और 3 वर्ष के बीच की आयु में है।

चिन्ह और लक्षण. : बच्चों में कुपोषण के चिन्ह और लक्षण हैं-

– वृद्धि न होना
– अरक्तता
– त्वचा मे परिवर्तन - त्वचा शुल्क, शल्की या कठोर. अधस्तवक वसा की हानि
– नेत्रों में परिवर्तन - शुष्कता, रतौंधी
– बालो मे परिवर्तन - रंग हल्का, भंगुर
– अन्य - उदासी, ढीलापन, मुखदाह, पैरो का मुडना, बार-बार बीमार पड़ना

5.4.1 कुपोषण की पहचान :

कुपोषित बच्चों की पहचान की अनेक तकनीकें हैं -

(1) **ऊंचाई और वजन :-**_ कुपोषित बच्चों की पहचान का सर्वोत्तम तरीका नियमित रूप से उनकी ऊंचाई और वजन लेना है :- छोटे बच्चों का माह में एक बार और बडे बच्चों का 3 से 6 माह के अन्तराल से। वृद्धिचार्ट या स्वास्थ्य - मार्ग चार्ट. बच्चे के स्वास्थ्य और पोषण स्थिति को मॉनीटर करने का सरल और सस्ता तरीका है।

(2) **बाहु मध्य परिधि :-** एक अन्य सरल और उपयोगी तकनीक बाहु मध्य परिधि का माप है। 1 से 5 वर्ष के बीच किसी भी बच्चे की यह नाप 12.8 से मी. से कम रहने पर उसे कुपोषित समझा जाता है।

(3) **नैदानिक एवं प्रयोगशाला जांच** - कुपोषण के लक्षणों के लिए बच्चे की सिर से पैर तक जांच. कुपोषण का पता लगाने का एक और तरीका है। ऐसी जांच के पूरक के रूप मे प्रयोगशाला परीक्षण किए जा सकते हैं, जैसे हीमोग्लोबिन का आकलन।

5.4.2 कुपोषण की समस्याएं

प्रोटीन और कैलोरी की कमी से होने वाले रोग भारत और अन्य विकासशील देशों के उन बालकों मे पाए जाते हैं जो स्तनपान छोड़ चुके होते हैं और पूर्व-शालेय वर्ग के होते हैं। इन बालकों को तीन वर्गो मे विभाजित किया जा सकता है :-

- क्वॉशिओरकॉर
- पोषण की कमी से सूखा रोग (मैररामस) और
- सूखारोग एवं क्वॉशिओरकॉर

(i) क्वॉशिओरकॉर

डॉ. सिसली विलियन्स ने 1935 में अफ्रीका के देशों में बालकों में इस बीमारी का पता लगाया। यह आहार में प्रोटीन की कमी के कारण पैदा होती है। इस बीमारी के मुख्य लक्षण हैं विकास नहीं होना, इडीमा (सूजन), पेशियों की क्षति यकृत का वसायुक्त होना. भूख में कमी और दस्त लगना, त्वचा और बालों के रग में परिवर्तन, एनीमिआ आदि।

इस बीमारी के लक्षणों मे विटामिन ए की कमी के लक्षण और चिन्ह भी जुड सकते है।

चित्र क्वॉशिओरकॉर से पीड़ित बालक

(ii) **पोषणीय सूखारोग (मैरसकस) :-** यह रोग आहार मे प्रोटीन और कैलोरी की अत्यधिक कमी के कारण होता है इस रोग में शारीरिक विकास रूक जाता है, मारन पेशियां की क्षति और बचा के नीचे की वसा समाप्त हो जाती है। (त्वचा रूखी और क्षीण हो जाती है। विटामिन ए की कमी के कारण एनीमिआ और आंखों मे घाव भी दिखाई देते हैं। बीमारी मे निर्जलीकरण भी दिखाई देता है।

(iii) **सूखारोग क्वॉशिओरकॉर** : इस रोग से ग्रसित बालकों मे उपरोक्त दोनों रोगों अर्थात क्वॉशिओरकॉर और पोषणीय सूखा रोगों के लक्षण दिखाई देते हैं।

निरोधक उपाय हैं :- (1) माँ की समुचित प्रसवपूर्व देखभाल, क्योंकि स्वस्थ मा स्वस्थ शिशु को जन्म देती है। (2) स्तनपान को प्रोत्साहन (3) बच्चे को ठीक से दूध छुड़ाना। बच्चे को 4 से 6 माह की आयु के आस-पास पूरक पोषण आहार देना चाहिए क्योंकि बच्चे के वृद्धि के लिए अकेला मा का दूध पर्याप्त नहीं है। पूरक पोषण आहार अनाज, बाजरा, दाल, मूँगफली, शक्कर या गुड जैसे कम कीमत वाले स्थानीय उपलब्ध खाद्य पदार्थो का उपयोग कर घर में ही आसानी से तैयार किये जा सकते है। इन पूरक आहार का समुचित उपयोग स्तन-पान छुड़ाने की अवधि मे कुपोषण रोकने मे सहायक है। (4) माँ को पोषण संबंधी शिक्षा (5) टेटनस. डिफ्थीरिआ, कुकुरखांसी के लिए टीकाकरण (6) आहार की स्वच्छता की आदतें और (7) मुख द्वारा पुनर्जलीकरण।

(iv) अरक्तता (एनीमिआ)

नेत्र श्लेष्मता पीली पाई जाना अरक्तता या रक्ताल्पता का लक्षण है। टालक्विस्ट स्केल से हीमोग्लोबिन स्तर का आकलन अधिक अच्छी विधि होगी। यदि Hb स्तर 12 ग्राम (80 प्रतिशत) से कम है तो व्यक्ति को लोहा और फॉलिक एसिड गोलियों से 'उपचार की जरूरत है।

(v) **विटामिन द्र की कमी -** भोजन मे विटामिन ए की कमी भारत मे गंभीर स्वास्थ्य समस्या है। स्कूलपूर्व बच्चों की बडी संख्या, आंखों मे विटामिन ए की कमी के लक्षणों मे पीड़ित हैं। यदि इन लक्षणों का जल्दी पता नहीं लगाया गया और उपचार नहीं हुआ तो अन्धत्व हो

सकता है। रोगनिरोधक स्वास्थ्य कार्यक्रम के रूप मे प्रभावित क्षेत्रों मे स्कूलपूर्व आयु के बच्चों को 200000 i.u. विटामिन ए मुख द्वारा हर 6 माह में दी जा रही है।

5.5 सारांश

हमने पोषण इकाई के अन्तर्गत यह जानने का प्रयास किया कि पोषण एक सक्रिय प्रक्रिया है जिसमे खाये गये भोजन का उपयोग शरीर के पोषण के लिए होता है। भोज्य पदार्थो में अनेक रासायनिक तत्व मौजूद हैं जो पोषक तत्वों के नाम से जाने जाते है। पोषक तत्व मुख्यत: प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, खनिज लवण, विटामिन एवं जल आदि होते हैं। पोषण द्वारा शरीर को ऊर्जा मिलती है। शरीर की वृद्धि एवं विकास ऊतकों की मरम्मत प्रतिपिण्डों, एन्जाइम और हार्मोन के संश्लेषण के लिए पोषण आवश्यक होता है। इसके आन्तरिक्त पोषण शरीर को विभिन्न रोगों मे सुरक्षा प्रदान करने मे भी सहायक होता है। शरीर के पोषण के लिए सूक्ष्म मात्रिक तत्व भी आवश्यक होते हैं।

हमने यह भी जाना कि सन्तुलित आहार से तात्पर्य उस भोजन से है जो पर्याप्त मात्रा मे कैलोरी, तथा प्रोटीन, वसा कार्बोहाइड्रेट, विटामिन खनिज लवण, जल इत्यादि उपलख करे। शरीर को सन्तुलित व उचित भोजन न मिलने के कारण कुपोषण की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। बच्चों में कुपोषण अधिक पाया जाता है। भारत में मुख्य रूप से क्वेशिओरकर, पोषण की कमी से सूखा रोग (मैरसमस) पाया जाता है। कुपोषण से बचने के लिए बच्चों को संतुलित आहार देना आवश्यक है। भोजन में पोषक तत्वों की कमी से विभिन्न प्रकार के रोग हो जाते हैं। ऐसे रोगों की रोकथाम और स्वास्थ्य वृद्धि के लिए उचित पोषण जरूरी है। इस प्रकार इस इकाई के द्वारा प्राप्त पोषण की जार तरी के माध्यम से प्रसूति विज्ञान सहायिका, प्रसूता एवं शिशु की पोषणीय आवश्यकताओं के। आकलन करने में सक्षम हो सकेगी।

5.6 प्रश्न

1. पोषण किसे कहते हैं?
2. विभिन्न पोषकीय तत्वो के नाम बताइये।
3. विटामिन ए की कमी से होने वाले रोगों के नाम बताइये।
4. क्वाशिओरकर के लक्षण व चिन्ह बताइये।
5. संतुलित आहार क्या है?
6. कुपोषण से होने वालो दो रोगों के नाम बताइये।
7. गर्भवती महिला के लिए सन्तुलित आहार की सारणी बनाइये।

इकाई -6 प्रजनन एवं भ्रूण विज्ञान

इकाई की रूपरेखा

6.0 प्रस्तावना
6.1 उद्देश्य
6.2 पुरूष प्रजनन अंग
6.2.1 वृषण
6.2.2 अधिवृषण
6.2.3 शुक्रवाहिनी
6.2.4 शुक्राशय
6.2.5 प्रोस्टेट ग्रन्थि
6.2.6 शिश्न
6.3 वीर्य सरचना
6.4 स्त्री के प्रजनन अंग
6.4.1 बाह्य प्रजनन अंग
6.4.2 आन्तरिक प्रजनन अंग
6.4.3 रजोदर्शन
6.4.4 मासिक चक्र
6.4.5 गुणसूत्र
6.4.6 भ्रूण विज्ञान
6.5 सारांश
6.6 प्रश्न

6.0 प्रस्तावना

जीव अपने जीवन के एवं प्रजाति अस्तित्व को बनाए रखने के लिए अपने समान जीव की उत्पत्ति करते हैं। अपने समान जीव की उत्पत्ति प्रजनन की प्रक्रिया द्वारा होती है। प्रजनन प्रक्रिया प्रजनन अगों के द्वारा होती है। प्रजनन अंग स्त्री तथा पुरूष मे पृथक-पृथक होते हैं। अत: एक प्रसूति विज्ञान सहायिका के लिए प्रजनन एवं प्रजनन अगों के बारे में समझना बहुत आवश्यक है। इस इकाई मे हम प्रजनन तंत्र एवं भ्रूण विज्ञान का अध्ययन करेगें।

6.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद प्रसूति विज्ञान सहायिका निम्न के बारे मे जानेगी

- प्रजनन की परिभाषा
- पुरुष प्रजनन अंग एवं उनके कार्य
- महिला प्रजनन अग एवं उनके कार्य
- मासिक धर्म की क्रियाविधि

– प्रजनन प्रक्रिया
– गर्भकालीन भ्रूण की विभिन्न अवस्थाएं

8.2 पुरूष प्रजनन अग

पुरूष प्रजनन तंत्र के प्रमुख अंग निम्नलिखित हैं -

(i)	वृषण	(ii)	अधिवृषण
(iii)	शुक्रवाहिनी	(iv)	शुक्राशय
(v)	प्रोस्टेट ग्रन्थि	(vi)	शिश्न

6.2.1 वृषण

वृषण नर का प्रमुख अंग है। वृषण मे शुक्रजनन कोशिकाएं होती हैं जिनसे शुक्राणुओं का निर्माण होता है। वृषण पुरूष में टेस्टोस्टेरॉन हार्मोन का स्रावण करता है। गर्भावस्था में वृषणों का विकास उदरगुहा में होता है परन्तु गर्भावस्था के अन्त तक वृषण उदरगुहा के बाहर वृषण कोश में स्थित हो जाते हैं।

6.2.2 अधिवृषण

यह वृषण के पीछे स्थित एवं उससे जुड़ा हुआ एक छोटा अंग होता है। यह अत्यन्त लम्बी संकरी नलिका का बना होता है। इस नलिका द्वारा शुक्राणु वृषण से शुक्रवाहिका में आते हैं।

6.2.3 शुक्रवाहिनी

यह अधिवृषण के निचले भाग में निकलने वाली एक वाहिनी है। यह वृषण के पीछे से ऊपर उठकर इन्ग्वाइनल कैनाल से गुजरकर शुक्राशय की वाहिका से जुड़ती है।

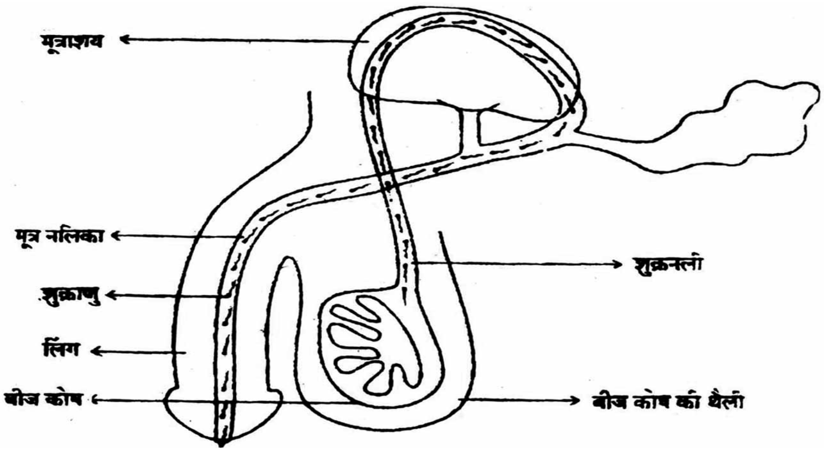

चित्र : पुरूष के प्रजनन अंग

6.2.4 शुक्राशय

यह दो थैलियां होती है जो मूत्राशय व मलाशय के नीचे स्थित होती हैं। ये क्षारीय द्रव स्रावित करती हैं। यह द्रव सेमिनल द्रव या वीर्य का अधिकांश भाग बनाता है।

6.2.5 प्रोस्टेट ग्रन्थि

यह ग्रन्थि मूत्राशय की ग्रीवा से जुडी रहती है। यह ग्रन्थि पतला दूधिया स्राव उत्पन्न करती है जिससे शुक्राणुओं की गतिशीलता बनी रहती हे।

6.2.6 शिश्न

यह लम्बा, बेलनाकार. स्पंजी ऊतक का बना हुआ होता है। अधिकांश समय यह लचीला व नर्म रहता हैं। यौन उत्तेजना के समय लिंग तन जाता है। वीर्य स्खलन होते ही लिंग सामान्य स्थिति में आ जाता है। इसका अग्र भाग फूला हुआ होता है जिसे शिश्नमुण्ड कहते हैं। शिश्न मुण्ड पर मूत्रजनन छिद्र होता है।

6.3 वीर्य सरंचना

वीर्य में तीन प्रकार के रसों का मिश्रण होता है, बीज कोष से शुक्राणु, वीर्य कोष रस एवं प्रोस्टेट से निकला रस। वीर्य स्खलन मे वीर्य 2 मिली. के लगभग होता है, जिसमें 2 करोड़ से 20 करोड़ शुक्राणु होते हैं।

6.4 स्त्री के प्रजनन अंग

महिला प्रजनन अंग को आंतरिक तथा बाह्य दो समूहों में विभाजित करते हैं :- (नोट - COA-IV की इकाई-1 भी देख)

(1) बाह्य अग

(2) आन्तरिक अग

6.4.1 बाह्य प्रजनन अंग (Internal Reproductive Organs)

(i) स्त्री के बाहरी प्रजनन अंगों को भग्नाशय (Vulva) कहा जाता है। यह त्वचा की दोहरी तहों का बना होता है व अन्दर के प्रजनन अंगो तथा योनि द्वार की रक्षा करता है।

(ii) भग्नाशय के सामने की हड्डियों को भगास्थि (Pubic Bone) कहते हैं। यह चर्बी से ढकी रहती है व इसकी त्वचा बालों से ढकी रहती है। इस भाग को मोन्स प्यूबिस कहा जाता है।

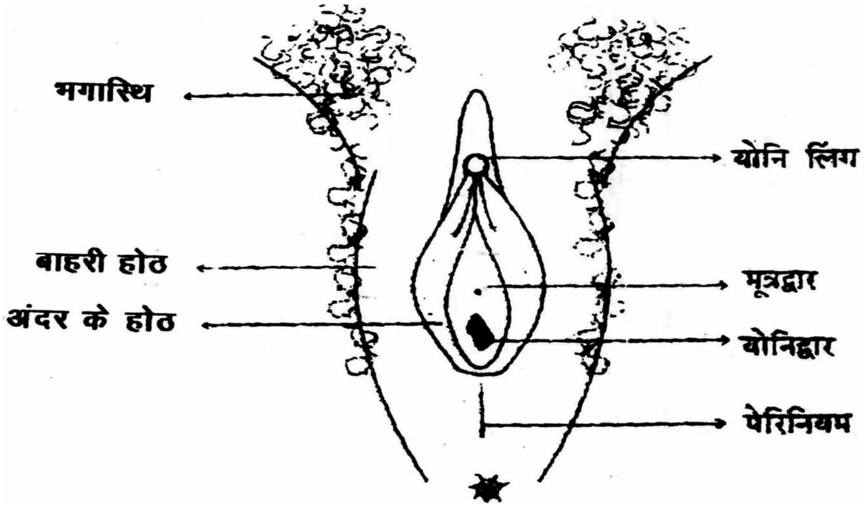

चित्र स्त्री के बाहरी प्रजनन तंत्र

(iii) मोन्स प्यूबिस से पीछे की ओर जाते हुए त्वचा की दो तहों के बने हुए लेबिया मैजोरा (बाहरी होठ) होते हैं। इनकी बाहरी सतह पर भी कुछ बाल होते हैं।

(iv) लेबिया मैजोरा के अन्दर की तरफ मुलायम त्वचा से बने हुए दो लेबिया माइनोरा (आन्तरिक होठ) होते है, ये योनि द्वार व मूत्र द्वार को ढकते हैं।

(v) सामने की ओर दोनों लेबिया माईनोरा जुड़ते हैं। यहां योनिलिंग (Clitoris) स्थित होता है।

(vi) पेरिनियम (Perineum) योनि द्वार व मल द्वार के बीच के हिस्से को कहा जाता है।

6.4.2 आन्तरिक प्रजनन अंग (Internal Reproductive Organs)

स्त्री के आन्तरिक प्रजनन अंग निम्न हैं -

(i) योनि (Vagina)

यह एक लचीली नली होती है। जो भग्नाशय से ऊपर वे पीछे की ओर जाती है। इसके ऊपरी सिरे मे मुख खुलता है। योनि, सहवास के समय पुरूष अग (शिश्न) को ग्रहण करती है ।

- योनि की लम्बाई लगभग 8- 10 सेमी. व चौडाई 4-5 सेमी होती है ।
- योनि का ऊपरी सिरा गर्भाशय मुख द्वारा 4 हिस्सों में बंटा होता है :-
  - पिछला खांचा
  - अगला खांचा
  - दांया व बांया खांचा

योनि से सम्बन्धित अन्य अंग हैं

- आगे मूत्राशय व मूत्रनली
- पीछे मलाशय
- दांये व बांये मांसपेशिया

ऊपर गर्भाशय मुख

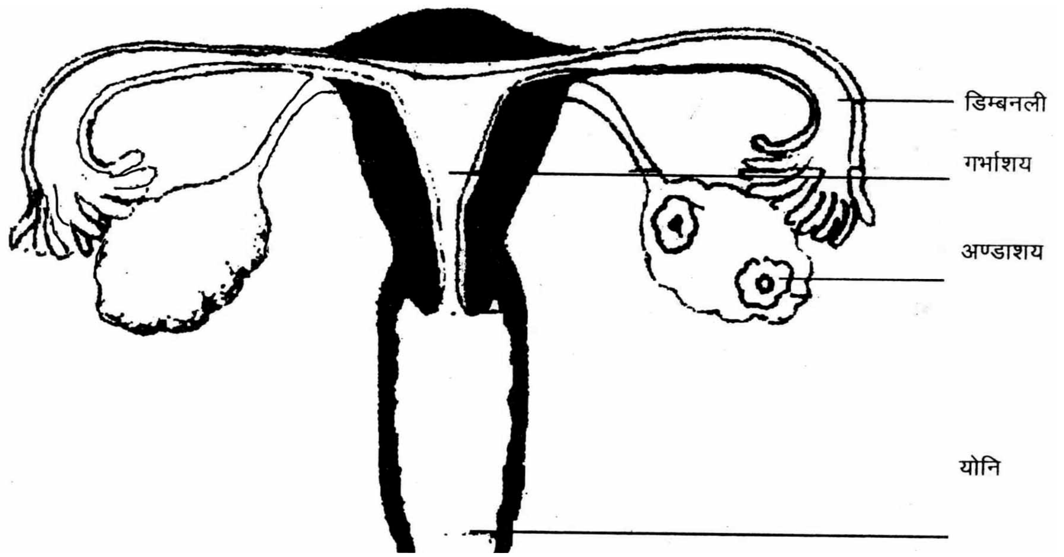

चित्र स्त्री के आन्तरिक प्रजनन अग

(ii) गर्भाशय (Uterus)

- यह नाशपाती के आकार का एक खोखला अंग होता है। इसे बॉम्व (womb) भी कहते हैं।
- इसकी दीवारें माँसपेशियों की बनी होती है जो लगभग 1-2 सेमी मोटी होती है।
- इसकी लम्बाई 8-9 सेमी. चौडाई 6 सेमी व आगे से पीछे की चौडाई 4 सेमी होती है।
- गर्भाशय के 2 हिस्से हैं :-
  - शरीर
  - गर्भाशय मुख
- गर्भाशय मुख की लम्बाई 3 सेमी. होती है। इसका आधा हिस्सा योनि में व आधा योनि के ऊपर स्थित होता है। इसकी आन्तरिक परत में कुछ ग्रन्थियां होती हैं, जिनमें श्लेष्म बनता है।
- गर्भाशय ऊपर दोनों डिम्बनलियों में खुलता है व नीचे गर्भाशय मुख के छेद द्वारा योनि में खुलता है।
- भ्रूण का विकास गर्भाशय में होता है। गर्भावस्था मे गर्भाशय का आकार धीरे-धीरे बडा होता जाता है।
- अधिकांश महिलाओं में गर्भाशय आगे की ओर झुका होता है। कुछ महिलाओं मे यह पीछे की ओर भी झुका होता है परन्तु ऐसा होना असामान्य नही है।

(iii) डिम्बनलियां (Fallopian Tubes)

- दो डिम्बनलियां गर्भाशय के ऊपरी हिस्से के दोनो ओर जुडी होती हैं व इनका बाहरी सिरा अण्डाशय के पास स्थित होता है।
- ये पतली व लगभग 10 सेमी लम्बी होती हैं।
- इनका बाहरी सिरा पंखे के आकार का होता है और पेरिटोनियल कैविटी में खुलता है, इसीलिए यदि योनि में सक्रमण हो तो गर्भाशय व डिम्बनलियों द्वारा पेरिटोनियल कैविटी मे पहुंच सकता है।
- अण्डाशय से निकला अंडा डिम्बनली मे जाता है और इसका फलीकरण डिम्बनली में ही होता है।

(iv) अण्डाशय (Ovaries)

- गर्भाशय के दोनो ओर एक-एक अण्डाशय स्थित होता है।
- अण्डाशय ठोस होते हैं। इसकी लम्बाई लगभग 3-5- सेमी. और चौडाई लगभग 2 सेमी होती है।
- स्त्री के जन्म के समय दोनों अण्डाशयों में लगभग 400000 कच्चे अण्डे रहते हैं परन्तु उसके जीवन काल में सिर्फ लगभग 400 अण्डे ही पकते हैं। हर महीने किसी एक अण्डाशय में से केवल एक अण्डा परिपक्व होकर बाहर निकलता है और डिम्बनली में प्रवेश करता है।
- अण्डाशय से स्त्री के ' 'प्रजनन हॉर्मोन' ' ईस्ट्रोजन व प्रोजेस्टेरोन भी बनते हैं और स्त्री के यौन विकास के लिए कार्य करते है।
- अण्डाशय से अण्डाणु मुक्त होना अण्डोत्सर्ग कहलाता है।

6.4.3 रजोदर्शन (Menarche)

बलिका में (11-14 वर्ष) पहली बार जननांगो से होने वाले रक्त स्राव को प्रथम रजोदर्शन कहते हैं।

मासिक धर्म कैसे होता है?

1. गर्भाशय की भीतरी परत को एन्डोमिट्रीयम कहा जाता है। इसमे छोटी-छोटी रक्त वाहिनियां होती है और यह परत नरम होती है। यह परत मासिक- धर्म के आने और भ्रूण के मे बहुत महत्वपूर्ण होती है।
2. अण्डाशय से एस्ट्रोजन नामक हॉरमोन बनता है, जिसके प्रभाव से गर्भाशय की भीतरी परत का विकास होता है। एस्ट्रोजन के असर से अण्डाशय में कई कच्चे अण्डों का विकास शुरू हो जाता है, पर हर महीने उनमें से केवल एक ही अण्डा पूरी तरह पकता है।
3. माहवारी के लगभग 14वे दिन पर यह पका हुआ अण्डा अण्डाशय से निकलता है और डिम्बनलियों द्वारा गर्भाशय की ओर जाना शुरू करता है।
4. अण्डाशय से अण्डा निकलने के बाद अण्डाशय से प्रोजेस्टेरोन नामक हॉरमोन बनना शुरू हो जाता है। प्रोजेस्टेरोन गर्भाशय की भीतरी परत को भ्रूण के विकास के लिए और तैयार करता है। इन दोनो स्त्री हॉरमोनों का मस्तिष्क द्वारा नियंत्रण होता है।
5. सामान्य रूप से अण्डा फलित नही होता है और लगभग 24 घटे मे नष्ट हो जाता है। ऐसे मे अण्डाशय द्वारा एस्ट्रोजन व प्रोजेस्टेरोन बनना कम होता जाता है और लगभग 14 दिन में पूरी तरह बन्द हो जाता है। इन हॉरमोनों की कमी से गर्भाशय की भीतरी परत टूट जाती है और गिर कर मासिक धर्म के रूप में योनि से बाहर आ जाती है। ऐसे में जल्द ही अण्डाशय में नये अण्डे का विकास शुरू हो जाता है और गर्भाशय में एक नयी परत भी बननी शुरू हो जाती हैं एवं यह चक्र दुबारा से चलता है।
6. यदि पका हुआ अण्डा डिम्बनली में शुक्राणु से मिलकर फलित हो जाता है तो यह गर्भाशय में जाकर इसकी भीतरी परत में आश्रय लेता है और था के रूप मे विकसित होने लगता है। ऐसे मे एस्ट्रोजन व प्र्जेस्टेरोन बनते रहते हैं और गर्भाशय की भीतरी परत गिरती नहीं है। इसलिए गर्भावस्था मे मासिक धर्म नहीं होता है।

6.4.4 मासिक चक्र (Menstrual Cycle)

बालिका के शारीरिक परिवर्तन मे माहवारी होना महत्वपूर्ण है। यह जननांगों के परिपक्व होने का लक्षण है। परन्तु जनन क्रिया के लिए परिपक्वता 18 वर्ष की आयु के बाद ही आती हैं। माहवारी स्वभाविक प्रक्रिया हे जो 11-14 वर्ष की आयु के बीच प्रारम्भ होती है। (नोट :- COA-iv की इकाई 1 भी संदर्भित करे)

- माहवारी में मादा जननांगों से रक्त स्राव होता है।

- इस अवधि में रक्त साथ की मात्रा अलग-अलग हो सकती है। माहवारी की सामान्य अवधि 3-5 दिन होतो है।
- एक माहवारी के रक्त स्राव के पहले दिन से दूसरी माहवारी तक के समय को मासिक चक्र कहते हैं। यह सामान्यत: 28 दिन का होता है।
- माहवारी 45-50 वर्ष की आयु के मध्य अनियमित हो जाती है तथा बाद मे पूर्ण रूप से बन्द हो जाती है। इस अवस्था को रजोनिवृति (Menopause) कहते 'है।

माहवारी से पूर्व के लक्षण

- प्राय पेट मे दर्द होना।
- थकान का अनुभव होना।
- मानसिक तनाव रेहना।
- शरीर का तापमान बढ जाना।
- भूख बढ जाना।
- पेट के निचले भाग मे ऐंठन।

माहवारी के समय स्वच्छता एवं सावधानी

- प्रतिदिन स्नान करना।
- साबुन व पानी से जननांगों की स्वच्छता रखना।
- स्वच्छ कपड़ा / नेपकिन का प्रयोग करना।
- सम्भावित तिथि का ध्यान रखना। (नोट :- COA-ii की इकाई-2 भी संदर्भित करें)

6.4.5 गुणसूत्र

मानव मे सामान्तः 46 गुणसूत्र होते हैं। जिनमें 44 साधारण गुणसूत्र तथा 2 लिंग गुणसूत्र होते हैं, बच्चा माता और पिता प्रत्येक से 23 क्रोमोजोम ग्रहण करता है। इनमें 22 जोड़े ओटोसोम तथा एक जोड़ी लिंग क्रोमोजोम होते हैं। बच्चे का लिंग निर्धारण पिता से प्राप्त होने वाले सेक्स क्रोमोजोम पर निर्भर होता है। लिंग अथवा सेक्स क्रोमोजोम शुक्राणु में ही होता है ये दो प्रकार के होते है - x तथा y। बच्चे का लिंग निर्धारण वास्तव मे पिता से प्राप्त सेक्स क्रोमोजोम शुक्राणु पर निर्भर रहता है क्योकि y क्रोमोजोम शुक्राणु मे ही होता है, डिम्ब मे नहीं डिम्ब के 23 क्रोमोजोमों में से 22 ओटोजोम तथा एक x क्रोमोजोम होता है।

उपर्युक्त से स्पष्ट है कि 44 जमा XX के मिलने से स्त्री लिंग का निर्धारण होता है। इन दो सैक्स क्रोमोजोमों में से एक पिता तथा एक मा से प्राप्त होता है। इसी प्रकार 44 जमा XY (मा से X तथा पिता से Y) के मिलने से पुरूष लिंग का निर्धारण होता है।

प्रजनन प्रक्रिया

प्रजनन वृषण तथा अण्डाशय की क्रिया के फलस्वरूप होता है जिनसे क्रमश: शुक्राणु तथा अण्डे की उत्पत्ति होती है। जब स्त्री तथा पुरूष सम्भोग करते हैं तो इस क्रिया में नर का शिश्न लम्बा होकर स्त्री की योनि में प्रवेश करता है। मैथुन समाप्त होने पर शिश्न के शिखर पर स्थित मूत्रोजनन छिद्र से वीर्य निकलकर स्त्री की योनि में चला जाता है। फिर शिश्न छोटा एवं शिथिल हो जाता है तथा स्त्री व पुरूष पृथक हो जाते हैं।

- मैथुन में वीर्यपात या स्खलन होते ही गर्भाशय में तरंग गति उत्पन्न होती है । इससे वीर्य योनि से खिचकर गर्भाशय मे चला जाता है । यहां से शुक्राणु धीरे-धीरे फैलोपिअन नलिकाओं में चढने लगते हैं।
- अण्डोत्सर्ग के कारण अण्डे फैलोपिअन ट्यूब मे पहुँचते हैं।
- अण्डे से कई शुक्राणु चिपक जाते हैं परन्तु इनमे से एक शुक्राणु ही अण्डे के अन्दर प्रवेश करता है।
- अण्डे में प्रविष्ट शुक्राणु का केन्द्रक एवं अण्डे का केन्द्रक मिलकर युग्मक या जाइगोट केन्द्रक बनाता है। इस क्रिया को निषेचन कहते हैं।
- किसी अण्डे का निषेचन हो जाने पर अण्डाशय से प्रोजेस्टेरॉन हार्मोन स्रावित होने लगता है गर्भाशय की रूधिर वाहिनियों मे अधिकाधिक रक्त आने लगता है तथा भ्रूण प्लेसेन्टा द्वारा गर्भाशय की दीवार से जुड जाता है। इसे गर्भधारण कहते है।
- इस प्रकार गर्भाशय मै भ्रूण का विकास होता है। लगभग 9 महीने में पूर्ण शिशु बनकर मादा की योनि से होता हुआ बाहर निकलता है। इसे शिशु का जनन कहते हैं।

6.4.6 भ्रूण विज्ञान (Embryology)

विज्ञान की वह शाखा जिसके अन्तर्गत भ्रूण के विकास की विभिन्न अवस्थाओं का अध्ययन किया जाता है आ विज्ञान कहलाती है। भ्रूण विज्ञान (Embryology) के अन्तर्गत गर्भाधान से लेकर शिशु के जन्म तक की सभी अवस्थायें आती हैं। गर्भावस्था 40 सप्ताह या 280 दिन या लगभग 9 माह 7 दिन की होती है।

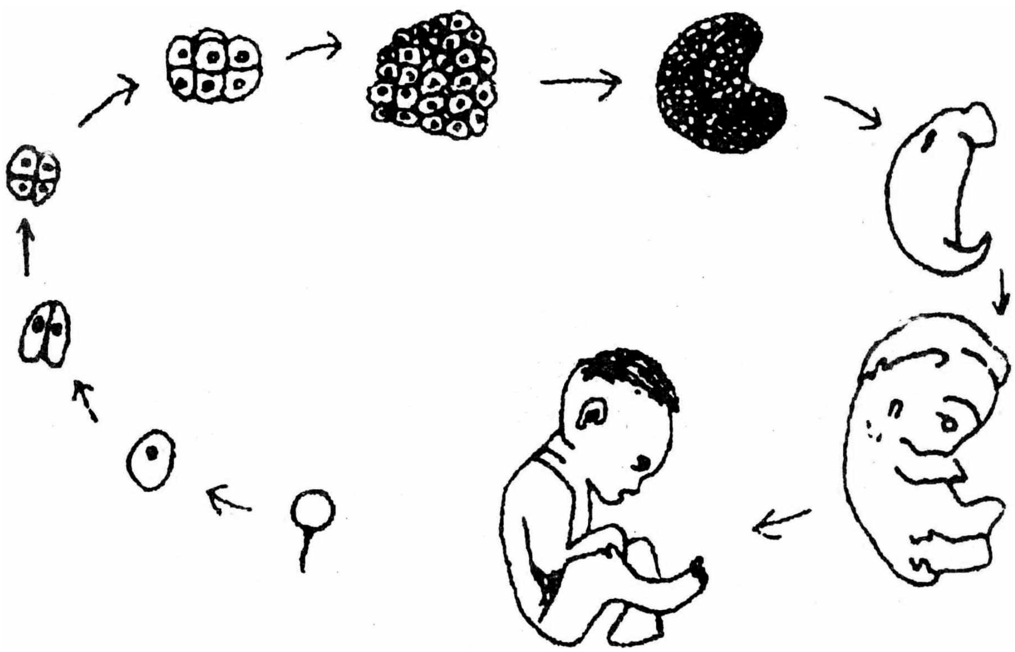

चित्र : भ्रूण का विकास

- **गर्भाधान (Conception)**

गर्भाधान स्त्री के अण्डाणु तथा पुरूष के शुक्राणु के संयोग से होता है। प्रजनन तंत्र में हम पढ चुके हैं कि स्त्री के अंडाशय मे अण्डाणु तथा पुरूष के वृषण में शुक्राणु का निर्माण होता है। प्रत्येक संभोग या मैथुन के समय लाखों शुक्राणु स्त्री की योनि के भीतर प्रविष्ट कर जाते हैं। इनमें से कुछ शक्तिशाली शुक्राणु गर्भाशय से होकर अण्डवाहिनी नलिका मे प्रवेश कर जाते है। नलिका में यदि पहले से ही परिपक्व अण्डाणु उपस्थित हो तो शुक्राणु उसे विभेदित कर देता है और यह क्रिया निषेचन कहलाती है। यही से नए जीव के आगमन का शुभारम्भ होता है।

निषेचित अण्डे को जाइगोट कहते हैं। निषेचित अण्डाणु अंडवाहिनी नलिका द्वारा गर्भाशय में पहुँचता है। इस क्रिया में लगभग 5-7 दिन का समय लगता है। गर्भाशय मे पहुंचने के बाद निषेचित अण्ड गर्भाशय के भीतर अन्तःस्थापित हो जाता है। गर्भाशय के भीतर निषेचित अण्डे की स्थापना को ही ' गर्भाधान' ' गर्भ रोपन या गर्भ ठहरना कहते हैं।

- **निषेचित अंडाणु का आरोपण एवं वृद्धि (Implantation and Growth of Fertilized ovum)**

निषेचित अंडाणु में कोशिका विभाजन की निषेचन के 24 घटे के अंदर प्रारम्भ हो जाती है। कोशिका विभाजन की क्रिया के द्वारा जाइगोट मे वृद्धि होती है। क्योंकि विभाजन के द्वारा 1 से 2,2 से 4,4 से 8,8 से 16,16 से 32 से 64 तथा इसी क्रम मे निरन्तर कोशिकाऐं विभाजित होती रहती है तथा शिशु शरीर का निर्माण करती हैं।

कुछ समय बाद ये कोशिकाएं अलग-अलग भागों में बंट जाती हैं तथा अलग-अलग भागों से विभिन्न अंगों जैसे:,- फेफड़े, त्वचा. हृदय, वृक्क, मस्तिष्क, हाथ पैर आदि का निर्माण करती हैं। कोशिका विभाजन से कोशिकाओं की संख्या में वृद्धि होती है। कोशिकाओं के इस समूह को भ्रूण कहते है। विकास के क्रम में भ्रूण के बाहर की कोशिकाएं अन्दर की कोशिकाओं से अलग हो जाती हैं। इस तरह इसमें दो पर्तों का निर्माण हो जाता है. बाहरी परत को कोरियॉन तथा भीतरी परत को एम्नीयॉन कहते हैं।

गर्भाशय की दीवार में जिस स्थान पर जाइगोट आरोपित होता है वहां दीवार का पृष्ठ भाग अपरा के रूप में विकसित होता है। अपरा के निर्माण में गर्भाशय के भीतरी भाग एवं जाइगोट की बाह्य परत कोरियॉन भाग लेते हैं। इस प्रकार अपरा का निर्माण माता एवं शिशु दोनों के शरीर से होता है

6.5 सारांश

इस प्रकार वर्णित इकाई के माध्यम से प्रसूति विज्ञान सहायिका यह जान सकती है कि सजीवों द्वारा अपने समान जीव उत्पन्न करने की प्रक्रिया प्रजनन कहलाती है। प्रत्येक जीव में प्रजनन के लिए विशेष प्रजनन अंग होते हैं। पुरूष तथा स्त्री के प्रजनन अंग पृथक-पृथक होते हैं। पुरूष प्रजनन अंग में वृषण, अधिवृषण, शुक्रवाहिनी, शुक्राशय, प्रोस्टेट ग्रन्थि शिश्न आदि होते हैं। जबकि स्त्री प्रजनन अगों को दो भागों में बांटा गया है। बाह्य प्रजनन अंग एवं आन्तरिक प्रजनन अंग। बाह्य अंगो में भग्नाशय भगस्थि मोन्स प्यूबीस, लेबिया मैजोरा एवं माइनर योनि

लिंग तथा पेरिनियम आदि आते है। स्त्री के आन्तरिक प्रजनन अंग मुख्य रूप से योनि, गर्भाशय, डिम्बनलिया अण्डाशय आदि होते है।

इस इकाई मे हमने यह भी वर्णित किया है कि बालिका में रजोदर्शन 11 से 14 वर्ष के बीच होता है जो मादा जनन अगो के परिपक्व होने का लक्षण होता है। बालिका के शारीरिक परिवर्तन में माहवारी होना महत्वपूर्ण है। माहवारी के दौरान मादा जनन अंगों में रक्त स्राव होता है। जिसकी अवधि 3-5 दिन तक होती है। एक माहवारी के रक्त स्राव के पहले दिन से दूसरे माहवारी तक के समय को मासिक चक्र कहते है। 45-50 वर्ष के मध्य महिलाओं में माहवारी बन्द हो जाती है, इसको रजोनिवृति कहते है।

इसी प्रकार हमने यह भी जाना कि मानव कोशिका में 46 गुणसूत्र होते हैं। और लिंग निर्धारण मे इनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। विज्ञान की वह शाखा जिसके अन्तर्गत भ्रूण के विकास की विभिन्न अवस्थाओं का अध्ययन किया जाता है. भ्रूण विज्ञान कहलाती है। इस इकाई के द्वारा प्रसूति विज्ञान सहायिका को 'प्रजनन' की जटिल प्रक्रिया की जानकारी हेतु तैयार करना हमारा अभीष्ट है।

6.8 प्रश्न

1. प्रजनन क्या है?
2. पुरूष प्रजनन अंगों के नाम लिखिए।
3. वृषण के कार्य बताइये।
4. महिला के आन्तरिक प्रजनन अगों के नाम बताइए।
5. गर्भाशय के कार्य बताइये।
6. रजोदर्शन से क्या तात्पर्य है?
7. अंडाशय से स्त्रावित हार्मोन्स के नाम बताइये।
8. मानव कोशिका मे गुणसूत्रों की संख्या कुल कितनी होती है?
9. भ्रूण विज्ञान क्या है?